

વાલ્મીકિ ત્રિપાઠી

जहाँदारशाह

(मुगलकालीन ऐतिहासिक उपन्यास)

आमुख

प्रायः प्रश्न पूछा जाता है कि ऐतिहासिक उपन्यास में उन घटनाओं की संख्या अपेक्षाकृत अधिक होती है जिनका इतिहास के ग्रन्थों में उल्लेख नहीं मिलता। प्रश्न स्वाभाविक है और विचारणीय भी। इस सम्बन्ध में मेरा निवेदन है कि ऐतिहासिक घटनायें कम विवादास्पद नहीं होतीं। समकालीन ग्रन्थों में एक ही घटना के विभिन्न विवरण उपलब्ध होते हैं जो ऐतिहासिक होते हुए भी अक्षरशः विश्वसनीय नहीं बन पाते। बस, उपन्यास उन्हीं विवरणों में निहित सत्य को उद्घाटित करता है। इसीलिए इतिहास की सीता और शकुन्तला से रामायण की सीता तथा अभिज्ञान शाकुन्तलम् की शकुन्तला अधिक विश्वसनीय बन गई हैं।

प्रस्तुत कृति मुगलकालीन ऐतिहासिक घटनाओं पर आधारित है। इसका प्रमुख नायक जहाँदारशाह है जो ऐतिहासिक दृष्टि से विशेष महत्व नहीं रखता, किन्तु उपन्यास की दृष्टि से उसके जीवन की घटनाएँ इतनी रोचक हैं कि औपन्यासिक सृष्टि का लोभ संवरण नहीं हो सका।

यह 'जहाँदारशाह' का द्वितीय संस्करण है। प्रथम संस्करण का पाठकों ने हृदय से स्वागत किया, फलतः दो वर्षों के अन्दर ही यह समाप्त हो गया। पाठकों की निरंतर मांग से बाध्य होकर

आमुख

प्रायः प्रश्न पूछा जाता है कि ऐतिहासिक उपन्यास में उन घटनाओं की संख्या अपेक्षाकृत अधिक होती है जिनका इतिहास के ग्रन्थों में उल्लेख नहीं मिलता। प्रश्न स्वाभाविक है और विचारणीय भी। इस सम्बन्ध में मेरा निवेदन है कि ऐतिहासिक घटनायें कम विवादास्पद नहीं होतीं। समकालीन ग्रन्थों में एक ही घटना के विभिन्न विवरण उपलब्ध होते हैं जो ऐतिहासिक होते हुए भी अक्षरशः विश्वसनीय नहीं बन पाते। बस, उपन्यास उन्हीं विवरणों में निहित सत्य को उद्घाटित करता है। इसीलिए इतिहास की सीता और शकुन्तला से रामायण की सीता तथा अभिज्ञान शाकुन्तलम् की शकुन्तला अधिक विश्वसनीय बन गई हैं।

प्रस्तुत कृति मुगलकालीन ऐतिहासिक घटनाओं पर आधारित है। इसका प्रमुख नायक जहाँदारशाह है जो ऐतिहासिक दृष्टि से विशेष महत्व नहीं रखता, किन्तु उपन्यास की दृष्टि से उसके जीवन की घटनाएँ इतनी रोचक हैं कि औपन्यासिक सृष्टि का लोभ संवरण नहीं हो सका।

यह 'जहाँदारशाह' का द्वितीय संस्करण है। प्रथम संस्करण का पाठकों ने हृदय से स्वागत किया, फलतः दो वर्षों के अन्दर ही वह समाप्त हो गया। पाठकों की निरंतर मांग से बाध्य होकर

यह नवीन संस्करण करना पड़ा। इस नवीन संस्करण में काफी परिवर्तन मिलेगा। कृति की मूल आत्मा तो प्रथम संस्करण की ही है, किन्तु भाषा, विचार तथा भावों की दृष्टि से इसमें यथेष्ठ अन्तर आ गया है जो औपन्यासिक आकर्षण को द्विगुणित ही करेगा।

विश्वास है, पाठकगण जहांदारशाह के पूर्व संस्करण की भांति इस नवीन संस्करण का भी स्वागत करेंगे।

वाल्मीकि त्रिपाठी

जहाँदारशाह

सुरा और सुन्दरी को जीवन का आदि और अन्त समझने वाले मुगल शाहजादा जहाँदारशाह को गावतकिए के सहारे अर्धशायित, नेत्र बन्द किए, मौन देख, सुप्रसिद्ध नृत्यांगना लालकुँअरि, शिष्टाचार की मुद्रा त्याग निकट आ खड़ी हुई, और दृष्टि शाहजादे की विचार-मग्न मुख-मुद्रा पर टिका दी। वह कुछ क्षणों तक शाहजादे को अपलक निहारती रहीं, पर मौन वातावरण शीघ्र ही असह्य हो उठा। उन्होंने एक कोने में रखे सितार के तारों को छेड़ दिया।

ध्वनि से शाहजादे की एकाग्रता भंग हुई। नेत्रोन्मीलन हुआ। समक्ष लालकुँअरि को खड़ी देख शाहजादे के मुँह से सहसा निकला, "ओह! तुम आ गईं?" शाहजादे ने स्वर के साथ ही उठने का उपक्रम किया।

"उठने की जहमत न करें, मेरे सरकार! आराम से लेटे रहिए।" त्वरित गति से, निकट जा, हाथ से वर्जित करते हुए लालकुँअरि ने जिज्ञासा व्यक्त की, "आज हुजूर कुछ खास संजीदा नजर आ रहे हैं। गुस्ताखी माफ हो, क्या वजह दरियाफ्त करने की जुरअत कर सकती हूं?"

गम्भीरता को अस्वाभाविक मुस्कान में परिणत कर शाहजादे ने कहा, "यों नहीं, मगर, कोई खास बात नहीं है। तनहाई थी। कुछ खयालात ने घेरा। तुम तो जानती ही हो कि तनहा इनसान के सबसे नजदीक उसके खयालात ही होते हैं। उन्हीं में उलझ गया।"

"मगर, हुजूर ने भी खयालात में खोए रहने का ऐसा क्या रोग पाल लिया है कि ………।"

"तुम्हारे कमरे में दाखिल होने का भी अहसास न हो सका। क्या तुम्हें

आए हुए देर हुई ?"

"जी नहीं, अफसोस तो इस बात का है कि आज हुजूर को काफी इन्तजार करना पड़ा ।"

"किसका ?"

"कनीज़ का ।"

"वाह ! बेवक्त आने के लिए तो मुझे..........।"

"बस ! बस ! रहने भी दीजिए। समझ गई कि हुजूर कहने क्या जा रहे हैं !"

"क्या कहने जा रहा हूं ?"

"यही कि बेवक्त आने के लिए..........।"

"माफी चाहता हूं ।" जहांदारशाह बीच में ही बोल उठे, "यही न ?" शाहजादे की दृष्टि लालकुंअरि के आरक्त मुख-मण्डल पर जा टिकी थी ।

"हुजूर ने तो कनीज की ज़बान ही बन्द कर दी है ।"

सम्हल कर बैठते हुए शाहजादे ने जिज्ञासा व्यक्त की, "अच्छा, जरा सुनूं तो तुम क्या कहना चाहती थीं ?"

"हुजूर ने कनीज के गरीबखाने तक तशरीफ लाने की जहमत फरमाई है। माफी मुझे मांगनी चाहिए थी ।"

"क्या माफी मांगने का सबब जान सकता हूं ?"

"हुजूर को क़नीज के इन्तजार में अपना बेशक़ीमत वक्त ज़ाया करना पड़ा ।"

उन्मुक्त हास्य बिखेरते हुए शाहजादे ने कहा, "बहुत खूब-बहुत खूब ! तुम इसे वक्त जाया करना कहती हो । अरे, इन्तजार में कितना लुत्फ होता है यह तो तुम उस वक्त महसूस करतीं जब तुमने भी किसी का इन्तजार किया होता ।"

"तो क्या हुजूर का खयाल है कि कनीज ने कभी किसी का इन्तजार किया ही नहीं ?"

"तुम और इन्तजार ! नामुमकिन।"

"क्यों, क्या मैं इनसान नहीं, या मेरे सीने में इनसान का दिल नहीं जो किसी का इन्तजार न कर सके ?"

"फिर, वह खुशनसीब कौन है जिसने तुमसे भी इन्तजार कराया है ?" चरम औत्सुक्य-भाव शाहजादे की मुद्रा पर उभर आया था।

लालकुँअरि ने सिर उठा कर बड़े-बड़े नेत्रों को शाहजादे के मुखमण्डल पर टिका दिया। फिर नतशिर हो दीर्घ निःश्वास छोड़ते हुए मन्द स्वर में कहा, "जो इस कनीज़ का इन्तजार करने का दम भरते हैं।"

"पर, तुम्हारा इन्तजार करने वाले तो इस शहर मे हजारों हैं। और मेरा तो ख्याल है कि हर दिल वाला तुम्हारा इन्तजार करने का दम भरता होगा।"

"हाँ, मगर उन सबो में बनावट की बू आती है।"

"फिर तुम्हे असलियत किसमें नजर आई ?"

"आप मे, मेरे सरताज आप मे। मेरी जिन्दगी में आने वाले आप पहले और आखरी फिरिश्ता हैं जिसकी याद हर सांस में समाई हुई है।" लाल-कुँअरि आनन्दसागर मे निमग्न हो बोल रही थी।

"सच !" शाहजादे की प्रसन्नता का वारापार न रहा, "तब तो मैं वाकई खुशनसीब हूं।"

"और कनीज जैसा भी खुशकिस्मत दूसरा न होगा।"

"क्यों ?" शाहजादा बीच में ही पूछ बैठे।

"हुजूर की नजरें इनायत जो हासिल है। मगर अन्देशा भी कम नही है।"

"किस बात का ?"

"यही कि कहीं हुजूर की निगाहे करम बदल न जाय।"

"नहीं, लाल, कभी नहीं।" लालकुँअरि को बाहों मे भर कर शाहजादे ने जैसे हृदय ही खोल कर रख दिया, "यह मेरे लिए नामुमकिन है। मगर मैं सल्तनते मुगलिया का एक शाहजादा हूं। शाहजादों की तकदीर को बनते

बिगड़ते देर नहीं लगती। किसी भी लमहा मैं तुम्हें एक मामूली आदमी नजर आ सकता हूं। क्या उस वक्त भी तुम्हारे दिल में मेरे लिए यही मकाम रहेगा?"

"कनीज़ ने हुजूर के दिल से मुहब्बत की है। और अगर हुजूर ने भी इस कनीज़ से ही मुहब्बत की है तो दुनियां की हर चीज तबदील हो सकती है, मगर हम दोनों की मुहब्बत में फर्क आना नामुमकिन है।"

"तुम्हारे इस यकीने आला का मैं तहेदिल से शुक्रगुजार हूं।" सामने रखे हुए मदिरापात्र की ओर हाथ से संकेत कर शाहजादे ने सगर्व कहा, "और इस शराब की सौगन्ध खाकर मैं भी कह सकता हूं कि ....।"

"ठहरिए-ठहरिए।" शाहजादे के भुजपाश से मुक्त होकर मदिरा से पात्र को भरते हुए लालकुंअरि क्षमायाचना के स्वर में बोलीं, "गुस्ताखी हुई, हुजूर। कनीज़ माफी चाहती है। लगता है जैसे आज मैं अपने काबू में नहीं हूं। होशोहवास ही खो बैठी हूं।"

मदिरापूरित-पात्र रिक्त कर आगे बढ़ाते हुए शाहजादे ने कहा, "कोई बात नहीं लाल आज, हम दोनों ही बेखुदी की हालत में हैं। हम दोनों एक दूसरे के हो चुके हैं। ऐसी हालत में किसी तीसरी चीज का याद रहना मुमकिन भी नहीं, और फिर उसको जो सिर्फ पिलाना जानता हो, पीना नहीं।" मदिरा-पात्र लालकुंअरि के ओठों के निकट ले जाते हुए शाहजादे ने आग्रह किया, "पर, आज तुम्हें इस खुशी के मौके पर मेरे हाथ से जरूर पीनी होगी।"

"इससे बढ़कर कनीज़ की खुशकिस्मती और क्या हो सकती है, लेकिन मेरी इल्तजा है कि सरकार, कनीज़ को मजबूर न करें, वैसे ही हुजूर ने वह शराब पिला रखी है जिसका नशा जिन्दगी भर दिलोदिमाग पर छाया रहेगा।"

"अगर, तुम्हारा दिल नहीं चाहता तो रहने दो।" पात्र रिक्त कर आगे बढ़ाते हुए शाहजादे ने कहा, "मैं तुम्हें मजबूर भी नहीं करूंगा। यह कोई अच्छी चीज है भी नहीं।"

"फिर, हुजूर ने क्यों अपने को इसके वश में कर रखा है ?"

"इसके नहीं, अपने वश में कहो बेगम। इसका दामन तो सिर्फ इसलिए पकड़ रखा है कि कुछ लमहों के लिए हम दोनोंदुनियाँ से बेखबर होकर सुकून की जिन्दगी गुजार सकूँ।"

"इस अजीम सल्तनत के हुक्मराँ को किस चीज की फिक्र। तमाम जहान की नियामतें तो हुजूर के कदमों पर हमेशा निसार हुआ करती होंगी।"

"ठीक कहती हो। आम रियाया का अकीदा यही होना चाहिए। मगर किसी को क्या खबर कि जब सारी दुनियाँ चैन-व सुकून की नींद सोती है तो हम जैसे शाहजादों की रात किस बेचैनी से गुजरती है। और फिर, कौन रात कितनी संगीन होती है, उफ !" हाथ में रिक्त पात्र को हिलाते हुए, "जल्दी भरो।"

"तीन पात्र लगातार भरने के उपरान्त लालकुँअरि ने ससंकोच कहा, "अगर, कनीज से कोई गुस्ताखी हो गई हो तो माफी की तलबगार हूं।"

"नही लाल, इस दुनियाँ में हर शख्स के मसाएल जुदा-जुदा हैं। कोई किसी के हल करने मे उलझा है तो कोई किसी में मसरूफ है। हर शख्स न तो दूसरे के मसाएल को समझने का माद्दा रखता है और न दिलचस्पी ही। और ठीक भी है, किसी से ऐसी उम्मीद करना कि वह गैर के मसाएल को उतनी ही अहमियत देगा जितनी ....।"

बीच में ही लालकुँअरि बोल पड़ी, "मगर, इस दुनियाँ में कुछ लोग ऐसे भी होते हैं जिन्हें समझा तो गैर जाता है, मगर वे गैर समझने वाले के मसाएल को उससे भी ज्यादा अहमियत ......।"

"ओह ! मैं भी क्या गलती कर बैठा। तुम्हें अपने से अलग थोड़े ही समझता हूं, लाल।" लालकुँअरि के अश्रुपूरित नेत्रों को लक्ष्य कर शाहजादे ने स्थिति सम्हालने की चेष्टा की, "मैं तो सिर्फ अपने जाती मसाएल से इसलिए वाकिफ नहीं कराना चहता हू कि क्यों बिलावजह तुम्हें भी उसी उलझन में ....।" उठकर जाती हुई लालकुँअरि को पकड़ अपनी ओर खींचते

ाहजादे ने आगे कहा, "अरे ! इतना बुरा मान गई ?"

"बुरा मानने वाली मैं होती ही कौन हूं ?"

"क्यों, क्या तुम मेरी नहीं हो ? तुम्हारा मुझ पर कोई हक़ नहीं ?"
ालकुंअरि को भुजाओं में और अधिक कसते हुए शाहजादे ने पूछा ।

लालकुंअरि ने न तो कुछ मुंह से कहा और न दृष्टि उठाकर शाहजादे
के चेहरे की ओर देखा ही ।

"बोलो, जवाब दो न ।"

लालकुंअरि का स्वर फिर भी न फूटा ।

"तुम भी अगर रूठ जाओगी तो फिर यह जिन्दगी किसके लिए ?"

"ऐसा न कहें, मेरे आका ।" लालकुंअरि ने अपनी हथेली शाहजादे के होंठों पर रख कर कहा, "मेरे सरताज की जिन्दगी पर लाखों जिन्दगियां कुर्बान हैं ।"

"मुमकिन है, तुम्हारा कहना दुरुस्त हो, मगर, मुझे तो सिर्फ एक जिन्दगी दरकार है और वह भी तुम्हारी; क्योंकि तुम्हारी जिन्दगी को मैं अपनी ही समझता हूं ।"

"मेरे आका ! मेरे सरताज !! इस ज़र्रे को आफताब न बनाएँ करती हूं, कहीं मैं खुशी से पागल न हो जाऊं ।" लालकुंअरि के अश्रुपूरित ने प्रसन्नता ने मुस्करा उठे थे ।

"बस, इन झीलों की गहराइयों में डूबने में जो सुकून मिलता वह ...... ।" द्वार पर ठक्-ठक् की ध्वनि ने शाहजादे के वाक्य को पूर्ण न दिया ।

"कौन ? खुर्शीद !"

"जी, ज़िल्लेसुब्हानी । कोई 'अहमद' नाम का घुड़सवार अन्द की ज़िद् कर रहा है ....।"

"अहमद !" नाम सुनते ही शाहजादे का सहसा स्वर फूटा ही वह उठ पड़े हुए । उन्हें रोकते हुए लालकुंअरि ने कहा, "यह

देती हूं।" द्वार की ओर मुँह कर लालकुँअरि ने आदेश व्यक्त किया, "उसे यहीं ले आओ।" शाहजादे के मुख-मण्डल के सहसा परिवर्तित भाव को लक्ष्य कर लालकुँअरि ने जिज्ञासा व्यक्त की, "यह अहमद कौन है ?"

"एक वफादार खिदमतगार।"

"फिर तो, आपको इतना परेशान होने की जरूरत नहीं।"

"न मालूम क्या खबर लाया हो।"

"खबर ! कैसी खबर ? क्या उसके जरिए किसी खास खबर के लाये जाने की उम्मीद है ?"

"हाँ बेगम।" द्वार की पुनः खट्-खट् ने शाहजादे की मुख-मुद्रा पर चरम औत्सुक्य-भाव उभार दिया था। उनका अनियन्त्रित कण्ठस्वर सहसा फूटा, "अहमद आ गया।"

"अन्दर आने दो।" लालकुँअरि की अनुमति व्यक्त होते ही द्वार खुला और सशस्त्र अहमद ने प्रवेश कर, शिष्टाचार का पालन किया।

उसे देखते ही शाहजादे का औत्सुक्य रोके न रुका, "अब्बा हुजूर की तबियत कैसी है ?"

"हालत नाजुक है हुजूर, किसी लमहा कुछ भी हो सकता है। हकीमों ने जवाब दे दिया है। ऐसे अहम मौके पर हुजूर का वहाँ होना निहायत जरूरी है।"

"चलो।" उठते हुए शाहजादे ने लालकुँअरि से दृष्टि मिला कर कहा, "अच्छा, यदि सही सलामत रहा तो जल्दी ही मिलूँगा।"

"ठहरिए !" हाथ द्वारा मार्ग रोक लालकुँअरि ने पूछा, "बादशाह सलामत की तबियत इतनी नासाज है, और आपने जिक्र तक नहीं किया ?"

"जिस खबर से शहर का बच्चा-बच्चा वाकिफ हो, उससे तुम्हारा बेखबर होना ताज्जुब की बात है।"

"आपके लिए यह ताज्जुब की बात हो सकती है, पर, मेरे लिए नहीं, क्योंकि, यहाँ आने वाले ऐसी खबरें कभी नहीं लाते, बल्कि ऐसी ख

पैदा होने वाली संजीदगी को दूर करने आते हैं। खैर, इस वक्त मैं आपका ज्यादा वक्त जाया नहीं करना चाहूंगी, पर, इतनी अर्ज जरूर करना चाहती हूं कि हमेशा कनीज़ को अपने हर मसले में शरीक समझें और यह यकीन भी दिलाना अपना फर्ज समझती हूं कि जिस काबिल हुजूर इस जर्रे को समझें, खिदमत का मौका जरूर दें।"

"ज़रूर-ज़रूर। इतने दिनों में तुम्हारे अलावा और किसको अपना बनाया है। जिस हालत में भी मुमकिन होगा, यहीं तो आना है।"

"ज़हेनसीब।" सिर झुका लालकुंअरि ने सम्मान-भाव व्यक्त किया।

अहमद को साथ लेकर शाहजादा लम्बे डग भरते हुए हवेली से बाहर हो गए।



लाहौर नगर का विशाल प्राङ्गण। सर्वत्र नीरवता। रह-रह कर वायु सिहर उठती जिससे वृक्षों के पत्ते कांपने लगते। उनकी मरमर ध्वनि प्रशान्त वातावरण को करुणा से भर रही थी। विहगवृन्द, किसी भावी आशंका से चिहुंक उठते। शाही शिविर सबकी दृष्टि का केन्द्र-बिन्दु था, जिसके अन्दर भारत मुगल सम्राट बहादुरशाह मृत्यु-शैय्या पर लेटे अन्तिम सांसें ले रहे थे। लोहगढ़ के भयंकर युद्ध के परिणामस्वरूप लाहौर नगर तक आते-आते उनका स्वास्थ्य इस सीमा तक खराब हो गया था कि और आगे बढ़ना खतरे से खाली न समझा गया, परन्तु निरन्तर छै माह तक उपचार होने पर भी सम्राट के स्वास्थ्य में सुधार के चिह्न दृष्टिगोचर न हुए, बल्कि यहां तक नौबत आ पहुंची कि चिकित्सकों ने जवाब दे दिया। डेरे के अन्दर बीचों-बीच सम्राट

का स्वर्णखचित पलंग पड़ा था, जिस पर सम्राट का जीर्ण-शीर्ण, श्वेत वस्त्र से ढका, शरीर अडोल स्थिति में, निर्जीव-सा रखा हुआ था। केवल मुंह खुला था। रक्त की अंतिम बूंद तक निचोड़ा हुआ मुंह। उभरी हुई गाल और कनपटी की हड्डियाँ। झुर्रीयुक्त त्वचा। लम्बी नाक, जो दाँतों को व्यवधान स्वरूप पा ठुड्डी को स्पर्श की असफल चेष्टा कर रही थी। वक्ष पर पड़ी श्वेत दाढ़ी साँस के साथ ऊपर-नीचे हो रही थी। सर्वत्र स्तब्धता थी। पलंग के चारों ओर अमीर-उमरा, सामन्त, स्वजन, शुभचिंतक एवं परिवार के सदस्य उपस्थित थे। सम्राट की बहन बेगम जननुन्निसा पलंग की दाहिनी पाटी पर गाल रखे मौन बैठी थीं। वह अपलक भाई की ओर निहार रह थीं। एक क्षण के लिए भी उन्हें भ्रातृ-स्नेह वहाँ से टलने न दे रहा था। सम्राट का सबसे छोटा शाहजादा अजीमुश्शानशाह पलंग की बाईं ओर बैठा था। जीवन के प्रारम्भकाल से ही प्राणप्रण से सम्राट की सेवा करने वाले वजीर मुनीम खाँ सम्राट के पैरों के निकट निःशब्द खड़े थे। सब चित्रलिखित से यथास्थान उपस्थित थे। बाहर से निकट आती पग-ध्वनि ने सबका ध्यान आकृष्ट किया। सबकी आँखें द्वार की ओर उठ गईं। शाहजादे जहाँदारशाह ने प्रवेश किया। कुछ आँखें उन्हें अपना केन्द्र-बिन्दु बनाए रहीं, जब तक वह पलंग के निकट दाहिनी ओर आकर बैठ नहीं गए। न तो उन्होंने किसी से कुछ पूछा और न किसी ने उनसे कुछ जानने की आवश्यकता ही अनुभव की। बैठने के पश्चात उन्होंने एक बार चारों ओर दृष्टि घुमाई। दृष्टि घूमती हुई अजीमुश्शानशाह के चेहरे पर जा टिकी। दोनों की दृष्टियाँ परस्पर टकराईं। और दूसरे ही क्षण पूर्ववत् स्थिति में हो गईं। फिर भी, अधिक देर तक दोनों शाहजादे एक दूसरे को देखने का लोभ संवरण न कर सके। दोनों की दृष्टियाँ पुनः टकराईं और टकराते ही पृथक हो गईं। दोनों एक-दूसरे को अपनी ही ओर देखता अनुभव कर कनखियों से देखने की चेष्टा करने लगे जो मुनीम खाँ की अनुभवी आँखों से छिप न पा रहा था।

बेगम जननुन्निसा का भ्रातृ-स्नेह रह-रह कर उफान मार रहा था। वह अधिक देर तक मौन न रह पाती थीं। निकट उपस्थित हकीम कह

उठीं, "हकीम साहब ! एक वार तो और कोई दवा आजमाकर देखिए। शायद, आखिरी कोशिश में ही कुछ करिश्मा छिपा हो।"

"बेगम साहबा ! आपको कैसे यकीन दिलाऊं कि मैं उन सभी दवाओं की आजमाइश कर चुका हूं जो कभी बेअसर साबित नहीं हुई। आलमपनाह की हालत इनसान की ताकत से बाहर हो चुकी है। खुदा की दुआ के अलावा अब इनका कोई इलाज नहीं।"

मानवीय प्रयास की ओर से पूर्णतया निराश होकर बेगम साहबा ने सामने खड़े मुनीम खां को सम्बोधित कर कहा, "रियाया से कहिए कि अपने शहंशाह के लिए खुदा से रहमोकरम की भीख मांगें। कैदखानों के सभी कैदियों को रिहा कर दिया जाय ताकि वे भी अपने प्यारे शहंशाह के लिए खुदा से दुआ मांगें।"

बेगम की आज्ञा सुनते ही मुनीम खां आज्ञाकारी सेवक की भांति चुपचाप आदेश-प्रसारण-हेतु शिविर से बाहर निकल गए और उच्च स्वर से आदेश से जनता को अवगत करा दिया। जनता धीरे-धीरे वहां से सरकने लगी।

मन्दिरों में घण्टे घनघना उठे। घण्टियां टनटनाने लगीं। सस्वर सामूहिक प्रार्थनाएं ध्वनित हो उठीं। मस्जिदों में 'अल्लाहो अकबर' की ध्वनि से वातावरण भर गया। बहादुरशाह अत्यन्त संयमी सम्राट थे। उनके चरित्र की पवित्रता और धार्मिक सहिष्णुता ने जनता के हृदय में असीम श्रद्धा-भाव उत्पन्न कर रखा था। जिसके परिणामस्वरूप हिन्दू और मुसलमान सभी सच्चे हृदय से ईश्वर की सेवा में प्रार्थना कर रहे थे। परन्तु ईश्वरेच्छा सर्वोपरि है। उसके विधान के रहस्य को आज तक कौन समझ सका है। वह कब क्या करता है, जानना मानव-सामर्थ्य के परे है। हां, सच्चे हृदय की पुकार वह सुनता अवश्य है। कुछ ही क्षणों में नैराश्यजन्य उदासीनता आशा की किरण में परिवर्तित होती प्रतीत हुई। सम्राट की पलकों में कुछ हरकत हुई। पलक का विस्तार सिमटने लगा। दृष्टि आवरणहीन हो गई। कुछ क्षण पूर्व मुर्झाए चेहरे खिल उठे। नैनों से खुशी झांकने लगी। सम्राट की दृष्टि ने अपना कार्य

प्रारम्भ कर दिया। दृष्टि घूमती हुई प्रत्येक को पहचान रही थी। पर वाणी मौन थी। सम्भवत: नेत्रों ने वाणी की शक्ति छीन ली थी, पर उनकी भाषा समझना आसान न था। जो भी उनकी घूमती हुई दृष्टि का केन्द्र-बिन्दु बनता, वही अपने विषय में कुछ सुनने को समुत्सुक हो उठता, और उसके आगे वाले के हृदय की धड़कन इस आशा से बढ़ जाती कि सम्भव है सम्राट की दृष्टि में सबसे अधिक कृपा-पात्र वही सिद्ध हो। परन्तु, आशा-निराशा साथ-साथ चल रही थीं। प्रत्येक की बँधती आशा को निराशा में परिणत करती हुई सम्राट की दृष्टि अजीमुश्शानशाह पर जा टिकी। उस अपलक दृष्टि की भाषा प्रत्येक समझ रहा था। अजीमुश्शानशाह ही उनकी आशा का केन्द्र-बिन्दु सिद्ध हो रहा था। कुछ ही क्षणों में पलकों की सिमटन पुनः विस्तार पाने लगी और दृष्टि को शनै: शनैः सदा के लिए ढक दिया। सिर एक ओर लुढ़क गया। शिविर में कोहराम मच गया। बाहर खड़ी जनता कोहराम के रहस्य से अवगत हुई। हृदय की करुणा नेत्रों से बहने लगी। जनता ने अपने अश्रुकणों से सम्राट की आत्मा की शान्ति के लिए ईश्वर से प्रार्थना प्रारम्भ कर दी।

शिविर के अन्दर जहाँदारशाह और अजीमुश्शानशाह की मानसिक स्थिति वहाँ के परिव्याप्त वातावरण के सर्वथा प्रतिकूल थी। दोनों के मस्तिष्क उस अवसर विशेष से लाभ उठाने के लिए द्रुतगति से व्यायाम कर रहे थे। ऐसा अवसर शाहजादों के जीवन में दुबारा नहीं आता।

जहाँदारशाह ने चारों ओर अपनी दृष्टि घुमाई। सभी विरोधी दृष्टिगत हुए। अजीमुश्शानशाह पर दृष्टि पड़ते ही उनकी आत्मा काँप उठी। रत्न-जड़ित कटार अजीमुश्शानशाह के हाथ में म्यान से बाहर निकल आई थी। उस पर दृष्टि केन्द्रित करके वह सम्बोधित कर रहा था, "तो तू बाहर निकल ही आई। जरा भी सब्र नहीं हुआ। इतने उतावलेपन की क्या जरूरत थी। मैं जानता हूं कि तू कभी वक्त का इन्तजार नहीं करती। खैर जैसी तेरी मर्जी। अब तो तुझे रोकना नामुमकिन है। जब बाहर निकल ही आई है तो अपना

उठतीं, "हकीम साहब ! एक वार तो और कोई दवा आजमाकर देखिए। शायद, आखिरी कोशिश में ही कुछ करिश्मा छिपा हो।"

"बेगम साहबा ! आपको कैसे यकीन दिलाऊँ कि मैं उन सभी दवाओं की आज़माइश कर चुका हूं जो कभी बेअसर साबित नहीं हुईं। आलमपनाह की हालत इनसान की ताकत से बाहर हो चुकी है। खुदा की दुआ के अलावा अब इनका कोई इलाज नहीं।"

मानवीय प्रयास की ओर से पूर्णतया निराश होकर बेगम साहबा ने सामने खड़े मुनीम खाँ को सम्बोधित कर कहा, "रियाया से कहिए कि अपने शहंशाह के लिए खुदा से रहमोकरम की भीख मांगें। कैदखानों के सभी कैदियों को रिहा कर दिया जाय ताकि वे भी अपने प्यारे शहंशाह के लिए खुदा से दुआ माँगें।"

बेगम की आज्ञा सुनते ही मुनीम खाँ आज्ञाकारी सेवक की भाँति चुपचाप आदेश-प्रसारण-हेतु शिविर से बाहर निकल गए और उच्च स्वर से आदेश से जनता को अवगत करा दिया। जनता धीरे-धीरे वहाँ से सरकने लगी।

मन्दिरों में घण्टे घनघना उठे। घण्टियां टनटनाने लगीं। सस्वर सामूहिक प्रार्थनाएँ ध्वनित हो उठीं। मस्जिदों में 'अल्लाहो अकबर' की ध्वनि से वातावरण भर गया। बहादुरशाह अत्यन्त संयमी सम्राट थे। उनके चरित्र की पवित्रता और धार्मिक सहिष्णुता ने जनता के हृदय में असीम श्रद्धा-भाव उत्पन्न कर रखा था। जिसके परिणामस्वरूप हिन्दू और मुसलमान सभी सच्चे हृदय से ईश्वर की सेवा में प्रार्थना कर रहे थे। परन्तु ईश्वरेक्षा सर्वोपरि है। उसके विधान के रहस्य को आज तक कौन समझ सका है। वह कब क्या करता है, जानना मानव-सामर्थ्य के परे है। हां, सच्चे हृदय की पुकार वह सुनता अवश्य है। कुछ ही क्षणों में नैराश्यजन्य उदासीनता आशा की किरण में परिवर्तित होती प्रतीत हुई। सम्राट की पलकों में कुछ हरकत हुई। पलक का विस्तार सिमटने लगा। दृष्टि आवरणहीन हो गई। कुछ क्षण पूर्व मुर्झाए चेहरे खिल उठे। नेत्रों से खुशी झांकने लगी। सम्राट की दृष्टि ने अपना कार्य

प्रारम्भ कर दिया। दृष्टि घूमती हुई प्रत्येक को पहचान रही थी। पर वाणी मौन थी। सम्भवतः नेत्रों ने वाणी की शक्ति छीन ली थी, पर उनकी भाषा समझना आसान न था। जो भी उनकी घूमती हुई दृष्टि का केन्द्र-विन्दु बनता, वही अपने विषय में कुछ सुनने को समुत्सुक हो उठता, और उसके आगे वाले के हृदय की धड़कन इस आशा से बढ़ जाती कि सम्भव है सम्राट की दृष्टि में सबसे अधिक कृपा-पात्र वही सिद्ध हो। परन्तु, आशा-निराशा साथ-साथ चल रही थी। प्रत्येक की बँधती आशा को निराशा में परिणत करती हुई सम्राट की दृष्टि अजीमुश्शानशाह पर जा टिकी। उस अपलक दृष्टि की भाषा प्रत्येक समझ रहा था। अजीमुश्शानशाह ही उनकी आशा का केन्द्र-विन्दु सिद्ध हो रहा था। कुछ ही क्षणों में पलकों की सिमटन पुनः विस्तार पाने लगी और दृष्टि को शनैः शनैः सदा के लिए ढक दिया। सिर एक ओर लुढ़क गया। शिविर में कोहराम मच गया। बाहर खड़ी जनता कोहराम के रहस्य से अवगत हुई। हृदय की करुणा नेत्रों से बहने लगी। जनता ने अपने अश्रुकणों से सम्राट की आत्मा की शान्ति के लिए ईश्वर से प्रार्थना प्रारम्भ कर दी।

शिविर के अन्दर जहाँदारशाह और अजीमुश्शानशाह की मानसिक स्थिति वहाँ के परिव्याप्त वातावरण के सर्वथा प्रतिकूल थी। दोनों के मस्तिष्क उस अवसर विशेष से लाभ उठाने के लिए द्रुतगति से व्यायाम कर रहे थे। ऐसा अवसर शाहज़ादों के जीवन में दुबारा नहीं आता।

जहाँदारशाह ने चारों ओर अपनी दृष्टि घुमाई। सभी विरोधी दृष्टिगत हुए। अजीमुश्शानशाह पर दृष्टि पड़ते ही उनकी आत्मा काँप उठी। रत्न-जड़ित कटार अजीमुश्शानशाह के हाथ में म्यान से बाहर निकल आई थी। उस पर दृष्टि केन्द्रित करके वह सम्बोधित कर रहा था, "तो तू बाहर निकल ही आई। जरा भी सब्र नहीं हुआ। इतने उतावलेपन की क्या जरूरत थी। मैं जानता हूं कि तू कभी वक्त का इन्तजार नहीं करती। खैर जैसी तेरी मर्जी। अब तो तुझे रोकना नामुमकिन है। जब बाहर निकल ही आई है तो अपना

काम किए विना तो तू म्यान में जाने वाली नहीं। फिर, मैं ही क्यों तेरे रास्ते का रोड़ा बनूं। चल आज तू अपना वह कमाल दिखा जिसे बयान करते लोगों की जबान न थके। चल, बढ़ आगे। तेरे कमालेफन को देखने के लिए वक्त बेताब हो रहा है।"

मुखमुद्रा से जहांदारशाह भयभीत हो उठे थे। शरीर पसीने से तरबतर था। न चाहकर भी उनकी दृष्टि कटार पर ही टिकी थी। अजीमुश्शान का जगह से हिलना हुआ कि जहांदारशाह द्वार की ओर भागे। भागने में शिविर की रस्सी में उनका पैर उलझ गया। वह मुंह के बल गिरे। उनकी पगड़ी लुढ़कती हुई दूर जा गिरी। फिर भी, नंगे पांव उठ कर वह ऐसे भागे जैसे कोई दीर्घकालीन बन्धन-मुक्त पक्षी उड़ा चला जा रहा हो।

○

जहांदारशाह के शिविर से भागने के पश्चात् मुनीम खां ने शाहजादे अजीमुश्शानशाह के कंधों पर हाथ रख कर गद्‌गद् स्वर में कहा, "वाह! शाहजादेसाहब! आज तो आपने कमाल कर दिया। बिना कुछ किए ही रास्ता साफ हो गया।"

"इसमें कमाल की क्या बात खां साहब! कामयाबी का सेहरा तो आप के ही सिर पर बंधना चाहिए।" शाहजादे का स्वर कृतज्ञतापूर्ण था।

शिविर के दूसरे भाग की ओर कदम बढ़ाते हुए खां साहब बोले, "आइए। इसके लिए आपको अपने मरहूम अब्बा हुजूर का शुक्र गुजार होना चाहिए।"

"क्यों ?" साश्चर्य मुनीम खां की ओर देखते हुए शाहजादे ने पूर्ण आश्वस्त होना चाहा, "अब्बा हुजूर का शुक्रगुजार क्यों होना चाहिए ?"

"यह तरकीब उन्हीं की बताई हुई थी। काफी दिन की बात है। जन्नतमकानी शहंशाह जंग फतह करके वापस आ रहे थे। रास्ते में रात बिताने के लिए एक जंगल में रुकना पड़ा। मैं हमेशा उनके साथ रहता था। मेरा तम्बू बगल में ही था। तनहाई देख मैं उनके हुजूर में जाकर हाजिर हो गया। उस रात वह काफी फिक्रमन्द थे। उनके चेहरे पर उभरी परेशानी देख मुझे जबान खोलने की हिम्मत न हुई। कुछ देर बाद उन्होंने ही खामोशी तोड़ी, बोले, "कहिए, सब इन्तजाम ठीक है ?"

"जी हुजूर !" मेरे मुंह से निकला।

"थोड़ी देर खामोश रहने के बाद उन्होंने फिर एकाएक सवाल कर दिया, "शाहजादों के बारे में तुम्हारा क्या ख्याल है ?"

"गुलाम हुजूर का मतलब नहीं समझ सका।" मैंने अनजान बनने की कोशिश की।

"मेरे बाद कौन शाहजादा मुगलिया हुकूमत की बागडोर सम्हालने के काबिल है ?"

"हुजूर की जिन्दगी के लाखों वर्ष अभी बाकी हैं। हुजूर को अभी से इस बाबत फिक्र की क्या जरूरत ?"

"नहीं, खां साहब ! मेरी दिली ख्वाहिश है कि मेरे जिन्दा रहते अगर कोई शाहजादा हुकूमत की बागडोर सम्हालने की काबलियत हासिल कर ले, तो आराम से मर सकूंगा। जो इन्सान वक्त से पहले नहीं सोचता, उसका इन्सानी दिमाग रखने का दावा गलत है। जिस हालत का पेशआना यकीनी है, उसकी बाबत अभी से क्यों न फिक्र की जाय।"

"बादशाह सलामत का रुख जाने बगैर मैं अपनी राय जाहिर ही क्या कर सकता था। लिहाजा मैंने बचने की कोशिश की, "हुजूर के सामने इस बाबत कौन क्या कह सकता है।"

"नहीं-नहीं, बेखौफ अपनी राय जाहिर करो। यह मेरी जिन्दगी का अहम मसला है। इसे हल किए बगैर मुझे सुकून नहीं। इसी फिक्र में दिन-रात मुब्तिला रहता हूं। जिसे हुकूमत सम्हालनी चाहिए, उसे शराब से फुरसत नहीं। रफीउश्शानशाह का मन कपड़ों और जेवरात के अलावा सियासी मामलों में लगता नहीं। जहानशाह का खास्सा खूंखार है। उसे शिकार के लिये चाहिए शेर। हुक्मरां के लिए बहादुरी ही सब कुछ नहीं होती।"

"मैंने मौके से फायदा उठाया और कहा, गुस्ताखी माफ हो। हुजूर, बजा फरमाते हैं। ये तीनों शाहजादे हुक्मरां बनने के काबिल नहीं।"

"फिर आपको ही उन्होंने अपना वलीअहद बनाने का फैसला जाहिर किया। बस, तभी से आपको वह अपने साथ रखने लगे, और यह तरकीब उन्होंने चन्द रोज जन्नतनशीन होने के पहले मुझे बताई थी।"

"मगर, आपने उनका यह फैसला अभी तक मुझसे छुपाये क्यों रखा?"

"ऐसी बातों को वक्त से पहले कभी जाहिर नहीं किया जाता। हर बात के लिए एक खास वक्त होता है। क्या आप को वक्त से पहिले बताकर खतरा पैदा करता?"

"खतरा! कैसा खतरा?"

"आप इस फैसले से वाकिफ होने पर मरहूम शहंशाह के खिलाफ़ बगावत कर सकते थे।"

"नामुमकिन! ऐसे शख्स के खिलाफ, जो मुझे ही अपना वारिस बनाने का फैसला कर चुका हो, मैं भला बगावत की बात क्यों सोचता?"

"आप इस वक्त नामुमकिन समझ रहे हैं। इनसान वक्त के हाथों की कठपुतली है। वक्त इन्सान से कब क्या कराता है, समझना आसान नहीं। क्या सलीम ने तख्त हासिल करने के लिए अकबर के खिलाफ बगावत नहीं की थी, जब कि यह तय था कि वही उनके जानशीन होंगे। फिर भी सलीम ने शहंशाह अकबर की खिलाफत करने में क्या उठा रखा। सोचिए, उस बुढ़ापे में शहंशाह सलामत के दिल को कितना सदमा पहुंचा होगा। जब वह

देख-सुन रहे होंगे कि उनके जिगर का टुकड़ा उन्हीं के खून का प्यासा है। आपके अब्बा हुजूर बड़ी दूरबी नजर रखते थे। उन्होंने अपनी जिन्दगी में कोई ऐसा मौका नहीं आने दिया जब आपने उनके खिलाफ बगावत की बात सोची हो।"

"वाकई, मरहूम अब्बा हुजूर आला दिमाग थे।"

"यह उन्हीं का दिमाग था जिसने हुकूमत के इस नाजुक वक्त में भी मुगलिया ताकत में जरा भी कमी न आने दी और हर बागी को उसकी बेजा हरकतों का मजा चखाया।"

"खुदा जन्नत में उनकी रूह को सुकून बख्शे। वह मेरे लिए सब इन्तजाम पहले से ही कर गये हैं। मुझे किसी बात की फिक्र करने की जरूरत नहीं।"

"मगर अभी आप अपने को बेफिक्र मत समझिए।"

"क्यों? एक था वह भी दुम दबाकर भाग खड़ा हुआ।"

"आप चार भाई हैं। बाकी दोनों शाहजादे शहंशाह के जन्नतनशीन होने की खबर पाते ही एक बार जरूर हुकूमत हासिल करने की कोशिश करेंगे। मुमकिन है, उनसे टक्कर लेनी पड़े।"

"अजीमुश्शान टक्करों से नहीं डरता, एक-दो नहीं, हजारों टक्करें रोज खा जा सकती हैं। और फिर जब आप जैसे आला दिमाग हमदर्द मेरे रहनुमा हैं, फिर मावदौलत को किस बात का डर।"

अजीमुश्शानशाह को अधिकार में पूर्णरूपेण समझकर प्रसन्नता के वेग को रोकते हुए मुनीम खाँ ने वाणी में यथाशक्ति माधुर्य घोलते हुए कहा, "यह तो हुजूर की नजरेइनायत है जो इस नाचीज को इस काबिल समझते हैं।"

"अपनी कीमत कौन आँक पाया है, आज तक, खाँ साहब। कौन किस काबिल है—इसे समझना दूसरों का काम है। हुकूमत के ऐसे नाजुक पर आपकी कितनी जरूरत है। इसे मावदौलत बखूबी समझते हैं।"

"हुजूर की जर्रानवाजी बेमिसाल है। अच्छा अब इ

चाहिए। बातों में वक्त जाया करना ठीक नहीं।"

"आप इन्हें महज़ बातें मत समझिए। इनकी अहमियत किसी भी चीज से कम नहीं।"

"जी हाँ, मगर, इन पर, फिर कभी भी, गौर फरमाया जा सकता है, इस वक्त शहंशाह को दफनाने का काम सबसे ज्यादा जरूरी है।"

"उसका सारा इन्तजाम तो आप पहिले से ही कर चुके होंगे।"

मुनीम खां ने शाहजादे को पैनी दृष्टि से देखकर सहमति व्यक्त की, "जी हाँ, फिर भी, साथ तो चलना ही होगा।"

"क्यों नहीं, आप जहाँ कहेंगे, कभी पीछे न पाएँगे।"

अजीमुश्शानशाह को अपने प्रभाव में पूरी तरह आया अनुभव कर मुनीम खाँ ने उठने का उपक्रम करते हुए कहा, "आइए, देखें बाहर क्या हो रहा है।"

"चलिए।" शाहजादा आज्ञाकारी अनुचर की भांति साथ हो लिया।



शाही शिविर से जान बचाकर जहाँदारशाह भागे तो तब तक भागते रहे जब तक लालकुँअरि की कोठी नहीं आ गई। उनका दम बुरी तरह फूल उठा था। सांस भीतर नहीं समा रही थी। मुंह से बोल नहीं फूट रहा था। चौखट के सहारे आंखें बन्द किए वह खड़े थे। पगड़ी सिर पर न थी। बाल बिखरे हुये थे। वस्त्र धूल-धूसरित थे और कहीं-कहीं से बदन भी झाँकने लगा था। अनभ्यस्त पैर उन्हें कोठी तक तो खींच लाए थे, पर उनमें शरीर का बोझ सम्हालने की शक्ति शेष न रह गई थी, अतः शाहजादे वहीं चौखट पर खड़े-खड़े गिर पड़े। गिरने की ध्वनि सुनते ही अनेक परिचाइकाएँ एक साथ

दौड़ पड़ी। शाहज़ादे का अप्रत्याशित रूप देख सबके विस्मय का ठिकाना न रहा। उनमें से एक दो तत्क्षण भागती हुई लालकुँअरि के कक्ष में प्रविष्ट हो बोली,—"शाहजादा साहब गिर पड़े हैं।"

"कहाँ ? कैसे ?" सूचना से अवगत होते ही लालकुँअरि के मुँह से आश्चर्यमिश्रित अविश्वास फूटा। स्वर के साथ ही वह बाहर की ओर लपकी भी। घटनास्थल की ओर कुछ पग ही बढ़ पाई होंगी कि परिचारिकाओं द्वारा लाए जाते हुए अचेत शाहज़ादे पर उनकी दृष्टि पड़ी। शाहज़ादे और अपने मध्य का अन्तर उन्हें असह्य हो गया। दौड़ कर शाहज़ादे के शरीर को स्पर्श करते हुए घबराहट भरे स्वर में दुश्चिंता व्यक्त की, "हे भगवान ! क्या हो गया इन्हें ?" शाहज़ादे के साथ-साथ चलते हुए लालकुँअरि ने अनेक आदेश एक साथ दे दिए, "हकीम साहब को फौरन साथ लेकर आओ।" एक आदेश पालन के लिए भागी तो दूसरी लक्ष्य बनी, "फौरन पानी लेकर आ।" तीसरी पर वह झुँझला उठी, "बाहर का दरवाजा बन्द कर जाकर।" परिचारिका के दो पग बढ़ते ही, "और देख, बिना मेरी इजाजत के कोठी में किसी को भी न घुसने दिया जाय।"

शाहज़ादे को पलंग पर लिटाया गया। परिचारिका के हाथ से पानी ले लालकुँअरि ने शाहज़ादे के मुँह पर छींटे मारे। शाहज़ादे ने आँखें खोल दीं। लालकुँअरि ने झुकते हुए प्रश्न किया, "तबियत कैसी है ?" कुछ भी उत्तर पाने की अपेक्षा लालकुँअरि ने अनुभव किया कि शाहज़ादे की आँखें पुनः मुँदती जा रही हैं। वह घबड़ाहट में चीत्कार-सी कर उठीं, "फौरन हकीम साहब को साथ लाओ जाकर।" एक साथ समस्त परिचारिकाएँ कक्ष से बाहर हो गईं। लालकुँअरि ने पुनः शाहज़ादे के मुँह पर पानी का छींटा मारा। शाहज़ादे ने पुनः आँखें खोल दी। शाहज़ादे को अपनी ओर देखते हुए लालकुँअरि ने पूछा, "क्या हो गया है आपको ?"

"मुझे ?" शाहज़ादे का स्वर अत्यन्त क्षीण था।

"हाँ-हाँ, आपको।"

"कुछ भी तो नहीं।" उठने का उपक्रम करते हुए शाहजादे ने आगे कहा, "भला, मुझे क्या होने का।" शाहजादे की मुद्रा पर एक शुष्क हास्य झलक उठा था।

"नहीं-नहीं, आपकी तबियत ठीक नहीं।" शाहजादे को उठने से रोकते हुए लालकुँअरि ने स्नेहसिक्त स्वर में कहा, "अभी आप खामोश लेटे रहिए। खुर्शीद हकीम साहब को लेने गई है। उनके आते ही आप ठीक हो जायेंगे।"

"मैं कोई बीमार थोड़े ही हूं जो हकीम साहब के आने पर ठीक होऊँगा।" शहजादे ने पुनः उठने की चेष्टा की।

"जी नहीं, अभी आप काफी कमजोर नजर आ रहे हैं। उठने की कोशिश मत करिए।"

"बिलावजह मुझे रोक रही हो। मैं कहता हूं कि मैं बिल्कुल ठीक हूं।"

"फिर भी, थोड़ी देर और लेटे रहिएगा तो क्या हर्ज है। खुदा न खास्ता, कहीं फिर गिर पड़े तो।"

"फिर गिर पड़े ! मतलब ?"

"अभी आप दरवाजे पर गिर पड़े थे।"

"मैं दरवाजे पर गिर पड़ा था !"

"जी हां, आपको उठाकर यहां लाया गया है।"

"कमाल है, मुझे कुछ भी ख्याल नहीं।"

"इसीलिए तो कह रही हूं कि अभी आप काफी कमजोर नजर आ रहे हैं। खामोश लेटे रहिए।" बाहर पदचाप सुन लालकुँअरि द्वार की ओर दृष्टि कर बोलीं, "शायद, हकीम साहब तशरीफ ले आए।"

हकीम साहब ने शाहजादे का भलीभांति निरीक्षण करने के उपरान्त आश्वस्त हो कहा, "कोई खास बात नहीं है। महज थोड़ी सी कमजोरी है। दो-चार दिन आराम करने से दूर हो जायेगी। इनके ये कपड़े बदलवाइए, हाथ-मुंह धुलाइए और........................"

"इनके उठने-बैठने में कोई खतरा तो नहीं है ?" बीच में ही लाल-

"कुछ भी तो नहीं।" उठने का उपक्रम करते हुए शाहजादे ने आगे कहा, "भला, मुझे क्या होने का।" शाहजादे की मुद्रा पर एक शुष्क हास्य झलक उठा था।

"नहीं-नहीं, आपकी तवियत ठीक नहीं।" शाहजादे को उठने से रोकते हुए लालकुंअरि ने स्नेहसिक्त स्वर में कहा, "अभी आप खामोश लेटे रहिए। खुर्शीद हकीम साहव को लेने गई है। उनके आते ही आप ठीक हो जायेंगे।"

"मैं कोई वीमार थोड़े ही हूं जो हकीम साहव के आने पर ठीक होऊँगा।" शहजादे ने पुनः उठने की चेष्टा की।

"जी नहीं, अभी आप काफी कमज़ोर नज़र आ रहे हैं। उठने की कोशिश मत करिए।"

"विलावजह मुझे रोक रही हो। मैं कहता हूं कि मैं विल्कुल ठीक हूं।"

"फिर भी, थोड़ी देर और लेटे रहिएगा तो क्या हर्ज है। खुदा न खास्ता, कहीं फिर गिर पड़े तो।"

"फिर गिर पड़े! मतलव?"

"अभी आप दरवाजे पर गिर पड़े थे।"

"मैं दरवाजे पर गिर पड़ा था!"

"जी हां, आपको उठाकर यहां लाया गया है।"

"कमाल है, मुझे कुछ भी ख्याल नहीं।"

"इसीलिए तो कह रही हूं कि अभी आप काफी कमजोर नज़र आ रहे हैं। खामोश लेटे रहिए।" वाहर पदचाप सुन लालकुंअरि द्वार की ओर दृष्टि कर वोलीं, "शायद, हकीम साहव तशरीफ ले आए।"

हकीम साहव ने शाहजादे का भलीभांति निरीक्षण करने के उपरान्त आश्वस्त हो कहा, "कोई खास वात नहीं है। महज़ थोड़ी सी कमजोरी है। दो-चार दिन आराम करने से दूर हो जायेगी। इनके ये कपड़े वदलवाइए, हाथ-मुँह धुलाइए और......................।"

"इनके उठने-वैठने में कोई खतरा तो नहीं है?" वीच में ही लाल-

कुँअरि ने पूछा।

"बेहतर होगा, दो-चार दिन कोठी से बाहर कदम न रखें।"

हकीम को कक्ष के बाहर तक छोड़ने के बाद लालकुँअरि लौटी तो शाहजादे को बैठे पा कहा, "आखिर, आप करेंगे अपने मन की ही। हकीम साहब इतना मना कर गए हैं, फिर भी, आप लेटे न रह सके।"

"हकीम साहब को बुलाकर तुमने अच्छा नहीं किया।" सम्हल कर बैठते हुए जहाँदारशाह ने कहा।

"क्यों, हकीम साहब के आने से क्या बुराई पैदा हो गई?"

"किसी को भी यह पता लगना, कि मैं यहां हूं, खतरे से खाली नहीं है।"

"खतरा! किस बात का खतरा?"

"अजीमुश्शान मेरी तलाश में होगा। उसके आदमी जब तक मुझे खोज नहीं निकालेंगे, खामोश नहीं बैठेंगे।"

"मगर, वे आपकी तलाश क्यों करने लगे?"

"मुझे अपने रास्ते से हटाने के लिए।"

"वह तो आपको इज्जत की निगाहों से देखते होंगे।"

"नहीं, मुगलिया खानदान में एक शाहजादा दूसरे शाहजादे को अपनी राह का रोड़ा समझता है। एक की कामयाबी के लिए दूसरे की बरबादी लाजमी है। और फिर, अब तो उसे मेरे खून का प्यासा होना ही चाहिए, जबकि अब्बा हुजूर इस फानी दुनिया में नहीं रहे।"

"क्या फरमाया आपने? बादशाह सलामत अब इस दुनिया में नहीं रहे?"

"शायद मुझी को देखने के लिये वह जिंदा थे। मुझे देखते ही उन्होंने हमेशा के लिए आँखें मूंद लीं।"

"होता वही है जो मंजूरे खुदा होता है। उनके जिस्म को काफी तकलीफ उठानी पड़ी। चलिए, वह दिन भी आ गया, जिसका आपको काफी

दिनों से इन्तजार था।"

"इसी बात का तो अफसोस है कि वह दिन आने से पहले ही गुज़र गया।"

"मतलब ?"

"अब हिन्दुस्तान का बादशाह होगा अजीमुश्शान।"

"और, आप ?"

"मौत का शिकार।"

"यह आप क्या फरमा रहे हैं !"

"हकीकत पर रोशनी डाल रहा हूं। शाही खजाने और फौज पर उसने पहले से ही कब्जा कर रखा है। वह तो कहो, मैं किसी तरह भाग खड़ा हुआ वरना अब तक कभी का काम तमाम हो गया होता। कोठी का सदर दरवाजा खुला तो नहीं है ?"

"मेरी इजाजत के वग़ैर किसी का भी दाखिल होना मुमकिन नहीं।"

"अज़ीमुश्शान के आदमी किसी भी वक्त आ सकते हैं।" गावतकिए का सहारा लेकर दीर्घ निःश्वास छोड़ते हुए जहाँदारशाह ने कहा, "देखो खुदा को क्या मंजूर है।"

"आपको इतना मायूस होने की ज़रूरत नहीं है। अगर बादशाहत हासिल नहीं हुई तो क्या एक मामूली इन्सान की तरह हम लोग जिन्दा भी नहीं रह सकते ? अगर, वह आपके पीछे ही पड़े हैं तो हम लोग कहीं दूर चल कर बसेंगे, जहाँ किसी किस्म का खतरा नहीं होगा।"

"इस ऐश की जिन्दगी को छोड़ना इतना आसान नहीं।"

"हुजूर, इम्तहान लेना चाहते हैं। ऐशोइशरत की जिन्दगी क्या, अगर ज़रूरत पड़े तो कनीज़ अपनी जान तक..........।"

"बस ! बस !!" लालकुँअरि का खञ्जरयुक्त उठा हाथ थाम जहाँदारशाह ने कहा, "इस यकीन के अलावा मुझे कुछ नहीं चाहिए। जीने के लिए इससे बढ़ कर सहारा दूसरा नहीं हो सकता। इस जाँ निसारी पर सकड़ों

बादशाहत निसार है ।"

"हुजूर ने कनीज को हमेशा गलत समझा ।" लालकुँअरि के नेत्र सजल हो उठे थे । कण्ठ अवरुद्ध हो गया था ।

जहाँदारशाह मन ही मन सोचने लगे—यह भी कोई जिन्दगी है । मुगलिया खानदान में खुदा ने पैदा किया और वह भी वलिएअहद की हैसियत से, मगर इस उम्र तक हासिल क्या हो सका । कुछ भी तो नहीं । जिस दिन के इन्तजार में इतनी उम्र कटी, वह भी इस कदर मुँह फेर लेगा, ख्वाब में भी न सोचा था । इस जिन्दगी से तो ....।

"हुजूर को इतनी जल्दी मायूस नहीं होना चाहिए ।" जहाँदारशाह के चेहरे पर उभरी वेदना को लक्ष्य कर लालकुँअरि ने ढाढस बंधाने की चेष्टा की, "वक्त कभी एक सा नहीं रहता । तब्दीली उसकी खासियत है । अगर जीती बाजी हारी जा सकती है तो हारी बाजी भी जीतते लोगों को देखा और सुना गया है । मुझे अब भी पूरा यकीन है कि एक-न-एक दिन आप के हाथ में हिन्दुस्तान की हुकूमत की बागडोर जरूर होगी ।"

अपने दुर्भाग्य पर मुस्कराते हुए शाहजादे ने कहा, "हिन्दुस्तान की बादशाहत गूलर का फूल हो गई है, बेगम । अब इस बाबत कुछ भी सोचना फिजूल है ।"

"इस दुनिया में नामुमकिन कुछ भी नहीं । जो आज नहीं है, वह कभी हो ही नहीं सकता—सोचना सरासर नादानी है । हिन्दुस्तान की पूरी तवारीख में ऐसी बेशुमार नजीरें मौजूद हैं, जब मामूली इन्सानों ने बादशाहत हासिल की है । और, फिर आप तो मरहूम बादशाह के वलिअहद हैं । आप की नसों में मुगलिया खानदान का खून रवाँ कर रहा है । वह एक-न-एक दिन जरूर जोर मारेगा । और, वक्त आने पर आपको वह हाथ-पर-हाथ धरे बैठे नहीं रहने देगा ।"

"अब इस जिन्दगी में तो कुछ मुमकिन है नहीं । शाही खजाने पर अजीमुश्शान का कब्जा हो चुका है ।"

"शाही फौज और खज़ाने पर कब्जा होने से क्या होता है। ये तो ऐसी चीजें हैं जो दुबारा जुटाई जा सकती हैं, मगर जब इन्सान हिम्मत हार बैठता है, तब मुमकिन भी नामुमकिन नज़र आने लगता है। आप हिम्मत बाँधिए और जन्नतमकानी शहँशाह हुमाऊं की तरह दुश्मन पर फतेह हासिल करने की कोशिश करिए। उनकी हालत तो एक दिन आपसे भी बदतर हो गई थी, मगर उन्होंने हिम्मत से काम लिया और हुकूमत की बागडोर हासिल करके ही दम लिया। जरा सोचिए, काश ! वह भी आप ही की तरह हिम्मत हार बैठे होते तो आज क्या हालत होती। शायद मुगल खानदान का नामोनिशान मिट गया होता। आप एक बार कोशिश तो कर देखिए। कामयाबी ज़रूर आपकी कदमबोसी करेगी।"

"बेगम, तुम्हारा सोचना ग़लत नहीं; मगर जन्नतनशीन हुमाऊं के पास कुछ वफादार सरदार थे जो मरते दम तक उनका साथ देने को तैयार थे। मेरे पास उस किस्म का एक भी सरदार तो दूर रहा, मामूली इनसान तक हमदर्दी दिखाने वाला नहीं है।"

"हुजूर को इस वक्त इन्सान की हमदर्दी का नहीं, बहादुरी की जरूरत है जो पैदा की जा सकती है, खरीदी जा सकती है।"

"तुम्हारा सोचना बिल्कुल ठीक है, लाल ! शाही फौज के जाँनिसार बहादुरों तक की बहादुरी खरीदी जा सकती है, मगर जानती हो बेगम, उसे खरीदने के लिए कितनी दौलत चाहिए ?"

"जितनी भी दौलत चाहिए, उसका इन्तजाम करना मेरा काम, आप कमर तो कसिए।"

"नहीं लाल, शाही फौजों को शिकास्त देने के लिए जितनी बड़ी फौज, चाहिए, उसके लिए दौलत जुटाना ख्वाब में भी मुमकिन नहीं।"

जहाँदारशाह की बात सुन कर लालकुंअरि मुस्करा दीं और आत्मविश्वासपूर्ण स्वर में बोलीं, "हुजूर बजा फरमा रहे हैं, मगर जिन चीजों का कुछ लोगों के लिए ख्वाब में भी सोचना या हासिल कर पाना नामुमकिन होता

है, वे ही दूसरों के लिए हकीकत से भी ज्यादा नजदीक और कब्जे में नजर आती हैं। दौलत की फिक्र हुजूर न करें।"

"बेगम ! यही तो सारे फसादों की जड़ है; फिर भी, हर इंसान इसके पीछे हाथ धोकर पड़ा है। इसे हासिल करने के लिए किसे क्या नहीं करना पड़ता है। फिर भी यह ऐसी है कि एक जगह टिकने का नाम नहीं लेती। आज इसके पास तो कल उसके पास। यह कब किसका दामन पकड़ेगी, जानना बड़ा मुश्किल है। देख रही हो, मुगल सल्तनत के वलिएअहद को कितनी जल्दी इसने भिखारी बना दिया।"

"अगर हुजूर बुरा न मानें तो मेरे साथ चलने की जहमत गवारा करें।" लालकुँअरि ने जहाँदारशाह को उठने के लिए प्रेरित किया।

"मुझे क्या उज्र हो सकता है, लाल ! जहां मर्जी हो, ले चलो। अब तो आखिरी साँस तक यूँ ही भटकना है।" लालकुँअरि का अनुसरण करते हुए जहाँदारशाह बोल रहे थे, "पर, लाल मुझे कहाँ लिए चल रही हो ? यह रास्ता जाता कहाँ को है। बड़ी खतरनाक जगह मालूम दे रही है।"

"जी हाँ, दौलत के लिए ऐसी ही जगहों की जरूरत होती है।"

"और यह जीना तो बहुत ही तंग नजर आ रहा है।" जीने के द्वार पर खड़े हो आगे बढ़ने में झिझकते हुए उन्होंने पूछा, "क्या और कोई रास्ता नहीं है ?"

"नहीं हुजूर, दौलत के रास्ते इससे भी तंग होते हैं। आइए, बेखौफ बढ़ते चले आइये।"

बाध्य हो आगे बढ़ते हुए जहाँदारशाह ने कहा, "बेगम, तुम्हारा भी जवाब नहीं। तुम्हारी हर बात अजीबोगरीब होती है।"

"बजा फरमाते हैं हुजूर, दौलत का साया जिस पर पड़ता है, वही दूसरों की नजरों में अजीबोगरीब बन जाता है।" भूगर्भ स्थित विशाल कक्ष को हाथ की मशाल से प्रकाशित कर दृष्टि आकर्षित करते हुए लालकुँअरि ने पूछा, "हुजूर इस ढेर को तो पहचानते ही होंगे ?"

"अरे ! यह तो हीरे-जवाहरातों का ढेर है ।" उसमें से एक माला उठा सहसा वह बोल उठे, "और यह तो मेरा ही दिया हुआ मालूम देता है।"

"जी हां, यही नहीं, यह पूरा ढेर आपका ही वख्शा हुआ है ।"

"आराम से जिन्दगी गुजारने के लिए इतनी दौलत काफी है ।"

"जी नहीं, इधर आइए ।" एक ओर को आगे बढ़ते हुए लालकुंअरि ने कहा, "इस कोठरी में भी ऐसी ही वेशुमार दौलत भरी हुई है । इसके ज़रिए आप जितनी बड़ी फ़ौज चाहें, खड़ी कर सकते हैं ।"

"वाकई ! यह तो शाही खजाने से कई गुना ज्यादा है । इतनी दौलत तुम्हारे पास होगी, यकीन न हो पा रहा था । यह सारी दौलत तुम्हारी जमा की हुई है ?"

"जी नहीं, यह कोठी के पुराने मालिक की पैदा की हुई होगी जिसके मरने के बाद यह मेरे कब्जे में आई ।"

"तो क्या वह तुम्हें इस कोठी के साथ-साथ यह दौलत भी सौंप गया था ?"

"जी नहीं, इसकी वावत अगर और किसी को मालूम होता तो शायद यह कोठी मेरे हाथ लगती ही नहीं । और कभी-कभी तो मैं इस नतीजे पर पहुँचती हूं कि शायद इस दौलत की वावत वह सेठ भी नहीं जानता था, वरना मरते वक्त तक इसका राज किसी न किसी पर जाहिर ज़रूर कर जाता। मेरा यकीन है कि मेरे अलावा हुजूर ही इसकी वावत जानने वाले हैं ।"

"इतमीनान रखो वेगम, यह राज मेरी जुवान तक कभी न आने पायेगा ।" लालकुंअरि का हाथ अपने दोनों हाथों में थाम जहाँदारशाह ने विश्वास दिलाने की चेष्टा की ।

"नहीं हुजूर अव इसके इस्तेमाल का वक्त आ गया है । मेरी दिली तमन्ना है कि इसके ज़रिए हुज़ूर उन ख्वावों को हकीकत में वदलें जिन्हें हुजूर ने इतने दिनों तक संजोये रखा ।"

"क्यों वेगम विलावजह आफत मोल लेना चाहती हो । ऐश की जिन्दगी

गुजारने के लिए क्या इतनी दौलत कम है ?"

"जी नहीं, उसके लिए तो इसमें हाथ लगाने की जरूरत ही नहीं, मगर मैं चाहती हूं कि आप अपने हक को हासिल करें और आपका नाम दुनिया में रोशन हो।"

"और साथ-साथ तुम्हारा भी नाम।" लालकुँअरि की कटि में हाथ डाल, लौटते हुए जहाँदारशाह ने कहा, "नूरजहाँ की तरह तुम्हारा नाम भी रियाया की जुबान पर होगा।"

"यह तो हुजूर की इनायत होगी, वरना कनीज के ऐसे नसीब कहाँ।"

सीढ़ी चढ़ते हुए जहाँदारशाह बोल रहे थे, "नहीं बेगम, अगर जिन्दगी में मैं कुछ हासिल कर सका तो, वह तुम्हारी बदौलत होगा। मेरे नाम के पहले तुम्हारा नाम लोगों की जुबान पर आयेगा।"

सुनते ही लालकुँअरि कल्पना-लोक में पहुँच गईं। सत्ता-सम्पन्न नारी के रूप में अपना रूप देखकर वह मुग्ध हो गईं। उन्हें यथार्थ जीवन का होश न रहा। हाथ से मशाल गिरने लगी। मशाल थाम जहाँदारशाह ने सचेष्ट किया, "बेगम! किस ओर चलना है?" आगे रास्ता दो दिशाओं को जाता था।

"ओह!" वह यथार्थ जगत में उतर आईं, "इस तरफ।" मार्ग-निर्देशन करते हुए लालकुँअरि ने मशाल हाथ में से एक ओर फेंकते हुए कहा, "माफ़ करिएगा। आपको तकलीफ़ हुई।"

"नहीं, लाल! इस रोशनी ने मेरी आँखें खोल दी हैं। आज तक मैं दौलत की जगह सिर्फ शाही खजाने को ही समझता था, पर आज कुछ ऐसा महसूस कर रहा हूं कि न जाने कितनी कोठियों में ऐसी ही दौलत भरी होगी।"

कक्ष में प्रवेश करते ही लालकुँअरि की दृष्टि कक्ष के दूसरे द्वार पर नत सिर खड़ी। परिचारिका पर पड़ी सहसा मुँह से जिज्ञासा व्यक्त हुई, "सुर्मीद! क्या है?"

"बाहर एक साहब काफी देर से हुजूर के दीदार के मुन्तजिर हैं।"

"मेरे ?" जहांदारशाह के मुंह से सहसा निकल पड़ा।

उनके मुखमण्डल की सारी प्रसन्नता सहसा काफूर हो गई। उभरती घवराहट को लक्ष्य कर लालकुंअरि ने डाँटा, "तुझे हिदायत थी कि हुजूर के यहाँ होने की किसी को कानोकान खवर न हो।"

"मगर, वह पहले से ही हुजूर की मौजूदगी से वाकिफ हैं।"

"जरूर अजीमुश्शान का कोई आदमी होगा।" जहांदारशाह की घवड़ाहट चरम सीमा पर थी। उनका शरीर भय से सिहर उठा था।

"पर, उसे कोठी में घुसने किसने दिया ?" लालकुंअरि के स्वर में क्रोध की गर्मी यथेष्ठ मात्रा में थी।

"कोठी के वाहर ही वह इन्तजार कर रहे हैं।"

"सव-की-सव कुन्दजेहन हो। कभी दिमाग से काम नहीं लेतीं। चलो, मैं आती हूं। खयाल रखना, कोठी के अन्दर वह दाखिल न होने पावे।"

"जो हुक्म।" खुर्शीद झुक कर सलाम करती हुई कक्ष से वाहर हो गई।

"आप यहीं आराम फरमाइए। मैं जाकर देखती हूं। अभी रवाना करती हूं।"

"तुम मत जाओ। कोई चोर दरवाजा नहीं है इस कोठी में ?"

"है, एक नहीं, तीन हैं।"

"फिर चलो, उसी से निकल चलें।" उठकर लालकुंअरि को पकड़ खींचते हुए जहांदारशाह ने कहा, "एक लमहा भी यहाँ रुकना, खतरे से खाली नहीं है।"

अपने को मुक्त करने का प्रयास करते हुए लालकुंअरि ने कहा, "हुजूर वेफिक्र रहें। मेरे रहते यहाँ हुजूर का वाल भी वांका नहीं होने का। आपके पास तक मेरे और खुर्शीद के अलावा दूसरा पहुंच ही नहीं सकता।"

"नहीं वेगम ! तुम अभी अजीमुश्शान के मिजाज से वाकिफ नहीं हो। वह किसी भी क़ीमत पर मुझे जिन्दा नहीं छोड़ेगा।"

"हुजूर तो बिलावजह परेशान हैं। पहिले देखने तो दीजिए, आखिरकार है कौन। मुमकिन है, हुजूर का कोई हमदर्द खिदमतगार ही हो।"

"नहीं बेगम! मौजूदा वक्त मेरे खिलाफ है। तक़दीर मुझसे रूठी हुई है। किसी का मेरा मददगार साबित होना नामुमकिन है। दुश्मन के अलावा किसी को मेरी तलाश नहीं हो सकती।"

"हुजूर शायद मेरे पुरखों की कशिश से वाकिफ नहीं। दुश्मन को दोस्त बनाना मेरे बाएँ हाथ का खेल है। इन्तकाम की आग को बुझाने के लिए मेरे मुँह से निकली हुई एक तान ही काफी है। अगर वह वाक़ई हुजूर का दुश्मन ही साबित हुआ तो धड़ से जुदा उसका सिर हुजूर के कदमों में पेश न करूँ लाकर तो मेरा नाम लाल नहीं।"

"अच्छा जाओ।"

"आप इतमीनान रखिए। इससे महफूज जगह इस शहर में दूसरी नहीं हो सकती।"

दृष्टि से दूर होती लालकुँअरि को देख जहाँदारशाह ने कहा, "दरवाजा बाहर से बन्द करना न भूलना।"

"बहुत अच्छा।" दरवाजे को बाहर से बन्द करते हुए लालकुँअरि का कण्ठस्वर जहाँदारशाह के कर्ण-कुहरों में प्रविष्ठ हुआ।



जुल्फ़िक़ार खाँ मुगल सम्राट बहादुरशाह के दरबार के अत्यन्त प्रभावशाली सरदार थे। वह शहन्शाह बहादुरशाह के समय में अमीरुलउमरा और प्रथम बख्शी के पदों को सुशोभित कर चुके थे। उनका दरबार में इतना अधिक सम्मान था कि स्वयं बहादुरशाह भी उन्हें 'खाँ साहब' कह कर सम्बोधित करते थे। वह अत्यन्त दूरदर्शी राज[illegible] थे।

करता था। खां साहब ने भी खुर्शीद को ही लालकुंअरि समझ शालीनता का परिचय दिया। एक अत्यन्त प्रभावोत्पादक व्यतित्व वाले सरदार को अपनी ओर शिष्टाचार-पूर्वक अभिवादन करते देख खुर्शीद ने शीघ्र ही उनके अभिवादन का उचित उत्तर दिया और अत्यन्त सुमधुर वाणी में पूछा, "फरमाइये, कनीज आपकी क्या खिदमत कर सकती है ?"

"मैं शाहजादा जहाँदारशाह की खिदमत में आदाव वजाना चाहता हूं।" खां साहब ने नम्रतापूर्वक उत्तर दिया। शाहजादे से मिलने की वात सुनकर खुर्शीद ने अपने स्वभाव में कुछ कठोरता लाने का प्रयास करते हुये पूछा, "शायद आप डेरे से तशरीफ ला रहे हैं ?"

"हाँ, आ तो मैं वहीं से रहा हूं, लेकिन आप मुझे समझने की गल्ती कर रही हैं।"

"यह आपने कैसे समझ लिया कि मैं आपको समझने में गल्ती कर रही हूं ?"

"जिस तरह आपने यह समझ लिया कि मैं डेरे से ही आ रहा हूं।"

"खैर, आप कौन हैं और कहां से आ रहे हैं, इससे मुझे कोई मतलव नहीं, लेकिन आपको यह कैसे मालूम हो गया कि शाहजादा साहब यहीं हैं ?"

"डेरे से भागने के वाद वह यहीं आये और मेरे जासूस ने उनका पीछा किया था। मैं शहन्शाह को दफनाने के वाद सीधे यहीं आ अहा हूं।"

"लेकिन, आप उनसे नहीं मिल सकते।" उपेक्षापूर्ण स्वर में खुर्शीद ने कहा।

"क्यों, मैं उनसे क्यों नहीं मिल सकता ?"

"मुझे इस वात की सख्त हिदायत कर दी गई है कि जो कोई भी आये उसे वहीं से वापस कर दिया जाय।"

"तो आप लालकुंअरि नहीं हैं ?"

"जी नहीं, वह मेरी सरपरस्त हैं।"

"ओह, अब समझा, तब तो तुम्हारा यह बेरुखा बर्ताव ठीक ही है। मैं तुम्हें ही लालकुंअरि समझने की गल्ती कर बैठा था।"

"ऐसी गल्ती करने वाले आप नये नहीं हैं। अक्सर लोग ऐसी ही गल्ती करने का बहाना बनाते हैं।"

खाँ सहब सोचने लगे कि यह अत्यन्त चतुर है। उसे बातों में नहीं फुसलाया जा सकता। उनकी व्यावहारिक बुद्धि तत्काल सजग हो गई। उन्होंने शीघ्र ही जेब में हाथ डाला और मुट्ठी भर स्वर्ण मुद्रायें निकाल कर सुर्शीद के हाथ में रखते हुये कहा, "देखो मुझे इसी वक्त उनसे मिलना है। बहुत जरूरी काम है। अगर उनसे मुलाकात न हो सकी तो उन्हें जिन्दगी भर पछताना पड़ेगा।" खाँ साहब ने अत्यन्त मन्द स्वर में यह बात कही थी ताकि कोई दूसरा न सुन ले।

सुर्शीद उसी घर में इतनी बड़ी हुई थी। प्रायः बड़े-बड़े अमीर आया करते थे जिनका प्रथम साक्षात्कार सुर्शीद से ही होता था, लेकिन किसी ने भी आज तक उनको इतनी स्वर्ण मुद्रायें एक साथ नहीं दी थीं। वह एक बार इतनी स्वर्ण मुद्रायें अपने हाथ में देख किंकर्तव्य-विमूढ़ हो गई। सिक्कों की चमक ने उसकी कर्तव्य-बुद्धि पर लोभ का रंग चढ़ दिया। लालच ने कर्तव्य पर विजय पाई। कुछेक क्षणों तक वह उन सिक्कों की ओर देखकर सोचती रही, फिर एकाएक खाँ साहब की ओर मुस्कान भरी दृष्टि से देखती हुई बोली, "आप यहीं रुकिए। मैं आप की शाहजादा साहब से मुलाकात कराने की कोशिश करती हूं।" कहकर वह अन्दर की ओर मुड़ चली।

लालकुंअरि अनेक कमरों को पार करती हुई बाहर के उस कक्ष में आई जो नवीन आगन्तुकों के लिए नियत था। खाँ साहब की दृष्टि भी द्वार की ओर लगी हुई थी। द्वार पर लालकुंअरि को आता हुआ देख वह उठ खड़े हुये। उन्होंने ऐसा सौन्दर्य जीवन में प्रथम बार देखा था, अतएव देखते ही रह गये! परन्तु जीवन में कर्तव्य को प्रधानता देने वाले शीघ्र ही सा-

जगत से उतर कर यथार्थ जगत में आ गये । लालकुंअरि भी एक अपरिचित आगन्तुक को अत्यन्त भड़कीली पोशाक में देख अजीमुश्शान के होने की शंका से कांप उठीं परन्तु शीघ्र ही अपने को प्रकृतिस्थ करती हुई बोलीं, "फरमाइये इस गरीब-खाने में तशरीफ लाने की आपने कैसे तकलीफ गवारा की ?" जुल्फिकार खाँ के कानों में लालकुंअरि की संगीत-मयी वाणी ने अमृत वर्षा की । खाँ साहब अत्यन्त संयमी व्यक्ति थे, फिर भी डिगते संयम को साध उन्होंने अत्यन्त शिष्टाचार के साथ कहा, "मैं शाहजादा साहब की खिदमत में ······।"

लालकुंअरि ने बीच में ही प्रश्न किया, "लेकिन आप ....।"

"मैं शाही दरबार का एक सरदार हूं । मेरा नाम जुल्फिकार खाँ है ।"

"मेरा मतलब आपके बारे में जानने का नहीं था । मैं तो........।"

"हाँ ! हाँ !! मैं जानता हूं कि आप यह जानना चाहती होंगी कि मुझे शाहजादा साहब के यहाँ होने की खबर कैसे लग गई ।"

"जी हाँ ।"

"सुबह जब वह डेरे से भागे थे तब मेरे एक जासूस ने उनका पीछा करके यह जान लिया था कि वह आपके ही यहाँ आये हैं ?"

"क्या मैं जान सकती हूं कि आप उनसे क्यों मिलना चाहते हैं ।"

"वैसे मुझे बताने में कोई उज्र नहीं,लेकिन वह बात ऐसी है जो उन्हीं से ताल्लुक रखती है । आपको शायद मेरे ऊपर शाही जासूस होने का शक हो गया है । अगर आप नहीं चाहतीं कि मैं उनसे मिलूं तो जाता हूं । लेकिन इतना कहे जाता हूं कि अगर मैं इस वक्त उनसे न मिल सका तो उन्हें जिन्दगी भर पछताना पड़ेगा और फिर ऐसा मौका कभी नहीं आयेगा ।"

खाँ साहब की धमकी सम्भवतः काम कर गई, लेकिन लालकुंअरि भी कम चतुर न थीं । उन्हें मानव स्वभाव का अच्छा ज्ञान था । उन्होंने अवसर से चूकना तो सीखा ही न था । शीघ्र ही अनजान बनते हुये कहा, "मैं आपका मतलब नहीं समझ सकी ।"

"मतलब साफ है। मैंने सोचा था कि शायद मैं कुछ उनकी मदद कर सकूं। अब भी हारी हुई बाजी को जीतने का मौका है। खैर जैसी आपकी मर्जी।" कहकर खाँ साहब जैसे ही जाने के लिए मुड़े, वैसे ही लालकुंअरि ने उन्हें रोकने के अभिप्राय से कहा, "आप भी गजब कर रहे हैं। मेरे यहाँ आकर आज तक कोई भी शख्स नाउम्मीद होकर नहीं गया है। चलिए, मैं आपको अभी उनसे मिलाये दे रही हूं।" कह कर अपना अनुसरण करने का संकेत करते हुये वह अन्दर की ओर चल दीं। खाँ साहब भी उनका अनुसरण करने लगे। खाँ साहब जैसे अनुभवी व्यक्ति लालकुंअरि की चतुरता को भाँप गये। कमरे में प्रवेश करते ही उसकी सजावट देखकर खाँ साहब का मन मुग्ध हो गया। द्वारों पर रेशमी परदे, फर्श पर बेशकीमती कालीनें और ऊपर की ओर छत से लटकते हुये फानूस और वहाँ की परिव्याप्त सुगन्ध के सम्मिलित प्रभाव ने खाँ साहब को ऐसा प्रभावित किया कि वह अपने आने का उद्देश्य भूल कर किसी अन्य लोक में विचरण करने लगे। अनेक कमरों को पार करती हुई खाँ साहब को लालकुंअरि उस कमरे की ओर ले चली जहाँ जहाँदारशाह मसनद के सहारे चिंता-युक्त मुद्रा में अर्धशायित थे। वह कमरा कोठी के पिछले भाग में था। उससे कोई भी बाहरी व्यक्ति परिचित नहीं था। उसके तीन ओर विस्तृत मैदान था। स्वच्छन्दरूप से विचरण करने वाली वायु खिड़कियों से होकर परिव्याप्त सुगन्ध को और अधिक तीव्रता प्रदान कर रही थी। दीवालों पर लगे हुये तैलचित्र लालकुंअरि की विभिन्न नृत्य-मुद्राओं का परिचय दे रहे थे। उस कक्ष का वातावरण एकान्त व्यक्ति को भी शान्ति प्रदान करने में सक्षम था। एक ओर रखी हुई मदिरापूर्ण सुराही और मदिरा पात्र जहाँदारशाह की मदिरा-प्रियता की ओर संकेत कर रहे थे। दीवार के सहारे खड़ा हुआ तानपूरा सम्भवतः आगन्तुकों के मनोरञ्जन के लिये वहाँ उपस्थित था। वस्तुओं के व्यवस्थित स्वरूप और उनकी सुन्दरता देखकर कोई भी व्यक्ति प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकता था। जहाँदारशाह की मानसिक

अवस्था अच्छी न होने के कारण मुँह पर चिंता की रेखायें बन-बिगड़ रहीं थीं। मन को फुसलाने के लिए कभी खड़े होकर खिड़की के बाहर झांक कर देखते तो वहाँ अन्धकार में टिमटिमाते तारों के अतिरिक्त कुछ भी दृष्टिगोचर न होता। अपने प्रयास में असफल होकर पुनः उसी स्थान पर आकर बैठ जाते। दृष्टि द्वार की ओर लगी हुई थी। काफी समय हो गया था। उनका हृदय आशंका से भर-भर उठता था। एक बार उनके मन में विचार आया कि चल कर देखा जाय, परन्तु अवसर को खतरे से खाली न समझ वहीं रहे। अन्ततोगत्वा पदचापों ने उनके हृदय की धड़कन को तीव्रता प्रदान की। द्वार खुला और लालकुंअरि का अनुसरण करते हुये खाँ साहब दिखाई दिये। कमरे में उनके प्रवेश करते ही जहाँदारशाह ने उठकर उनको अंक में भर लिया। दोनों इस प्रकार मिल रहे थे मानो जन्मजन्मान्तर के बिछुड़े हुये हों। लालकुंअरि पास ही खड़े-खड़े इस प्रेम पूर्ण मिलन को बड़े ध्यान-पूर्वक देख रही थीं। कुछ क्षण बाद दोनों अलग हुये और जहांदारशाह ने खां साहब का हाथ पकड़कर अपने समक्ष बैठाते हुये कहा, "मुझे पूरा यकीन था कि आप मुझसे मिलेंगे जरूर। दरबारियों में सिर्फ आप ही एक ऐसे शख्स हैं जिनकी मुझसे हमदर्दी है, वरना सब मुझे अपना दुश्मन ही समझते हैं।"

"यह तो वक्त की बात होती है। अगर तख्त पर आपको बैठाने की उम्मीद होती तो वे लोग आपके हमदर्द हो जाते। उनका क्या भरोसा जिधर ज्यादा ताकत देखी उधर ही झुक गये।"

"आज तो मैं सुबह अजीमुश्शान का सुलूक देखकर दंग रह गया। मैंने तो कभी ख्वाब में भी न सोचा था कि वह कभी मेरे साथ ऐसा बर्ताव कर सकता है।"

"दरअसल, आप जैसा नेकदिल शाहजादा दूसरा नहीं। आप इन बातों पर कभी गौर नहीं कर सकते और अजीमुश्शान भी ऐसा नहीं कर सकता था।"

"फिर क्या किसी दूसरे ने उन्हें ऐसा करने के लिए कहा था ?"

"जी हां, क्या आप समझते हैं कि अज़ीमुश्शान के दिमाग़ में भी कभी ऐसी बात आ सकती है ? यह सब कारस्तानी तो उस मुनीम खां की थी।"

"अब मैं समझा कि वह खुराफात मुनीम खां के दिमाग़ की पैदाइश थी।"

"आपने उस वक्त वहां से जल्दी भाग कर बड़ी ही अक्लमन्दी का काम किया।"

"मुझे और कोई दूसरा रास्ता भी तो नज़र नहीं आ रहा था।"

"आपने उस वक्त जो कुछ भी किया ठीक ही किया, लेकिन यहां आकर रहना भी ख़तरे से खाली नहीं है।"

"जी हां, मगर जाऊं कहां ? इससे महफूज़ जगह दूसरी नज़र नहीं आती।"

"ख़ैर कोई बात नहीं। आपको फ़िक्र करने की कोई ज़रूरत नहीं है। फ़िलहाल वे लोग आपकी तलाश में नहीं हैं।"

"तब तो खुदा का शुक्र है।"

"जी हां, इसे खुदा का शुक्र ही समझिये जो वह लोग गाफ़िल हैं। और अब तो कूच की तैयारियां हो रही होंगी।"

"कूच की तैयारियां ?"

"जी हां, शायद सुबह तक वहां से कूच भी कर दें। उन्हें जल्दी ही दिल्ली पहुंच कर तख्त पर रौनक अफ़रोज़ होना है।"

"वह तो होना ही है।" निराशा भरे स्वर में जहांदारशाह ने कहा।

"यह आप क्या फ़रमा रहे हैं ?"

"वही जो लाज़मी है। अब्बाजान भी तो यही चाहते थे कि अज़ी–मुश्शान ही तख्त का वारिस हो।"

आपका फ़रमाना दुरुस्त है, मगर सिर्फ़ चाहने भर से कोई हिन्दुस्तान के तख्त का मालिक नहीं हो सकता। उसके लिए जिन बातों की ज़रूरत है वे अज़ीमुश्शान में कहां ?"

"फिर भी, शाही फौज, शाही खजाना और सैकड़ों सरदारों की वफादारी उसके पास है ही। किसी भी हुकूमत को कायम रखने के लिये इन्हीं जों की जरूरत होती है।"

":मगर इनसे काम लेने के लिए एक चीज निहायत जरूरी है और वह अक्ल जो आपको छोड़कर और किसी भी शाहजादे के पास नहीं है।"

"हो सकता है कि आपका ख्याल दुरुस्त हो, मगर जब कोई इन ताकतों ो पा जाता है तब उसकी बुराइयाँ भी लोगों की नजर में अच्छाइयाँ बन ाती हैं।"

"मगर लोगों की नजर पर यह धोखे का पर्दा कब तक पड़ा रह पाता ।। एक वक्त आता है जब लोग उसकी असलियत से वाकिफ हो जाते ई और उसकी कमजोरियों से फायदा उठाये बिना नहीं रहते। और मेरा तो ख्याल है कि अजीमुश्शान हुकूमत कर ही नहीं सकेगा।"

"क्यों?"

"वह तो अभी से मुनीम खाँ के हाथों की कठपुतली बना हुआ है। मुनीम खाँ जो चाहेगा, वही होगा। ऐसी हालत में बादशाह की ढिलाई से लोग नाजायज फायदा उठायेंगे जिससे सल्तनत में बदइन्तजामी, ज्यादती और गैर इन्साफी पनपेगी और रियाया पिसेगी, तबाह होगी, जिसे वफादार सरदार बरदाश्त न कर सकेंगे और बगावत के लिये उठ खड़े होंगे।"

"मगर वह सब तो वक्त बताएगा। हमें तो सिर्फ वक्त का इन्तजार करना है।"

"कतई नहीं उसका क्या इन्तजार करना है जो हमारा नहीं करता। क्या वक्त ने कभी किसी का इन्तजार किया है जो हम उसका करें? वक्त की इन्तजारी का बहाना लेकर खामोश बैठे रहना अपने ही हाथों से अपनी तरक्की का गला घोटना है। हम अपने काम में जितनी देरी करेंगे, दुश्मन की ताकत उतनी ही बढ़ेगी और हमारी ताकत उतनी ही कम होगी।"

"मगर यहाँ तो ताकत कम होने का सवाल ही नहीं उठता।"

"क्यों, यह आप क्या फरमा रहे हैं ?"

"कमजोर इन्सान की इस दुनिया में क्या हस्ती। माल-दौलत ऐश ....."

खाँ साहब बीच ही में बोल उठे, "जब तक यह गुलाम हुजूर की खिदमत के लिए हाजिर है तब तक आप अपने को कमजोर क्यों बताते हैं ? मैंने मुगल बादशाहों का नमक खाया है । ऐसे नाजुक वक्त में, जब कि दुश्मन चारों तरफ से मुगलिया सल्तनत पर आँख लगाये हुये हैं, किसी गैर जिम्मेदार शाहजादे के हाथ में हुकूमत की बागडोर देकर मैं अपनी आँखों से सल्तनत की बरबादी नहीं देख सकता ।"

"फिर, आप चाहते क्या हैं ?"

"मैं चाहता हूं कि आप हिन्दुस्तान के तख्त पर बैठें।"

"आप भी बुरे दिनों में हंसी उड़ाना चाहते हैं।"

"यह आप क्या कह रहे हैं । आप समझने की कोशिश क्यों नहीं करते ? मैं जो कुछ कह रहा हूं, वह हंसी नहीं हकीकत है ।"

"मगर, सिर्फ आपके चाहने से क्या होता है ?"

"मैं ही नहीं, बल्कि हिन्दुस्तान की सारी रियाया भी यही चाहती है कि आप ही बादशाह हों ।"

"रियाया के चाहने से तो कोई बादशाह बन नहीं जाता । उसके लिये फौज और दौलत दोनों ही जरूरी हैं ।"

"उसकी आप फिक्र क्यों करते हैं । उसका इन्तजाम आप मेरे ऊपर छोड़ दीजिये । मैं तो सिर्फ आपकी राय जानना चाहता हूं ।"

खाँ साहब की बात सुनकर जहाँदारशाह की निराशापूर्ण भावना में सुख आशा का संचार हुआ । अपनी जिस अभिलाषा का मृतक रूप अभी उन्होंने अनुभव किया था, उसे पुनः जीवन प्रदान करने के लिये खाँ साहब स्वयं आ गये थे । । अपनी महत्वाकांक्षा के साकार होने से जो हृदय में प्रसन्नता की लहर दौड़ गई थी, उसे छिपाते हुये उन्होंने कहा, "लेकिन शाही फौज का सामना करना कोई मामूली बात नहीं है ।"

"वेवकूफ दुश्मन का सामना फौजी ताकत से नहीं दिमागी कूव्वत से करना चाहिए।"

"तो क्या आपने कोई ऐसी तरकीव निकली है जिससे शाही फौज को विना फौजी ताक़त के भी शिकस्त दी जा सके ?"

"जी हाँ,।"

"ज़रा सुनूं तो ?"

"मैंने शाही फौज के कुछ खास सरदारों को अपनी तरफ मिला रखा है। जो मौका पड़ने पर मैदानेजंग में आयेंगे तो शाही फौज की तरफ से मगर जंग करेंगे हुजूर की तरफ से।"

"अगर वक्त पर धोखा दे गये तो ?"

"शाही फौज के सिपाही कितने वफादार हैं, इसे मैं वखूवी जानता हूं।"

"फिर आपने उनकी वफादारी पर कैसे यकीन कर लिया ? जव वे अपने वादशाह के साथ गद्दारी कर सकते हैं तो आपके साथ...... ।"

"जी हाँ, मगर ऐसा करने का मौका ही नहीं मिल सकेगा। मैं उसका भी इन्तजाम सोचे वैठा हूं। और फिर, इसके अलावा मैं नई फौज भी तो तैयार करने जा रहा हूं।"

"उसके लिए तो काफी दौलत की जरूरत पड़ेगी ?"

"उसकी जिम्मेदारी मेरे ऊपर छोड़ दीजिये।" लालकुंअरि, जो इतनी देर से खामोश वैठी हुई उन दोनों की वार्तालाप सुन रही थीं, सहसा वोल पड़ीं।

"देखा आपने! अव आपको हिन्दुस्तान का वादशाह वनने से कोई ताकत नहीं रोक सकती।" खाँ साहव उछल पड़े।

"जिसे आप जैसे हमदर्द की मदद हासिल हो उसके लिए नामुमकिन कुछ नहीं।" लालकुंअरि ने खाँ साहव की प्रशंसा की।

"मुझ जैसे नहीं, आप जैसों के लिए यह वात ठीक हो सकती है। एक परेशानी थी वह भी आपकी मेहरवानी से दूर हो गई।" खाँ साहव ने

कृतज्ञता प्रकट की।

"इसमें मेहरबानी की क्या बात। यह तो जिसकी चीज है उसी को वापिस करना हुआ।" लालकुंअरि ने स्वाभाविक स्वर में कहा।

"मतलब ?" आश्चर्यपूर्ण स्वर में जहाँदारशाह ने प्रश्न किया।

"मेरे पास जो कुछ भी है, वह सब आपका ही दिया हुआ तो है।"

"मैंने तो तुम्हें कुछ भी नहीं दिया है, बल्कि लिया ही है।"

"यही तो आपकी इज्जत अफजाई है कि सब कुछ देकर भी यही समझ रहे हैं कि कुछ भी नहीं दिया। इसके बावजूद जो कुछ भी मेरे पास है वह आप बादशाह के रिश्ते मुझे रियाया समझ कर लेने का हक रखते हैं।"

जुल्फिकार खाँ अभी तक केवल लालकुंअरि के बाह्य सौंदर्य से ही प्रभावित हो सके थे, परन्तु इस बात के द्वारा उनकी उदारता तथा त्याग की भावना का भी परिचय प्राप्त कर लिया जिससे उन्हें यह समझने में देर न लगी कि इस स्त्री में केवल बाह्य सौंदर्य, बौद्धिक कौशल तथा संगीत-मय वाणी ही नहीं है वरन् एक उदार हृदय भी है। ज्यों-ज्यों वार्तालाप बढ़ता जा रहा था त्यों-त्यों वह उनके विभिन्न गुणों की जानकारी प्राप्त करते जा रहे थे।

लालकुंअरि की बात सुनकर जहाँदारशाह भला कब चुप बैठने वाले थे। उन्होंने अपने को और अधिक विनम्र प्रदर्शित करने का उपक्रम किया, "जब बादशाह होऊँ तब न।"

"तो क्या खाँ साहब की बात पर आपको यकीन नहीं आया ?"

"यकीन न करने की कोई वजह नजर तो नहीं आती।"

"आप भी कमाल कर रही हैं। शाहजादा साहब का दिल तो इस बात का कभी का मन्जूर कर चुका है, मगर जबान से नहीं कहना चाहते हैं।" खाँ साहब ने मुस्कराते हुये कहा।

"आप ठीक ही फरमा रहे हैं, खाँ साहब।" लालकुंअरि ने अपनी स्वीकृति प्रदान की।

खां साहव को अपने उद्देश्य में सफलता प्राप्त हो चुकी थी। अब वह व्यर्थ में समय नष्ट नहीं करना चाहते थे, अतएव उन्होंने उठते हुये कहा "फिर मुझे इजाजत दीजिये।"

"वाह, खां साहव, वाह! आप कैसी वात कर रहे हैं। इतनी रात गये आप कैसे जाने की सोच रहे हैं। शायद आप सोचते होंगे कि यहां रात में ठहरना ठीक नहीं।" लालकुंअरि ने शरारत भरी मुस्कान के साथ कहा।

"नहीं, ऐसी वात नहीं है। किस्मत इतनी अच्छी नहीं कि आप जैसे लोगों की सोहवत हासिल कर सकूं।"

"आजमा कर देख लीजिये न।" पुनः मुस्कान विखेरती हुई लाल-कुंअरि वोलीं।

"इस वक्त तो मेरा डेरे पर हाजिर रहना निहायत जरूरी है। फिर कभी किस्मत आजमाऊँगा।" कहकर खाँ साहव उठ खड़े हुये। उनके साथ वे दोनों भी उठ खड़े हुये। लालकुंअरि ने उठते हुये कहा, "दिल तो नहीं चाहता कि आपको यहाँ से जाने दूँ। मगर जव कोई रुकना ही नहीं चाहता तो मजबूरी है।"

"मैं जल्दी ही आकर आप लोगों को वहाँ की खवर दूंगा। और फिर अव तो आपके विना काम भी नहीं चल सकता।" खाँ साहव ने कमरा पार कर आगे बढ़ते हुये कहा।

"इतनी ज्यादा तरजीह न दीजिये।"

"यह चीज किसी को किसी के देने से नहीं हासिल होती, वल्कि खुद ब-खुद हासिल की जाती है। अच्छा तो अव मैं चला।" कह कर खाँ साहव ने मुड़ते हुये जहांदारशाह को अभिवादन किया और नीचे उतर गये।

खां साहव के विदा होने के पश्चात दोनों कक्ष में लौट आये।

O

एक मास की यात्रा के पश्चात् अजीमुश्शान ने दिल्ली नगर में प्रवेश किया। शहन्शाह की मृत्यु की सूचना जनता को प्राप्त हो चुकी थी। कुछ राजकर्मचारी पहले से ही दिल्ली आ चुके थे, जिन्हें दरबार की व्यवस्था का भार सौंपा गया था। नगर की जनता शहन्शाह की मृत्यु से दुखी हुई थी, लेकिन धीरे-धीरे वह अवस्था भी समाप्त होने लगी। सुख और दुख की अनुभूति अन्योन्याश्रित है। एक के अस्तित्व का आभास दूसरे की अनुपस्थिति में ही होता है। एक का अभाव दूसरे की सुप्तावस्था है। इन्हीं दोनों के बीच जीवन झूला करता है और इनकी चरमावस्था ही मृत्यु है। नगर की जो जनता अपने प्रिय सम्राट के लिये एक मास तक अविरल शोक-सागर में निमग्न रही, आज भावी सम्राट के राज्यारोहण की खुशी में अतीव आनन्द का अनुभव कर रही थी। वाह रे मानव! तेरी गति विचित्र है। इतनी शीघ्र अपने विगत जीवन को विस्मृत कर देता है। ठीक भी है। विस्मृति ही मानव-सुख का एक मात्र आधार है। यदि स्मृति पटल पर मानव जीवन की समस्त विगत घटनायें अंकित रहतीं तो उसका जीवन नर्क बन जाता, और फिर, उस दशा में उसको अपने जीवन के प्रति इतना अनुराग न रहता जितना आज है। विस्मृति मानव के लिये बहुत बड़ा वरदान है जिसे मनुष्य अपने अञ्चल में छिपाये जीवन के अज्ञात मार्ग पर गन्तव्यहीन पथिक की भाँति अविरल अग्रसर हो रहा है।

भुवन भास्कर का नेत्रोन्मीलन हुआ। प्रकृति मुस्करा उठी। समस्त वातावरण उल्लसित हो गया। पक्षियों का संगीतमय कलरव उषा आगमन का स्वागत करने लगा। नगर की जनता धीरे-धीरे नवीन सम्राट के राज्यारोहण के दृश्य को देखने के हेतु किले के समक्ष विशाल मैदान

एकत्र होने लगी। नगर की छटा निराली थी। नगर को सुन्दर बनाने में सौन्दर्य-वृद्धि के समस्त प्रसाधनों का प्रयोग बड़ी सतर्कतापूर्वक किया गया था। सर्वत्र चहल-पहल थी। राजकीय कर्मचारी नवीन सज-धज के साथ अपने अश्वों पर आरूढ़ होकर प्रबन्धार्थ राज-मार्गों पर इधर-से-उधर चक्कर लगा रहे थे और अपने अधिकार-प्रदर्शन से जनता को आतंकित करके शान्ति स्थापित करने का असफल प्रयास कर रहे थे।

भावी सम्राट ही लोगों की चर्चा का विषय था। उसकी जिन बातों की कल तक आलोचना हुआ करती थी उन्हीं में विशेषता ढूंढ़ने में लोग अपने मस्तिष्क को व्यायाम करा रहे थे। गुणों और दोषों के नीर-क्षीर की भाँति विवेक द्वारा विभेद स्पष्ट करने की भावना रखते हुए भी जाल की भाँति फैले हुये राजकीय गुप्तचरों के भय से मन के प्रतिकूल ही आचरण कर रहे थे। बुद्धिवादी वर्ग भावी सम्राट की प्रशंसा करने में अपना गौरव समझ रहा था। यहाँ एक वर्ग ऐसा भी था जो विरोधी भावना से आन्दोलित था, लेकिन प्रतिकूल अवसर समझ कर वह शान्त था। सभी लोग किले की ओर उन्मुख थे। दूर तक दृष्टि डालने पर कुछ गति प्रतीत होती थी, लेकिन किले के पास भीड़ ने स्थिरता धारण कर ली थी।

कुछ समयोपरान्त राज्यारोहण कार्य के प्रारम्भ होने की सूचना दी गई। अजीमुश्शान के आगमन की सूचना पाकर दरबार में बैठे सभी सभासद उठ खड़े हुये। भावी शासक का आगमन बड़ी ही शान-शौकत के साथ हुआ। उनका अनुसरण करने वाले कर्मचारी 'शहन्शाह अजीमुश्शान जिन्दाबाद' के नारे से वायु-मण्डल को गुञ्जायमान कर रहे थे। अजीमुश्शान राजगद्दी पर आकर विराजमान हुआ। तत्पश्चात् राज्यारोहण का सम्पूर्ण कार्यक्रम विधिवत् पूर्व परम्परानुसार निर्विघ्न सम्पादित किया गया। विशिष्ट नागरिक बहुमूल्य उपहार लेकर बादशाह की सेवा में उपस्थित हुये। बादशाह की मुस्कान स्वीकृति का कार्य कर रही थी। समस्त सभासदों का परिचय प्राप्त करने के पश्चात् अजीमुश्शान ने मुनीम खां द्वारा पूर्व निर्धारित योजनानुसार राज्य-सेवकों को

उनकी राज-भक्ति के लिये नवीन उपाधियों से विभूषित किया और सभी ने नतमस्तक होकर कृतज्ञता व्यक्त की।

जनता बाहर खड़ी हुई अजीमुश्शान को सम्राट के रूप में देखने के लिये बेचैन हो रही थी, जिसके परिणामस्वरूप कुछ अशान्ति के चिह्न भी दृष्टि-गोचर होने लगे थे। मुनीम खां ने अवसर की आवश्यकता को समझ कर बादशाह से नम्र शब्दों में निवेदन किया, "रियाया हुजूर की जियारत के लिये सुबह से बेताब है।"

मुनीम खां के निवेदन को आज्ञा समझ कर किले की दीवार पर जनता को दर्शन देने के लिये वह चल दिया। जनता ने सामने बादशाह को देख कर उसके नाम के नारे लगा कर अपनी प्रसन्नता व्यक्त की। मुनीम खां ने हाथ उठा कर जनता को शान्त होने का संकेत किया। जनता का स्वर धीरे-धीरे क्षीण होता चला गया। तत्पश्चात अजीमुश्शान ने जनता को सम्बोधित करते हुये कहा, "आप लोग जिसे आज बादशाह की शक्ल में देख रहे हैं, वह कल तक आप ही लोगों के साथ घूमने फिरने वाला था। मैं आज हिन्दुस्तान का बादशाह हो गया हूं, इसके माने यह नहीं हैं कि हमारा और आप लोगों का पुराना रिश्ता खत्म हो गया। उस रिश्ते में थोड़ा फर्क जरूर आ गया है, और मुल्क के अमनोचैन का ख्याल रखते हुये उस रिश्ते को भी नजरन्दाज किया जायगा। इन्साफ सबके लिये एक-सा होगा। कानून की नजर में सभी अमीर-गरीब बराबर होंगे। हिन्दू और मुसलमान दोनों ही अपने मजहब के लिये आजाद रहेंगे।" कह कर अजीमुश्शान शान्त हो गया।

बादशाह के भाषण के पश्चात् मुनीम खां ने संक्षेप में बादशाह को प्रसन्न करने के लिये जनता को सम्बोधित करते हुये कहा, "बाबर की बहादुरी अकबर की मजहबी दरियादिली और जहांगीर की इन्साफ पसंदगी की मिली-जुली शक्ल आप को हमारे मौजूदा शहन्शाह में देखने को मिलेगी।"

इसके बाद बादशाह ने मुनीम खां के साथ वहां से प्रस्थान किया। जनता भी दिये गये भाषणों पर अपना अभिमत व्यक्त करती हुई धीरे-धीरे

सरकने लगी। स्थान-स्थान पर विभिन्न स्थानों से आये हुये कलाकारों ने अपनी-अपनी कला का प्रदर्शन करना प्रारम्भ कर दिया था जिसने जनता के ध्यान को आकर्षित किया। कई दिनों तक जनता राज्योत्सवों में आनन्द लेती रही।



जहाँदारशाह के साथ वार्तालाप करन के पश्चात् जुल्फिकार खाँ डेरे पर वापस लौट आये थे। रात काफी व्यतीत हो चुकी थी। मुनीम खाँ के डेरे पर चलते हुये विचार-विमर्श की सूचना उन्हें उनसे एक व्यक्ति द्वारा मिल गई थी। भावी कार्य-क्रम के विषय में उन्हें सभी बातें एक ऐसे व्यक्ति द्वारा प्राप्त हो गई थीं जो मुनीम खाँ का भी विश्वास पात्र था। खाँ साहब भी अपने डेरे में गये। कुछ विश्वस्त व्यक्तियों को साथ लेकर अपनी भावी योजनाओं पर विचार-विमर्श प्रारम्भ कर दिया। इसी वार्तालाप के मध्य यह निश्चित हुआ कि बादशाह के अन्य दोनों शाहजादों को भी बुला लिया जाय। ऐसा निर्णय होने के पश्चात् दोनों शाहजादों को बुलाने के लिये कुछ व्यक्तियों को आवश्यक निर्देश के साथ रवाना किया गया।

सूचना पाकर दोनों शाहजादे रफीउश्शान और जहानशाह अपनी-अपनी फौज लेकर लाहौर की ओर चल दिये। उन्हें लाहौर में ही बादशाह की चिन्ताजनक हालत की सूचना प्राप्त हुई थी। अतएव प्रत्येक अपने को ही एक मात्र उत्तराधिकारी समझ कर तीव्रगति से चल पड़ा था। जहानशाह अधिक फुर्तीला तथा जोशीला था। उसमें अदम्य उत्साह था। वह अपनी समस्त सेना

सहित रफीउश्शान के दो दिन पूर्व ही नगर में आ उपस्थित हुआ। खां साहब ने आगे बढ़कर शाहजादे का स्वागत किया। जहानशाह ने खां साहब को पहचानते ही मुस्करा कर कहा, "आप ने अब्बा हुजूर की बीमारी की खबर देकर मुझ पर बड़ा अहसान किया है।"

"यह आप क्या कह रहे हैं। यह तो मेरा फर्ज था। यही तो एक ऐसा मौका होता है जिसका नौजवान शाहजादे बड़ी बेसब्री से इन्तजार करते हैं, मगर आप जरा ………।"

"हां-हां, कहिये ! आप रुक क्यों गये ?" उत्सुकता-पूर्वक जहानशाह ने पूछा।

"आप को आने में कुछ देर हो गई।" सिर झुकाये हुये खां साहब ने कहा।

"खैरियत तो है ?" घोड़े से उतर शाहजादे ने पूछा।

खां साहब कुछ न बोले।

"आपकी खामोशी से साफ जाहिर है कि शायद अब्बाहुजूर अब इस दुनियां में नहीं रहे ?"

"जी हां ! आज से तीन दिन पहले ही उनकी………।"

"बस, समझ गया। अब मुझे यहां नहीं रुकना चाहिए। जल्दी से दिल्ली पहुंचना है।"

"किसलिये ?"

"वाह ! यह भी कोई पूछने की बात है। तख्त पर बैठना है और किसलिए।"

"मगर वहां जब तक आप पहुंचेंगे तब तक अजीमुश्शान तख्त पर बैठ चुकेंगे।"

"तब तो मुझे वहां पहुंचने में और भी जल्दी करनी चाहिये।"

"आप को जहां जल्दी पहुंचना चाहिए था वहां तो आप देर से पहुचे और जहां जल्दी पहुंचने में खतरे की गुञ्जाइश है, वहां पहुंचने में आप

जल्दी कर रहे हैं।"

"देर से पहुंचने की एक वार गल्ती कर चुका हू। दुवारा उस गल्ती का शिकार नहीं होना चाहता।"

"आपका ख्याल दुरुस्त है, मगर वक्त वक्त की वात होती है। जो वात किसी वक्त पर ठीक हो सकती है वह दूसरे वक्त पर नुकसान पहुंचा सकती है, लिहाजा आपको वहाँ जाने से पहले वहाँ की हालत पर गौर कर लेना चाहिए।

शाहजादा की अभी अपरिपक्वा अवस्था थी। अनुभव शून्यता के कारण निर्णयों को स्थायित्व नहीं मिल पाता था। खाँ साहव की वात सुनकर वह कुछ विचार करने लगा। खाँ साहव भला ऐसे नाजुक अवसरों पर कव चूकने वाले थे। उन्होंने शाहजादे की मानसिक अवस्था का लाभ उठाते हुए कहा, "मेरे ख्याल से तो आप कुछ दिन यहाँ रुकें। कुछ और फौज जमा करें, क्योंकि वहाँ जाकर आपको शाही फौजों का समना करना पड़ेगा। शाही फौजों का सामना आप अपने थोड़े से नौजवानों की मदद से नहीं कर सकते हैं।"

"आप वजा फरमा रहे हैं। ऐसा ही करूंगा, मगर फौज कैसे वढ़ायी जायगी?"

"इसकी आप फिक्र न करिये। इसका इन्तजाम आप मेरे ऊपर छोड़ दीजिये।"

"आप कैसे करेंगे यह सव?"

"मैंने एक ऐसी तरकीव सोची है, जिससे साँप भी मर जाय और लाठी भी न टूटे। आपको वादशाहत भी हासिल हो जायेगी और परेशान भी न होना पड़ेगा।"

"वह क्या है?"

"चलिये डेरे पर चलकर इतमीनान से वैठिये। फिर, इस वारे में वातें होंगी।"

शाहजादा खां साहब के साथ हो लिया। डेरा वहां से थोडी ही दूर पर था। खां साहब ने पहिले से ही सब प्रबन्ध कर रखा था। डेरे में आराम से बैठने के पश्चात् शाहजादे ने पूछा, "हां, जरा बताइये तो वह अपनी तरकीब ?"

"दरअसल, बात यह है कि मुगलिया सल्तनत इस वक्त काफी खतरे में है। इस वक्त एक ऐसे हुक्मरां की जरूरत है जो उसकी चारों तरफ फैले हुये दुश्मनो से हिफाजत कर सके। वक्त की जरूरत को देखते हुये सिर्फ आपही उसके काबिल है।"

"किसके काबिल ?"

"तख्त के।"

"क्यों, आपने यह कैसे समझ लिया कि मैं ही इस वक्त तख्त के काबिल हूं ?"

"मैं क्या हर आदमी इस बात से वाकिफ है कि आप जैसा बहादुर अक्लमन्द शाहजादा दूसरा नहीं।"

खां साहब मानव-स्वभाव के अच्छे जानकार थे। शाहजादे को अपने पक्ष मे करना चाहते थे। उन्होने उसकी प्रशसा की। खां साहब के मुंह से अपनी तारीफ सुनकर शाहजादे का मन प्रसन्न हो गया। प्रसन्नतापूर्ण स्वर में शाहजादे ने कहा, "वाकई, खां साहब आप है आला दर्जे के इन्सान। मैंने आपके अन्दर वह चीज देखी है जिसे मैंने किसी मे नही पाया।"

"वह क्या ?" खां साहब ने पूछा।

"यही कि आप इन्सान को परखने मे उस्ताद है। कौन किस काबिल है, इसका फैसला आला दर्जे का होता है।"

"ऐसा तो मैंने कोई फैसला नही किया।"

"आपने अभी मुझे बादशाहत के काबिल नही समझा ?"

शाहजादे की बात सुनकर खां साहब को हंसी आ गई, परन्तु हंसी पर नियन्त्रण पाते हुए उन्होने कहा, "उसे आप मेरा फैसला कहते है ?"

"नहीं तो और किसका है ?"

"यह मेरा ही नहीं बल्कि मेरी सारी फौज भी यही चाहती है।"

"तो क्या आपके पास भी फौज है ?"

"जी हां, कुछ थोड़े से जवान हैं।"

"तब तो चलो अच्छा रहेगा। मेरी और आपकी फौज मिलकर शाही फौज को मात दे सकेगी।"

"इतने से ही काम नहीं चलने का। और भी फ़ौज के लिये मैंने एक तरकीब सोची है।"

"अरे हां ! आपने वह तरकीब तो बताई ही नहीं ?"

"आपके सबसे बड़े भाईजान यहीं इसी शहर में मौजूद हैं।"

"क्या कहा, जहाँदारशाह यहां मौजूद हैं ?"

"हां ! वह यहीं मौजूद हैं और उस वक्त भी यही मौजूद थे जब आपके वा। हुजूर ने आखिरी सांस ली थी।"

"फिर, उन्होंने तख्त हासिल करने की कोशिश क्यों नहीं की ?"

"ऐसा न करने का सबब यह था कि उनके पास अजीमुश्शान का सामना करने की ताकत नहीं थी। अजीमुश्शान के साथ शाही फौज और खजाना था। मैं चाहता हूं कि आपको तख्त हासिल कराने में उनसे मदद क्यों न ली जाय ?"

"वह क्या मदद कर सकेंगे। अगर उनके पास मदद कर सकने की ही गुन्जाइश होती तो वह खुद बादशाहत न हासिल कर लेते।"

"आप ठीक फरमा रहे हैं। उनके पास लड़ने के लिए फौज नहीं है और दौलत भी नहीं है, मगर उनका एक ऐसी तवाइफ से ताल्लुक है जिसके पास इन्तहा दौलत है। उसकी दौलत से फौज तैयार की जा सकती है।"

"मगर वह दौलत क्यों देने लगी ?"

"उसकी फिक्र आप मत करिये। मैं सब ठीक कर लूंगा।

"फिर, ठीक है। आप, जो ठीक समझिये, करिये। मुझसे आप जो

कुछ कहेंगे मैं हरदम करने को तैयार रहूंगा।"

"फिर, आप यहीं आराम करिये। मैंने आप के आराम का सारा इन्तजाम कर दिया है। आपको यहाँ कोई भी तकलीफ नहीं होगी। अगर कोई बात हो तो मुझे बुलवा लीजियेगा। वैसे, मैं तो खुद ही मिलता रहूंगा।"

"आप क्यों तकलीफ करियेगा। आप मुझे जहाँ कहिये वहीं आ जाया करूं।"

"वाह! हिन्दुस्तान का होने वाला बादशाह एक मामूली सरदार से मिलने जायेगा।"

"तो क्या हुआ?"

"नहीं, आप हमारे मेहमान हैं। आपकी खिदमत में हाजिरी देना हमारा फर्ज है। अच्छा, खैर! अब मैं चलता हूं। फिर मिलूंगा।" इतना कहकर खाँ साहब वहां से चल दिये।

०

दो दिन पश्चात रफीउश्शान ने भी लाहौर में प्रवेश किया। खाँ साहब ने उस शाहजादे का भी उसी प्रकार आगे बढ़ कर स्वागत किया। जीवन भर तिरस्कृत रहने वाला शाहजादा एक प्रभावशाली सरदार द्वारा सम्मान पाकर फूला न समाया। मस्तक पर बल डालते हुये शाहजादे ने पूछा, "कहिए, खाँ साहब! मुझे लेने क्या सिर्फ आप ही आये हैं? और शाही

सेना के सब सरदार कहाँ रह गये ?"

"वे सब दिल्ली रवाना हो गये।"

"क्यों, मेरे आने के पहले ही दिल्ली रवाना हो गये ?" पालकी में वह आराम से लेटा हुआ था। जरा सा उचकते हुये उसने पूछा, "मेरा इन्तजार क्य नहीं किया ?"

"इधर शहंशाह ने दम तोड़ा और उधर अजीमुश्शान शाही सेना के साथ दिल्ली को रवाना हो गये।"

"खैर, अब्बाजान अगर जन्नत-नशीन हो गये तो कोई बात नहीं, क्यों कि उन्हें मरना ही था, मगर मुझे तो इस बात पर ताज्जुब हो रहा है कि मुझे छोड़ कर अजीमुश्शान चला कैसे गया ?"

"आपको ही सिर्फ नहीं छोड़ गया है, जहाँदारशाह और जहानशाह भी यहीं मौजूद हैं।"

"अरे बाप रे ! क्या जहानशाह भी यहीं मौजूद है ?"

"जी हाँ ! वह आप से दो दिन पहले ही आ गये हैं।"

"तब तो मुझे यहाँ से खिसकना चाहिए।"

"क्यों ?"

"जहानशाह बड़ा ही जालिम है। उसकी शेर की सी शोले बरसाती हुई आंखें और उसकी तलवार की चमक जब मुझे याद आती है तो मेरी रूह फना हो जाती है। कहीं ऐसा न हो कि उसका और मेरा सामना हो जाय। उस बार तो मैं जान बचाकर भाग खड़ा हुआ था। अब की वह मुझे जिन्दा नहीं छोड़ेगा।"

"यह आप क्या फरमा रहे हैं ?"

"मैं जो कुछ कह रहा हूं, ठीक ही कह रहा हूं। उसकी शक्ल में मुझे अपनी मौत नजर आने लगती है। पता नहीं किस वक्त वह मेरी गरदन धड़ से अलग कर दे। अब मैं यहाँ जरा देर भी नहीं रुक सकता।"

"मगर इस वक्त आप जायेंगे कहाँ ?"

"मैं सीधे दिल्ली को कूच करूँगा।"

"मैं सल्तनत में से अपना हिस्सा लेकर अमनों चैन की जिन्दगी गुजारूंगा।"

"आप शायद ख्वाब देख रहे हैं।"

"वाह खाँ साहब ! आप भी कमाल करते हैं। भला दिन में भी कोई ख्वाब देखता है ?"

"कोई देखता हो या न देखता हो, मगर आप जरूर देखते हैं।"

"मैं तो ख्वाब नहीं देख रहा हूँ। हाँ, शायद आप ख्वाब में बातें जरूर कर रहे हैं।"

"जी नहीं, शाहजादा साहब ! आप जरा होश से काम लीजिये। आपको अजीमुश्शान से ज्यादा खतरा है।"

"क्या कहा आपने ? मुझे अजीमुश्शान से ज्यादा खतरा है ?"

"जी हाँ ! इस वक्त वह पूरे हिन्दुस्तान के बादशाह हैं। उनके साथ फौजी ताकत है। जो कोई भी उनके सामने जायगा, उसको बिना जान लिए वह न छोड़ेंगे।"

"ऐसा कभी नहीं हो सकता। उसने मुझे हुकूमत में हिस्सा देने का वायदा किया था और मुझे पूरा यकीन है कि वह अपना वायदा जरूर पूरा करेगा।"

खाँ साहब ने समझ लिया कि इस प्रकार इसे रास्ते पर नहीं लाया जा सकता, अतएव उन्होंने एक चाल खेली और शाहजादे से कहा, "क्या आप पूरी सल्तनत पर हुकूमत नहीं करना चाहते हैं ?"

"क्यों नहीं, कौन होगा जो यह न चाहेगा।"

"तो आप मेरे साथ आइये। मैं आपको पूरी सल्तनत का बादशाह बनवाऊँगा।"

"कैसे ?"

"हम लोग मिल कर दिल्ली पर हमला करेंगे और शाहे[illegible] को

शिकस्त देते ही बादशाहत आपके हाथ में होगी।"

"मैं लड़ने-झगड़ने का झंझट नहीं पालना चाहता।"

"आपको लड़ने से क्या मतलब। लड़ेंगे तो हम और आपके भाई। आप तो सिर्फ फतह के बाद तख्त पर बैठने के लिए हैं।"

"फिर जंग में तो मुझे नहीं जाना पड़ेगा?"

"कतई नहीं। आपको जंग में जाने से क्या मतलब। जब तक हम लोग जंग करेंगे तब तक आप अपना दिल बहलाव किया करिएगा।"

"नाचने-गाने वाले तो मेरे साथ हैं ही।"

"उनका साथ भला कैसे छूट सकता है।"

"अच्छा तो मेरे ठहरने का इन्तजाम करो। इधर कई दिनों से महफिल ठीक से जम नहीं पाई है।"

"आइए, उसका इन्तजाम तो मैंने पहिले से ही कर रखा है।"

खाँ साहब ने अपना घोड़ा आगे बढ़ा दिया और शाहजादे की डोली पीछे-पीछे चलने लगी। खाँ साहब ने नियत स्थान पर उसके लिए भी डेरा लगवा रखा था।

O

खाँ साहब ने दौड़-धूप करके तीनों शाहजादों को अपने अधिकार में कर लिया। जब तीनों चीतों को एक ही खूंटे में बांध लिया तब पूर्व निश्चित कार्य--क्रम के अनुसार एक संध्या समय लालकुंअरि की कोठी

में दोनों शाहज़ादों के साथ आ उपस्थित हुए। लालकुँअरि ने उनका यथोचित सम्मान किया। आदर पूर्वक बैठाया। खाँ साहब ने वार्तालाप प्रारम्भ करने के उद्देश्य से चेहरे पर स्वाभाविक मुस्कान लाते हुये कहा, "आज मैं पहली मरतबा तीनों शाहज़ादों को एक साथ बैठे देख रहा हूं।"

"यह सब आपकी मेहर–बानी है।" लालकुँअरि ने मधुर हास्य बिखेरते हुए कहा। दोनों शाहजादे उसकी संगीतमयी वाणी से आत्म-विभोर होकर मंत्रमुग्ध उसे निहारने लगे।

खाँ साहब ने कहा, "यह तो मेरा फर्ज था।"

"इस दुनियां में अब कितने लोग ऐसे रह गये हैं जो अपने फर्ज को अहमियत देते हैं। आप जैसे ही कुछ लोग हैं जिनके सहारे यह दुनियाँ कायम है, वरना अब तक न जाने कब यह खत्म हो गयी होती।"

"अगर किसी को अपनी तारीफ करानी हो तो आप से कहे।" खाँ साहब ने कहा।

"इसमें तारीफ की क्या बात है। जो असलियत है, उसे आप लोगों के सामने रख दी। अगर यह महज तारीफ है तो फिर असलियत क्या है? क्या आप बताने की तकलीफ गवारा करेंगे?" खाँ साहब की ओर उन्मुख होकर लालकुँअरि ने पूछा।

"आपसे तो बहस करने का मतलब है अपनी हार मान लेना।"

"मात देने का यह रास्ता आपने बड़ा अच्छा अख्तियार किया है।"

"मुझे आपसे मात मंजूर है।" कह कर खाँ साहब ने अर्थपूर्ण दृष्टि से उनकी ओर देख कर सिर झुका लिया। इस पराजय में भी विजय का भाव चेहरे से झलकने लगा था।

दोनों शाहजादों ने यह अनुभव कर लिया था कि जब खाँ साहब ऐसे चतुर आदमी इस औरत से मात खा सकते हैं तो उनकी क्या गिनती। वाकई, यह कोई बहुत ही ऊँचे दर्जे की औरत है। खाँ साहब ने सिर उठा कर कहा, "आप लोगों से मैंने इनकी तारीफ तो की है ... इस

शहर की वेहतरीन रक्कासा हैं । आपका मुकावला करने वाला इस शह में क्या शायद हिन्दुस्तान में भी कोई मुश्किल से ही मिले ।"

"तव तो हमारी और आपकी खूब निभेगी । जम जाय महफिल ।" रफीउश्शान ने उमंग के साथ लालकुँअरि को आमन्त्रित किया ।

"किसी और दिन जमाना अपनी महफिल । आज जिस काम के लिये हम लोग इकट्ठा हुये हैं उसे पहले तय होने दो ।" डाँट के स्वर में जहानशाह ने कहा ।

जहानशाह के स्वर को सुनकर वह इतना डर गया कि उचक पड़ा और खिसक कर दो हाथ दूर हो गया । वह विस्फारित नेत्रों से इधर-उधर देखने लगा और यह प्रतीक्षा करने लगा कि जहानशाह अव क्या करेगा परन्तु जहानशाह अपनी वात कह कर शान्त हो गया था । खाँ साहव ने सभी शाहजादों के स्वभाव का अच्छा परिचय प्राप्त कर लिया था । अतएव परिस्थिति को न विगड़ने देने के अभिप्राय से उन्होंने कहा, "वाकई, आप वजा फरमा रहे हैं । यह वक्त महफिल के जमने का नहीं है । इस वक्त तो हमें मुसीवत से आजाद होने की तरकीव सोचनी है ।" कुछ रुक कर एक दफा मैंने वातों-ही-वातों में अजीमुश्शान से यह वात चलाई थी कि शहन्शाह के वाद सल्तनत वरावर-वरावर चारों भाइयों में वाँट ली जायगी । मेरी इस वात को सुनकर उनके दिमाग का पारा सातवें आसमान पर पहुँच गया और कहने लगे, "मुझसे जैसा मुनीम खाँ कहेंगे वैसा मैं करूंगा । आपको क्यों इसकी फिक्र है ?" तव से मैं खामोश हूं । मैंने फिर कभी इस वावत एक लफ्ज भी नहीं कहा ।"

"आपने तो, इन्सानियत के नाते जो कहना था, कह दिया । फिर भी, मैं समझती हूं कि आपने अपनी ज़ुवान से उनके सामने ऐसी वात निकाल कर कम खतरा मोल नहीं लिया था ।" लालकुँअरि ने खाँ साहव के दुस्साहस की प्रशंसा की ।

"फर्ज के सामने मैं खतरे की जरा भी परवाह नहीं करता ।"

"वाकई, अगर, किसी को इन्सानियत का सबक सीखना हो तो आप से सीखे।" लालकुँअरि ने पुनः अवसर का लाभ उठाया।

"यह तो खाँ साहब के सरीखे इन्सानों में ही देखने को मिलता है, जो दूसरों के खातिर अपनी जान तक खतरे में डाल देते हैं।" जहानशाह ने जरा सा आगे खिसकते हुए कहा।

खाँ साहब की दृष्टि में लालकुँअरि का महत्व बढ़ता ही जा रहा था। उनके मुँह से अपनी प्रशंसा सुनकर वह फूले नहीं समा रहे थे, परन्तु उस खुशी के प्रति उपेक्षा का भाव प्रदर्शित करते हुए उन्होंने कहा, "खैर, छोड़िये इन बातों को। अब तो हमें आगे क्या करना है, इस पर गौर करना है।"

"नहीं, अब जरूरत सिर्फ इसकी है कि सब लोगों को मिलकर दिल्ली पर हमला बोल देना है।" जहानशाह ने अपनी उग्र प्रकृति का परिचय दिया।

"इसके अलावा और दूसरा कोई रास्ता भी तो नजर नहीं आता" खाँ साहब ने निर्णय व्यक्त किया।

"फिर, वक्त बरबाद करने से क्या फायदा। अभी तैयारी शुरू कर दी जाय।" अपनी बात का विरोध न होते देख अजीमुश्शान ने जोश के साथ कहा।

"मगर एक बात तो अभी तय ही नहीं हुई।"

"वह क्या ?"

"अजीमुश्शान को शिकस्त देने के बाद सल्तनत और लूटे हुये माल का बटवारा किस तरह होगा ?" खाँ साहब ने प्रस्ताव रखा।

खाँ साहब की बात सुनकर सभी शान्त हो गये। प्रत्येक इसलिए चुप नहीं था कि बोलना नहीं चाहता था, वरन इसलिए कि सभी इस बात से पूर्व परिचित थे। क्योंकि खाँ साहब ने अपनी योजना प्रत्येक को अलग-अलग समझा दी थी। एक ही बात को उन्होंने अलग-अलग

कही थी। उन्होंने प्रत्येक शाहजादे को सम्पूर्ण साम्राज्य का शासक बनाने का वचन दिया था। प्रत्येक ने खाँ साहब की बात का पूर्ण विश्वास कर लिया था, लेकिन यह किसी को भी नहीं ज्ञात था कि उन्होंने वही बात दूसरे से भी कही है जो एक से कही है। प्रत्येक शाहजादा उस समय सोच रहा था कि खाँ साहब ने वही बात कही है जो इन्होंने एकान्त में मुझसे कही थी। खाँ साहब की चाल इतनी गहरी थी कि उसका अनुमान कोई भी नहीं लगा पा रहा था कि इस बात से प्रत्येक शाहजादा अवगत है। कोई कुछ भी हस्तक्षेप कर खाँ साहब का विरोधी नहीं बनना चाहता था। परन्तु सभी को शान्त देखकर जहानशाह से न रहा गया और वह बोल उठा, "इसकी बाबत भी अगर आपही अपनी राय जाहिर कर दें तो निहायत अच्छा हो।"

"यह आप लोगों के बीच का मसला है। बेहतर होगा, इसे आप लोग ही आपस में तय कर लें।" खाँ साहब ने तटस्थता व्यक्त की।

"क्या आप अपने को गैर समझ रहे हैं ? मैं तो आपको इन लोगों के साथ देखकर पाँचवां शाहजादा समझ रही हूं।" लालकुँअरि ने सस्मित कहा।

"आप जरूरत से ज्यादा मुझे इज्जत दे रही हैं।" खाँ साहब ने ससंकोच कहा।

"आप यह क्यों नहीं कह रहे हैं कि जितनी इज्जत आपकी लोगों से मिलनी चाहिए दे नहीं पा रहे हैं।"

"ऐसा कहकर तो आप मुझे शर्मिंदा कर रही हैं।"

"अरे, यह तो आज ही मालूम हुआ कि मर्दों को भी शर्म लगती है। वह तो औरतों को ही जेब देता है। आपने कब से इसे अख्तियार कर लिया ?"

लालकुँअरि का प्रहार अचूक था। उनके इस वाक्प्रहार को सुनकर जहांदारशाह भी, जो अभी तक मौन बैठे थे, हँस पड़े। समस्त वातावरण

हास्य से गूंज उठा। खाँ साहब का चेहरा लाल हो गया। वास्तव में वह लालकुंअरि से हर बार मात खाते आ रहे थे। खाँ साहब को इस स्थिति से उबारने की दृष्टि से लालकुंअरि ने कहा, "अब बच नहीं सकते। आपको इस बारे में अपनी बात जाहिर करनी ही पड़ेगी।"

"अगर आप लोग इस बाबत मेरी राय जानना ही चाहते हैं तो मेरी समझ में तो यह आता है कि लूट का माल तीनों लोग बराबर-बराबर बाँट लें और रही सल्तनत के बाँटने की बात सो आप लोग ही तय करिये।"

"फ़िर वही लटका छोड़ दिया आपने। अपने कुछ नखरे किसी दूसरे दिन के लिये भी तो रखिये। क्या आज ही सब दिखा दीजियेगा?" लालकुंअरि कह कर मुस्करा दी थी।

"सल्तनत का बराबर तीन हिस्सों में बाँटना है तो टेढ़ी खीर, फिर भी अगर दिल्ली के तख़्त पर आप" जहाँदारशाह की ओर संकेत करते हुये, "बैठिये, काबुल, काश्मीर, मुलतान और सिंध के सूबे आपके" रफीउश्शान को सम्बोधित करते हुये, "कब्जे में हो जांय और पूरे दक्षिणी हिस्से के आप मालिक बन जाना मंजूर कर लें तो सब मामला आसानी से हल हो सकता है।"

"खाँ साहब का निर्णय सुनने पर भी किसी ने कोई टीका-टिप्पण करने की आवश्यकता न समझी, बल्कि विश्वास और भी पुष्ट हो गया कि खाँ साहब ने इस समय भी वही बात कही जिसे इस मौके पर कहने का वायदा किया था। थोड़ी देर तक खामोशी बनी रही और सम्भवतः कोई भी इसलिये नहीं बोल पा रहा था कि कहीं दूसरे को उसके और खाँ साहब के बीच हुई बात का अंदाज न लग जाय, परन्तु जहानशाह कब तक सब्र किये रहता। वह बोल उठा, "मुझे आपकी बात मंजूर है।"

"मुझे भी कोई उज्र नहीं है।" रफीउश्शान ने कहा।

"बड़े शाहजादा साहब से भी दरयाफ़्त कर लीजिये।" लालकुंअरि ने कहा।

"आपको मंजूर है या नहीं ?" खाँ साहब ने पूछा।

"मेरे मंजूर करने या न करने से क्या होता है ?" लालकुँअरि ने निरपेक्षभाव व्यक्त किया।

"वाह ! आपकी मंजूरी ही तो शाहजादा साहब की मंजूरी है।"

"मुझे शाहजादा साहब के दिल की बात का क्या इल्म ?"

"मुझे तो कुछ ऐसा महसूस होता है कि आप की जबान से शाहजादा साहब के दिल के खिलाफ कोई भी बात निकल ही नहीं सकती।"

"बहुत खूब, खाँ साहब, बहुत खूब ! इसे कहते हैं न चूकना। खैर !" जहाँदारशाह की ओर उन्मुख हो लालकुँअरि ने कहा, "आप भी अपनी राय जाहिर कीजिये।"

इसके पहले कि जहाँदारशाह कुछ बोल सकें खाँ साहब बोल उठे, "आप बेकार शाहजादा साहब को तकलीफ दे रहीं हैं। शायद आपको मंजूर नहीं ?"

"भला इतनी बेहतरीन राय में मुझे क्या एतराज हो सकता है।" लालकुँअरि ने स्वीकृति व्यक्त कर दी।

"फिर तो इसके माने हैं कि आपको भी मंजूर है।" खाँ साहब ने स्पष्टी-करण चाहा।

"बेशक।" लालकुँअरि ने कहा।

"तब तो शायद शाहजादा साहब को भी कोई एतराज न होगा।" खाँ साहब जहाँदारशाह की ओर उन्मुख हो गये थे।

"कतई नहीं।" जहाँदारशाह मुस्करा उठे थे।

"देखा आपने, क्या कहा था मैंने, निकली न मेरी बात सही। जिसे आप मँजूर करलें उसकी खिलाफत ख्वाब में भी शाहजादा साहब नहीं कर सकते।"

लालकुँअरि का मुख-मण्डल रक्ताभ हो उठा था। इस बार खाँ साहब बाजी मार ले गये थे। उनका मस्तक गर्वोन्नित हो उठा था। उसी विजयोल्लास से उन्होंने कहा, "आपकी खामोशी से साफ जाहिर हो रहा है कि शायद आपकी

मान के खिलाफ मेरी जबान से कुछ निकल गया है।"

"तो क्या बार-बार करते ही जाइयेगा ? अब तो काफी हो चुका।" लालकुंअरि ने सिर ऊपर उठाते हुये कहा और मुस्करा दी।

"आपकी मुस्कराहट से दिल को कुछ राहत मिली वरना.........।"

"वरना तो आपका दिल डूबा ही जा रहा था।" बीच में ही लालकुंअरि बोल पड़ी।

"खैर, अब आप खुश नजर आ रहीं हैं। आज की बैठक में रौनक आपकी ही वजह से रही। अब काफी देर हो गई है। मैं तो चलता हूं। शायद आप लोग भी ....।" उठते हुये खाँ साहब ने कहा।

"जी हाँ, मैं भी साथ ही चल रहा हूं।" जहानशाह साथ उठ खड़ा हुआ। रफीउश्शान भी दोनों के उठने के बाद उठा और थोड़े फ़ासले से चलने लगा। उसके कदम इस प्रकार उठ रहे थे जिन्हें देखकर ऐसा लगता था जैसे उसे बलपूर्वक कोई मजबूरी घसीटे लिये जा रही है।



बहादुरशाह के छै पुत्र थे, जिनमें से दो उनके जीवनकाल में ही काल-कवलित हो चुके थे। अब केवल चार जहाँदारशाह अजीमुश्शान, रफीउश्शान और जहानशाह ही जीवित थे। अजीमुश्शान मुनीम खाँ की संरक्षता में दिल्ली की गद्दी पर बैठा हुआ सुख की नींद ले रहा था। वह अपने को पूर्णतया सुरक्षित समझता था। इसकी तो कल्पना भी उसके मस्तिष्क में न थी कि

शत्रु भी हो सकते हैं। सदैव वह चापलूसों से घिरा रहता था। वे उसकी प्रशंसा बढ़ा-चढ़ा कर किया करते जिसके परिणामस्वरूप उसको अपनी वास्तविक स्थिति का ज्ञान न रहने लगा। उन लोगों ने यह बात उसके मस्तिष्क में अच्छी तरह भर दी कि उसके भाइयों में इतनी शक्ति नहीं कि वे शाही सेना से टक्कर लेने का दुस्साहस करें। वे लोग भी, ऐसा बादशाह पाकर, जो कि स्वयं किसी बात को सोचने-विचारने का कष्ट ही न उठाना चाहता था, चैन की वंशी बजाने लगे थे। सर्वत्र अकर्मण्यता और आलस्य का साम्राज्य व्याप्त हो गया था।

दूसरी ओर, खां साहब की संरक्षता में तीनों शाहजादे अपना भाग्य आजमा रहे थे। प्रत्येक यही समझ रहा था कि खां साहब जो कुछ भी कर रहे हैं, वह सब उसी के लिये कर रहे हैं। उन लोगों ने खाँ साहब को नितान्त निःस्वार्थ सेवक समझ लिया था। सेना के निर्माण और संगठन का कार्य छिप्र-गति से चल रहा था। जहांदारशाह की रही-सही चिन्ता भी दूर हो चुकी थी। उनके मन में शासन प्राप्त करने की कोई विशेष अभिलाषा नहीं रह गई थी। उनकी समस्त कामनायें लालकुंअरि के रूप में मूर्त प्राप्त कर चुकी थीं। सुरा और सुन्दरी ही उनके जीवन की आकांक्षाओं की पूर्ति के लिये यथेष्ट थीं। शासन को वह केवल उन्मुक्त विलासिता का साधन मात्र समझ बैठे थे। हां, लालकुंअरि अवश्य शासन को प्राप्त करने में प्रयत्नशील प्रतीत होती थीं। खां साहब प्रायः उनके यहां आया करते थे। और दोनों बैठकर भावी योजनाओं पर घण्टों विचार-विमर्श किया करते थे। ज्यों-ज्यों समय व्यतीत हो रहा था। त्यों-त्यों खां साहब अपनत्व प्रदर्शित करने लगे थे। लाल-कुंअरि की ढील ही इसका एक मात्र कारण थी जिसमें वह पूर्णतया दक्ष थीं

रफीउश्शान सौन्दर्य प्रेमी था। दिन का अधिकांश समय वह अपने को सजाने में व्यय किया करता था। सुन्दर वस्त्रों और जवाहरातों को एकत्र करना उसके जीवन का मुख्य उद्देश्य था और इसी उद्देश्य की पूर्ति में उसने अपना जीवन व्यतीत किया था। नित्यप्रति नवीन सज-धज के साथ बाहर

निकलना और दर्शकों से अपने सौंदर्य की प्रसंशा प्राप्त करना ही उसकी कामना थी। उसके विषय में प्रसिद्ध था :—

आइना बशाना गिरिफ्ता बदस्त
चूंजने राना शुदा गेसू परस्त

लाहौर आ जाने के पश्चात् जब से उसने लालकुँअरि को देखा तब से वह अपनी सौन्दर्य-प्रियता के गर्व को खो चुका था। जब कभी वह वहाँ जाता तभी उनके साथ सिर्फ शृङ्गार सम्बन्धी वार्तालाप ही किया करता। वह भी शृङ्गार के ऐसे-ऐसे नये स्वरूप दिखाती और ढंग बताती जिनको देख और सुन कर वह दंग रह जाता। एक दिन जो कुछ उस विषय में शिक्षा ग्रहण करता, उसका अभ्यास दूसरे दिन तक किया करता। इस प्रकार सेना के संगठन तथा शासन प्राप्त करने की अभिलाषा को तिलांजलि दे वह अपना जीवन व्यतीत करने लगा था।

जहानशाह सबसे छोटा शाहजादा था, परन्तु सबसे अधिक वीर तथा साहसी था। बाल्यावस्था से ही उसे साहसपूर्ण कार्यों में आनन्द आता था। आखेट उसका प्रिय मनोरंजन था। बड़े-बड़े खूंखार पशुओं के आखेट में उसे विशेष आनन्द आता था। चिंता और भय को तो वह अपने पास फटकने न देता था। पिता के कुछ गुण उसमें बीज रूप में विद्यमान थे, लेकिन वे अभी अंकुरित नहीं हो सके थे। उनके लिये किसी ऐसे माली की आवश्यकता थी जो उनको अपने अनुभव से भलीभाँति पानी व खाद देकर उचित दिशा में पनपने में सहायक होता, परन्तु दुर्भाग्यवश उसे ऐसा कोई भी गुणवान व्यक्ति नहीं प्राप्त हो सका था। अनुभव और व्यावहारिक कौशल के अभाव में कभी-कभी वह ऐसे भी कार्य कर बैठता था जो स्वयं उसी के लिये हानिकर सिद्ध होते थे। विचार-शक्ति उसमें थी नहीं। समक्ष आये हुये कार्य को करना मात्र वह जानता था, उसका परिणाम क्या होगा, इसकी चिंता वह कभी नहीं करता

सुन्दर रमणी की भाँति वह सदैव हाथ में शीशा और कंघी लेकर अपने बाल ही सँवारा करता है।

था। वीरता के अतिरिक्त साम्राज्य को प्राप्त करने के लिये जिन बातों की आवश्यकता होती है, प्रायः उन सभी बातों का उसमें पूर्ण अभाव था।

सेना के संगठन में मुख्यरूप से खाँ साहब ही जुटे हुए थे। कभी-कभी उनके साथ में जहानशाह भी सहायक के रूप में दिखाई पड़ जाता था। दिन भर सेना की भर्ती और उनके प्रशिक्षण का कार्य चलता रहता था। संध्या समय उसी से सम्बन्धित लालकुंअरि और खाँ साहब के बीच वार्तालाप होती थी। वह सर्वप्रथम खाँ साहब की पूरी बात सुन लेतीं और फिर अपने चातुर्य कौशल से उन्हीं बातों में कुछ हेर-फेर करके अपना सुझाव भी उनके सामने प्रस्तुत कर देती थीं, जिन्हें खाँ साहब की बुद्धि मानने से इन्कार नहीं कर पाती थी। इस प्रकार उस कार्य में भी खाँ साहब लालकुंअरि को अपनी बहुत बड़ी सहयोगिनी समझ रहे थे। आर्थिक और बौद्धिक दोनों प्रकार की सहायता उनसे प्राप्त हो रही थी। रफीउश्शान और जहानशाह की सेनाओं को भी ठीक प्रकार से भावी संग्राम के लिये दक्ष कर लिया गया था। दोनों शाहजादों की दौलत भी खाँ साहब के अधिकार में आ चुकी थी। लगभग एक माह तैयारी में लग गया। सम्पूर्ण तैयारी हो जाने पर सब लोग मिलकर दिल्ली की ओर अपनी सेना लेकर रवाना हो गये।

अजीमुश्शान अव्यावहारिक तथा दीर्घसूत्री था। वह सदैव भाव जगत में विचरण किया करता था। किसी समस्या का तत्काल हल ढूंढ निकालना उसकी शक्ति के बाहर की बात थी। अपने को पूर्ण सुरक्षित समझकर वह निश्चित होकर जीवन यापन करने लगा था। चिंता यदि मनुष्य को एक ओर घुलाती है तो दूसरी ओर उसकी अनुपस्थिति उसे अकर्मण्य भी बनाती है। चिंतित अवस्था जीवन की जाग्रत अवस्था है। जाग्रत अवस्था कर्मण्यता का प्रतीक है और सुप्तावस्था अकर्मण्यता की द्योतक। यही अकर्मण्यता मानव जीवन को पतनोन्मुख बनाती है। अजीमुश्शान का जीवन निष्क्रिय हो उठा था। अकर्मण्यता ने उसे पंगु बना दिया था। जिसके परिणामस्वरूप उदासीनता ने अपना साम्राज्य फैला लिया था। उसकी यह उदासीनता शासन-सूत्र शासक, के हाथ से कर्मचारियों को हस्तांतरित कर रही थी। शनैः शनैः कर्मचारी सशक्त होते जा रहे थे। उस शासन-शक्ति का दुरुपयोग निरीह जनता से लिये उन्मुक्त रूप से होने लगा था। उच्चकोटि के कर्मचारी अपने अधीनस्थ कर्मचारियों को अपने अधिकार सौंप कर बादशाह का अनुसरण करने में अपने जीवन की सार्थकता समझने लगे थे। कर्मठता विलासिता के सागर में तिरोहित हो गई थी। कर्तव्य का स्थान अत्याचार ने ग्रहण कर लिया था।

शत्रु आंधी के प्रबल वेग के समान राजधानी की ओर बढ़ रहे थे जिसकी किसी को खबर न थी। सत्ताधारियों को तो शत्रु-आगमन की सूचना तब मिली जब वे सिर पर आ गये थे। मुनीम खां की व्यावहारिक बुद्धि ने भावी संकट की कल्पना की, जिससे वह भी कांप उठे। वह तुरन्त बादशाह के पास और अभिवादन के पश्चात बोले, "हुजूर, दुश्मन सिर पर चढ़ आया है।"

"ऐं ! क्या कहा ? दुश्मन सिरपर चढ़ आया है ?" अजीमुश्शान ने आश्चर्य प्रकट किया ।

"हाँ, जहाँपनाह ।"

"जरा ठहरो ।"

मुनीम खाँ को जैसे लकवा मार गया । वह बादशाह के 'जरा ठहरो' से से बहुत घबराते थे । 'जरा ठहरो' एक ऐसी रोक थी जो सभी कार्यों को जहाँ का तहां ठप्प कर देती थी । वह चुप-चाप महल से बाहर निकल आए । घोड़े पर वह सवार हो आगे बढ़े ही थे कि गुप्त-चरों ने आकर कोर्निश की । शत्रु की गति-विधि की सूचना देने लगे जिन्हें सुन-सुन कर मुनीम खां का खून खौल रहा था । जब उन्हें शत्रु के अत्याचारों का सुनना असह्य हो गया, तो वह लौट पड़े और बादशाह के समक्ष पहुँच निवेदन किया, "हुजूर अब ठहरने का वक्त नहीं रह गया है, अगर अब भी हुजूर ने गौर न फरमाया तो बहुत बड़े खतरे का मुकाबला करना पड़ेगा ।"

"आखिरकार, यह भी तो बताओ कि दुश्मन है कौन ?"

"दुश्मन है ईरानी सरदार जुल्फिकार खाँ, जिसका साथ तीनों शाहजा दे रहे हैं ।"

"वजीर की बात सुन कर बादशाह बहुत जोर से हँसा और कहने लग आपने कहीं ख्वाब में तो उन्हें नहीं देखा ? उन लोगों की क्या हिम्मत शाही फौजों का मुकाबला कर सकें । वह मामूली सरदार और वे दर-मारे-मारे फिरने वाले शाहजादे हमला करने की बात भी नहीं सोच सक हमला करना तो बहुत दूर की बात है ।"

"हुजूर, वह दूर की बात जब थी तब थी , अब तो वह आंखों के सा की बात हो गई है ।"

"मुझे यकीन नहीं होता ।"

"अगर हुजूर को यकीन नहीं होता तो खुद चलकर देख लें ।"

"कहाँ ?"

"मैदाने जंग में ।"

"कमाल कर दिया आपने । हमें वहाँ जाने की क्या जरूरत । बस, आँख उठाकर देखा नहीं कि दुश्मन भागा ।"

"शायद उनकी ताकत का हुजूर अन्दाजा नहीं लगा पा रहे हैं ।"

"इसका मतलब है कि मैं बेवकूफ हूँ, गुस्ताख कहीं के चले जाओ मेरी नजर के सामने से । जाओ ।" बादशाह ने डाँट कर कहा ।

मुनीम खाँ वजीर वहाँ से उठकर चुपचाप चले आए । जो व्यक्ति उनके संकेतों पर नाचा करता था आज उसी के वह कोप-भाजन बन रहे थे । उनके मन में आया कि बादशाह को इसी समय समाप्त करके शासन की बागडोर अपने हाथ में ले लें परन्तु, परिस्थित अत्यन्त गम्भीर थी । वह नहीं चाहते थे कि घर में भी झंझट उत्पन्न हो, इसलिये वह क्रोध पी कर रह गये और वहाँ से आकर थोड़ी सी सेना शत्रु को रोकने के लिये भेज दी ।

शत्रु की सेना दिनभर शाही फौजों के आने की प्रतीक्षा करती रही, परन्तु उस ओर कोई भी सनकता नजर नहीं आया । उन लोगों ने शान्ति का अर्थ लगाया कि बादशाह में इतनी शक्ति ही नहीं है कि उनका सामना कर सके । इसलिये उन लोगों ने आस-पास की जनता को परेशान करना आरम्भ किया । जनता आक्रमणकारियों के अत्याचारों से ऊब कर दरबार में रक्षा की प्रार्थना के लिये आने लगी । कोई भी बादशाह के पास तो पहुँचने नहीं पाता था । सभी मुनीम खाँ के पास ही आते थे । जनता की एक-एक आर्तपुकार वजीर के लिये एक-एक डंक के समान थी । वह सुन-सुन कर तिलमिला उठते थे । किसी प्रकार रात्रि कटी । प्रातःकाल वह पुनः बादशाह से मिलने के लिये गये । बादशाह प्रातःकालीन क्रियाओं से निवृत्त हो अपने मनोरंजन-कक्ष में मसनद के सहारे तख्त पर बैठे हुये संगीत का रसास्वादन कर रहा था । बीच-बीच में मदिरा का पात्र भी उसके ओठों को स्पर्श कर लेता था । मदिरा अभी

तक उसे अपने पूर्ण नियन्त्रण में न ला सकी थी, इसलिये सामने से मुनीम खाँ को आते हुये देख वह सम्हल कर बैठ गया। वजीर के कक्ष में प्रवेश करते ही समस्त गायिकायें वहाँ से प्रस्थान कर गईं। उचित अभिवादन करने के पश्चात् मुनीम खाँ सामने पड़ी हुई चौकी पर बैठ व्यथित स्वर में बोले, "हुजूर, दुश्मन ने बुरी तरह रियाया को तबाह कर दिया है। उन्हें लूटा है, घर जला दिये हैं और बहुतों को मौत के घाट उतार दिया है। रियाया किले के बाहर जमा है। वह आपके हुजूर में दरख्वास्त लेकर आई है कि उनकी जानमाल की हिफाजत का इन्तजाम किजा जाय।"

"रियाया दरख्वास्त लेकर आई है या आप आये हैं ?"

"मेरी अपनी कोई दरख्वास्त नहीं है। रियाया का ही दुःख हुजूर के सामने अर्ज करने आया हूँ।"

"हूँ !" कह कर बादशाह मौन हो गया। मदिरा अपना प्रभाव धीरे-धीरे दिखा रही थी। नेत्र रक्तवर्ण हो रहे थे। वजीर ने इस बात को ध्यानपूर्वक देखकर समझ लिया था। देर तक प्रतीक्षा करने के बाद भी जब बादशाह का मौन भंग होते हुए न देखा तो वह झुँझला कर बोले, "हुजूर, जल्दी हुक्म दें, वरना रियाया बगावत पर आमादा हो जायेगी।"

"जरा ठहरो।" बादशाह ने नेत्रों को बड़े परिश्रम से खोलते हुये कहा।

"ठहरने का वक्त निकल गया है, हुजूर। अब तो कुछ-न-कुछ करना ही पड़ेगा, वरना दुश्मन·········।"

'दुश्मन' शब्द सुनकर बादशाह बोल उठा, "दुश्मन, दुश्मन, दुश्मन। कभी तो हँसी-खुशी की बात की होती।" कहते-कहते बादशाह की जबान लड़खड़ाने लगी और वह एक ओर लुढ़क गया। बादशाह की उस अवस्था को देख मुनीम खाँ निराश होकर चले गये।

शत्रु के अत्याचारों का प्रतिरोध करने के लिये कुछ सैनिक भेजे गये थे, परन्तु शत्रु की उतनी बड़ी सेना से जनता की रक्षा करने में वे असमर्थ रहे। अत्याचार दिन दूने रात चौगुने बढ़ रहे थे। जनता के रक्षार्थ जो कुछ भी

प्रबन्ध किया जाता था वह विशाल ज्वाला में एक ग्रास मात्र सिद्ध होता था। बहुत बड़ी क्षति उठानी पड़ रही थी। मुनीम खाँ अपने को सर्वसमर्थ समझते हुये भी बादशाह की आज्ञा के बिना कुछ भी खुलकर कर सकने में असमर्थ थे। रह-रह कर बादशाह पर क्रोध आ रहा था लेकिन खुलकर विद्रोह करने का अवसर नहीं था। शत्रु के अत्याचार के समाचार उनके प्रतिरोध की ज्वाला में घी का कार्य कर रहे थे, परन्तु 'जरा ठहरो' के कारण सब स्वाहा होता जा रहा था। यह स्थिति बराबर पन्द्रह दिन तक रही। मुनीम खाँ ने इस बीच में राजाज्ञा प्राप्त करने के अनेक प्रयास किये परन्तु हर बार 'जरा ठहरो' सुनकर वापस आना पड़ा था। शत्रु के अत्याचार सीमा पार कर गये थे। सैनिकों के धैर्य का बाँध टूटने लगा था। स्थिति नियन्त्रण के बाहर होने लगी थी। अन्ततोगत्वा मुनीम खाँ ने बिना राजाज्ञा ही शत्रु के प्रतिरोध के लिये विशाल सेना भेज दी। एक तो शत्रु को आतंकित करना था जिससे वह अपने अत्याचार बन्द कर दे और दूसरे जनता को भी यह विश्वास दिलाना था कि उनकी रक्षा के लिये कुछ किया जा रहा है। शाही सेना के प्रस्थान के पश्चात् जनता को कुछ राहत मिली। शत्रु ने भी इस बात को समझ लिया कि शाही सेना मुकाबला करने के लिये आ गई है, अतएव उसने जनता पर किये जाने-वाले अत्याचारों में कमी करके शाही सेना के प्रत्याक्रमण की प्रतीक्षा करने लगा, परन्तु अधिक समय तक प्रतीक्षा के बाद भी जब शाही सेना के आक्रमण के चिह्न दृष्टिगोचर न हुये तो उसने समझ लिया कि उसकी सैनिक-शक्ति के सामने शाही सेना ने भी घुटने टेक दिये। उनके हौसले और भी अधिक बढ़ गये। अब तो वे विजय की खुशी में मनमानी अत्याचार करने लगा। मुनीम खाँ को शत्रु की प्रत्येक गतिविधि का परिचय प्राप्त होता रहता था। जनता त्राहि-त्राहि कर उठी थी। खाँ साहब को पुनः बादशाह के पास जाना पड़ा।

वादशाह सुन्दरियों से घिरा हुआ अपना मनोरंजन कर रहा था। मुनीम खाँ के वहाँ पहुँचने पर हास-परिहास को जैसे लकवा मार गया। वादशाह को मुनीम खाँ का उस समय आना वहुत वुरा लगा लेकिन डरता इतना था कि कुछ भी न कह सका। मदिरा के मद में कभी-कभी वह अनुचित व्यवहार कर वैठता था। अभिवादन के पश्चात् मुनीम खाँ वादशाह की स्वीकृति के साथ ही समक्ष वैठ गये। इस वार वादशाह ने ही स्वयं प्रश्न किया, "कहिये, खैरियत तो है ?"

"हुजूर खैरियत पूछ रहे हैं ! रियाया दुश्मन को जुल्म का शिकार वन रही है और............।"

"यह दुश्मन कौन है (आपने मुझे उसके आने की खवर क्यों नहीं दी ?"

"मैं तो हुजूर की खिदमत में कई वार अर्ज कर चुका हूँ कि ईरानी सरदार जुल्फिकार खाँ के साथ आये हुये आपके तीनों भाई ही दुश्मन हैं।"

"ओह हो ! उनकी इतनी हिम्मत कि शाही फौज का सासना करने के लिये आ गये। आपको पहले ही उन्हें भगा देना चाहिये था।"

"दुश्मन को शिकश्त देने की हरचन्द कोशिश की गई मगर वे आपके वगैर भागने वाले नहीं।"

"मतलव ?"

"हुजूर को मैदाने जंग तक तशरीफ ले चलने की जहमत गवारा करनी पड़ेगी।"

"यह आप क्या कह रहे हैं ! मैदाने जंग और मैं ! नामुमकिन।"

"इतमीनान रखें। हुजूर को मैदाने जंग में किसी किस्म के खतरे का सामना नहीं करना पड़ेगा।"

"वाह ! आप भी खूव हैं। मदानेजंग का नाम लेने से तो मेरी रूह फना हो रही है।"

"मगर वादशाह को तो कभी-कभी मैदानेजंग में जाना ही पड़ता है।"

"मैं उन वादशाहों में नहीं हूँ, जिनकी जिन्दगी मैदानेजंग में दुश्मन से

लड़ने के लिये बनी है। मेरे बाप-दादों ने लड़ाइयों में अपना खून इसलिये नहीं बहाया है कि उनकी औलादों को भी अपनी जिन्दगी को खतरे में डालना पड़े। मैं इन बेकार की बातों में अपनी जिन्दगी बरबाद करना नहीं चाहता।"

"हुजूर के ऐश का इन्तजाम तो वहां भी रहेगा।"

"मैदानेजंग में ऐश कहां ? वहां तो तलवारों की खनक कानों में पड़ेगी।"

"तब तो आपने ऐश की जिन्दगी का असली लुत्फ नहीं उठाया।"

"मतलब ?"

"मैदानेजंग में जो ऐश का लुत्फ आता है वह इन दीवारों के अन्दर बंद रहने में कभी नहीं मिल सकता।"

"तो क्या वहां भी ऐश के सभी सामान मौजूद रहते हैं ?"

"वहां क्या हैं, यहां से भी ज्यादा हुजूर। जरा एक दफा चल कर तो देखिये।"

"तब तो जरूर चलूँगा। बोलो, कब चलना है ?"

"बस, आप तैयार हो जाइये। मैं अभी थोड़ी देर में आपको लेने आ रहा हूं।"

मुनीम खां को वहां से उठकर जाते देख बादशाह ने कहा, "देखो, भूल मत जाना।"

"नहीं हुजूर।" मुनीम खां की दूर होती आवाज सुनाई दी।



एक भुविशाल हाथी बादशाह की सवारी के लिए सजा कर तैयार किया गया। बादशाह एक सीढ़ी के सहारे ऊपर चढ़ कर हौदे में आसीन हो गया। आगे-आगे बादशाह का हाथी चल रहा था और उसके पीछे फौज युद्ध-स्थल की ओर अग्रसर हो रही थी। थोड़ी-सी फौज, जिसे मुनीम खां ने पहिले ही

शत्रु का सामना करने के लिए भज दी थी, अपने वादशाह को आता हुआ देख-कर उसके स्वागतार्थ आगे वढ़ी। फौज की इस छोटी-सी टुकड़ी को अपनी ओर आता हुआ देखकर वादशाह के होश उड़ गये। वह एकदम घवड़ा उठा। घवड़ाहट के स्वर में उसने अपने पीछे आते हुए मुनीम खाँ से कहा, "दुश्मन तो अपनी ओर तेजी से चला आ रहा है।"

"हुजूर ! दुश्मन की फौज नहीं है। यह तो अपनी फौज है जो हुजूर के इस्तिकवाल के लिए आ रही है।"

"ओह ! मैं तो समझ वैठा था कि ये दुश्मन हैं, मगर इन्हें मेरी ओर आने की क्या जरूरत है ?"

"आपका इस्तिकवाल करके अपने दिल की खुशी जाहिर करना चाहते हैं।"

"यह भी कोई खुशी जाहिर करने का तरीका है जिससे दूसरे डर जायें।"

"हुजूर की जिन्दगी का यह पहला मौका है वरना डरने की कोई वात न थी।"

वादशाह ने मुनीम खाँ की वात का कोई उत्तर न दिया, क्योंकि दोनों फौज वढ़ने के कारण एकाकार हो रही थीं और 'वादशाह जिन्दावाद' के नारे लगने प्रारम्भ हो गये थे।

यह जानकर कि शाही सेना के साथ वादशाह भी युद्ध-स्थल में पदार्पण कर रहा है, शत्रु ने भी तेजी के साथ मजवूत मोर्चा-वन्दी शुरू कर दी। जुल्फि-कार खाँ ने सेना को चार भागों में विभक्त कर लिया था। प्रमुख भाग का संचालन वह स्वयं कर रहे थे। दो भागों का संचालन रफीउश्शान और जहान-शाह के हाथों में था। शेप चौथा भाग विशेप परिस्थिति के लिए सुरक्षित था। सेना की व्यूह-रचना वड़ी ही कुशलतापूर्वक की गई थी। पैदल सेना के आगे घुड़सवार थे। उनके आगे हाथी की सेना थी और सवसे आगे था तोपखाना। तोपची हाथों में मशाल लिए तोपों में आग देने के लिए प्रस्तुत थे।

मुनीम खाँ भी कम कुशल सेनाध्यक्ष न थे। उन्होंने अपने जीवन में अनेक युद्धों में विजय प्राप्त की थी। उन्हें युद्ध की तैयारी का यथेष्ट ज्ञान था।

एक पहर के ही अन्दर उन्होंने शाही सेना की व्यूह-रचना कर डाली थी।

रणवाद्य बज उठे। सैनिकों में उत्साह बढ़ने लगा। उनकी धमनियों में रुधिर का प्रवाह तीव्र हो उठा। भुजायें फड़कने लगीं। शरीरों को ढकने वाले अस्त्र-शस्त्र आपस में ही टकरा कर झनझना उठे। वातावरण अतीव उत्साहपूर्ण हो उठा। युद्ध का डंका बजा और सेनापतियों के संकेत पर तोपचियों ने तोपों से गोले बरसाना आरम्भ कर दिये। तोपें अग्निवर्षा कर रही थीं। गोलों के छूटने से जो ध्वनि उत्पन्न हो रही थी, वह हृदय को भय से प्रकम्पित कर रही थी। वायुमण्डल गोलों की भयानक ध्वनि से ध्वनित हो उठा था। काफी देर तक गोलों की वर्षा होती रही। सेनायें युद्ध करते-करते इतनी अभ्यस्त हो गई थीं कि तोपों का प्रयोग जय अथवा पराजय के निमित्त न होकर प्रदर्शन-मात्र रह गया था, जिसके परिणामस्वरूप इतने दीर्घकाल तक गोला-वर्षा होने पर भी कुछ निर्णय न हो सका। जय अथवा पराजय का निर्णय तो सैनिकों को करना था। जो गोलों की चपेट में आगये, वे परलोक सिधार गये। शेष तोपों के बन्द होने की प्रतीक्षा करने लगे। पताका के ऊपर उठते ही दोनों ओर के सैनिक भिड़ गये। जिस प्रकार भूखा शेर हिरनों के झुण्ड में घुसकर उनका संहार करता है उसी भाँति प्रत्येक सैनिक अधिक-से-अधिक शत्रु-सैनिकों को काट-काट कर गिराने की सफल या असफल चेष्टा करने लगा था। युद्ध की भीषणता अपनी चरम सीमा पर थी। मृत्यु सिर पर नर्तन कर रही थी। सैनिक, हाथी, घोड़े, कट-कट कर गिरने लगे थे। लोथों के ढेर लग गए। पृथ्वी रक्त-रंजित हो गई। पृथ्वी की मिट्टी रक्त में सन कर दल-दल का स्वरूप धारण करने लगी। दल-दल रक्त की अधिकता के कारण तरल रूप में परिणत हो उठा। रुधिर की प्रवाहित धारा कभी-कभी किसी कटे हुए अंग के बीच में आ जाने के कारण अवरुद्ध हो जाती थी जिसके परिणामस्वरूप वह प्रवाह छोटे से कुण्ड का स्वरूप धारण कर लेता था, परन्तु शीघ्र ही किसी धक्के से फट जाने के कारण इतने वेग से बहने लगता था जिसमें सैनिकों के वस्त्र, शस्त्र और पशुओं के विभिन्न अंग उतराते हुए दृष्टिगोचर होते थे, परन्तु इस

दृश्य को देखने का किसे अवकाश था। सैनिक तो रणोन्मत्त थे। सभी अत्यन्त सरगर्मी के साथ लड़ रहे थे। सैनिक और पशु तृष्णा से व्याकुल हो उठे थे। हाथी और घोड़े प्रवाहित रक्त तक अपना मुँह ले जाते, परन्तु शीघ्र ही पानी का अभाव समझ कर ऊपर उठा लेते। मनुष्यता ने पशुता धारण कर ली थी। पशु भी अपनी स्वमिभक्ति का प्रदर्शन अपने मुँह और टापों का संचालन करके कर रहे थे। अपना-पराया भूल कर जो सामने आता उसे ही यमपुर पहुँचाने का प्रयास करते। इस प्रकार के प्रयास में कभी-कभी भी स्वयं यमपुर सिधार जाते थे। शस्त्रों की झंकार, सैनिकों का चीत्कार, घोड़ों की हिन-हिनाहट और हाथियों की चिग्घाड़ अत्यन्त लोमहर्षक वातावरण की सृष्टि कर रहे थे। तीन दिन तक यही अवस्था रही। शाही सेना के सैनिकों की जुल्फिकार खाँ द्वारा खरीदी हुई वफादारी ने ऐसा रंग दिखाया कि शाही सेना के पैर उखड़ने लगे। शत्रु के प्रवल प्रहारों को स्वामिभक्त सैनिक सहन न कर सके। शत्रुसेना शाहीसेना में तीव्रगति से घँसती चली आ रही थी। मुनीम खाँ ने जब अपनी सेना के पैर उखड़ते हुए देखे तो शीघ्र ही मोर्चा छोड़कर बादशाह के पास गये। बादशाह अपने डेरे में मदिरा के नशे में मस्त पड़ा था। डेरे के अन्तर्गत घुसते ही मुनीम खाँ ने बादशाह से कहा, "दुश्मन हमें शिकस्त दे रहा है। शाही सेना के पैर उखड़ चुके हैं। इस वक्त आपका मैदानेजंग में चलना निहायत जरूरी है। आपको पाकर फौज दूने जोश से लड़ेगी।"

मुनीम खाँ की बात सुनकर बादशाह ने उनींदी अवस्था में उत्तर दिया, "जरा ठहरो।"

मुनीम खाँ ने बादशाह के साथ समय नष्ट करना उचित न समझा और शेष सैनिकों को एकत्र करके शत्रु की सेना पर आक्रमण करने के लिए वह आगे बढ़े। दीपक की बुझती हुई लौ की भाँति एक बार जोश दिखाकर अस्त होते हुये सूर्य के साथ ठंढे पड़ गये। संध्या अपने पंख फैला रही थी। युद्ध की गति में शिथिलता आने लगी। अंधकार की सघनता के परिणामस्वरूप युद्ध बन्द कर दिया गया। दोनों ओर के सैनिक अपने-अपने डेरों में विश्राम करने

लगे। जिस समय मुनीम खाँ अपने डेरे में पड़े हुए भावी योजना पर विचार कर रहे थे, उस समय जुल्फिकार खाँ शाही सेना से खरीदे हुए सेनापतियों के साथ बैठकर अपने डेरे में उनकी वफादारी के लिए उन्हें धन्यवाद दे रहे थे। खाँ साहब में कार्य करने का अनोखा उत्साह था। रात्रि-रात्रि भर जागकर और दिन-दिन भर सेना का संचालन करके वह शाहीसेना को परास्त करने में अपनी कुशलता का अद्भुत परिचय दे रहे थे।

बादशाह के प्रमाद का प्रभाव सैनिकों पर पड़े बिना न रहा। उसी रात शाहीसेना के लगभग पन्द्रह हजार सैनिक भाग कर शत्रु की सेना में मिल गये। शाही सेना में अब सिर्फ दस हजार सैनिक ही शेष रह गये थे। दूसरे दिन प्रातःकाल मुनीम खाँ ने बादशाह को समझा-बुझा कर सेना का संचालन करने के लिए प्रस्तुत किया। बादशाह अभी तक समझता था कि उसके आँख उठाते ही शत्रु भागता नजर आयेगा, लेकिन अब उसकी भी समझ में आगया कि केवल आँख उठाने से ही शत्रु भागने का नहीं, अब तो शस्त्र उठाना ही पड़ेगा। उसे अनिच्छापूर्वक युद्ध-स्थल के लिए प्रस्थान करना पड़ा।

दस हजार सैनिकों के साथ बादशाह युद्ध-स्थल में शत्रु के समक्ष आ डटा। यह उसके जीवन का प्रथम अवसर था जब उसने युद्ध-स्थल का वह वीभत्स दृश्य देखा था। सर्व प्रथम तो वह उस दृश्य को ही देखकर काँप उठा, परन्तु अब तो मृत्यु के मुँह में आ ही गया था, घबड़ाने से क्या होता। किसी प्रकार धैर्य धारण करके वह युद्ध में डटा रहा। अंगरक्षक, जो कि बादशाह को चारों ओर से घेरे हुए थे, बादशाह की आक्रमणों से रक्षा कर रहे थे। सूर्य का ताप बढ़ रहा था। गर्मी के दिन थे। लू बड़े वेग से चलने लगी थी। नदी के तट की रेत उड़-उड़ कर आँखों में पड़ने लगी थी। सैनिक आँख बन्द करके युद्ध कर रहे थे। अपने-पराये का विवेक प्रकाश होने पर भी न होने के बराबर था। सैनिक अपना अन्तिम जौहर दिखा रहे थे। आज शाही सेना के सरदार ही शत्रु के रूप में शाही सेना का संहार कर रहे थे। अवसर देख कर खाँ साहब ने युद्ध-स्थल छोड़ दिया और एक तोप से ऐसा गोला छूटा कि

वह आकर बादशाह के हाथी की सूँड़ में जा लगा। गोला लगते ही हाथी चिग्घाड़ उठा। उसकी चिग्घाड़ सुनकर बादशाह गिरते-गिरते बचा। हाथी व्याकुल होकर भागने लगा। महावत अपने को नहीं सम्हाल सका और नीचे आ गिरा। अंगरक्षक भी गिरने ही वाला था कि उसने रस्सी पकड़ ली और लटक कर अपनी जान बचाई। बादशाह असमर्थ था। हाथी को रोकना उसके वश के वाहर की वात थी। सेना के कुछ सैनिकों ने बादशाह को बचाने के अभिप्राय से हाथी का पीछा करना चाहा, लेकिन हाथी इतना तेज भाग रहा था कि कोई भी उसे पकड़ने में सफल न हो सका। वह नदी की ओर अंधा-धुंध भाग रहा था। कुछ समय पश्चात् हाथी सैनिकों की दृष्टि के ओझल हो गया। जब पीछा करते हुए सैनिक नदी पर पहुँचे तो देखा कि दल-दल की चादर पर कुछ बुलबुले उठ रहे हैं जो यह संकेत कर रहे हैं कि हिन्दुस्तान के बादशाह बनने की हवस यहीं दफनाई गयी है।

O

बादशाह के युद्धस्थल से भागते ही हार-जीत का निर्णय हो गया। विजय-श्री ने शत्रु को वरण किया। बादशाह के नदी में डूब जाने की खबर ने सैनिकों में खलभली पैदा कर दी। बचे-खुचे सैनिक अपने प्राण बचा-बचा कर भागने लगे। शत्रु की सेना ने भागते हुए सैनिकों का पीछा करना उचित न समझ उन्हें लूटना प्रारम्भ कर दिया। शाही डेरा भी खूब लूटा गया जिसमें अनेकों बहुमूल्य वस्तुयें तथा दासियाँ प्राप्त हुई। यह कार्य सूर्यास्त तक चलता रहा। लूट का समस्त माल खाँ साहब के डेरे में एकत्र किया गया। हताहत सैनिकों को एकत्र किया जाने लगा। उनकी सेवा-सुश्रुषा का भार जिन्हें सौंपा गया वे अपने कार्य में दत्त-चित्त होकर जुट गए। अन्य सैनिक कई दिन तक निरंतर युद्ध करने के कारण अत्यधिक क्लान्त थे, अतएव अपने-अपने डेरों में जा-जा

कर विश्राम करने लगे।

दूसरे दिन प्रातःकाल यह जान कर कि बादशाह स्वयं युद्ध का संचालन करने हेतु आ रहे हैं, खाँ साहब ने जहाँदारशाह को भी युद्ध के लिए आमन्त्रित कर लिया था। वह भी मैदान में आये थे और एक छोटी-सी सैनिक टुकड़ी के संचालन का कार्य सम्हाले रहे थे। जब संध्या को विजयोल्लास से भरे हुए वह अपने डेरे में पहुँचे तो लालकुँअरि ने उनका मुस्कराते हुए स्वागत किया। लालकुँअरि की एक सुमधुर मुस्कान ने शाहजादे की सम्पूर्ण थकान को हर लिया। मसनद के सहारे विश्राम करने के अभिप्राय से वह लेट गये। लालकुँअरि ने बगल में बैठकर अपनी चिंता व्यक्त की, "आपको लौटने में काफी वक्त लग गया ?"

"खुदा का शुक्र करो कि मैदानेजंग से वापस तो लौट आया। वहाँ कोई भी वापस आने के लिए नहीं जाता।"

"आप भी कैसी बातें करते हैं। बहादुर इन्सान जंग फतह कर ही वापस आते हैं। मैं काफी देर से हुजूर का इन्तजार कर रही हूँ। अगर आप थोड़ी देर और न आते तो मैं वहाँ ही आने वाली थी।"

"मैदानेजंग में ?"

"तो क्या हुआ ? क्या औरतें मैदानेजंग मे नहीं जाती ?"

"हमारे यहाँ बेगमें मैदानेजंग मे कभी नहीं गईं।"

"मगर, हिन्दू औरतें तो मैदानेजंग मे जाती हैं और अगर मैं भी……।"

"हाँ, हाँ, तुम भी अगर चली जाती तो कोई हर्ज थोड़े ही था। मगर वे औरतें, जो मैदानेजंग मे जाती हैं, लड़ने मे बड़ी होशियार होती हैं। उन्हें शुरू से ही उस किस्म की तालीम दी जाती है। वे बड़ी बहादुर होती हैं।"

"तो क्या आप मुझे कायर और बुजदिल समझते हैं ?"

"तुम बुजदिल कैसे हो सकती हो। तुम्हारी जिन्दादिली की शोहरत तो सारी सल्तनत भर मे है। हर रियाया की जबान पर तुम्हारी रहमदिली की तारीफ सुनने को मिलती है।"

"खैर, अब बस करिये। जरा मैदानेजंग का तो हाल सुनाइए।"

"बस, समझ लो कि दुश्मन को शिकस्त खानी पड़ी।"

"वह तो मैंने पहले ही समझ लिया कि फतह आपको जरूर हासिल हुई है।"

"सो कैसे ?"

"आप के लौटने से। आपके सामने भला कौन ऐसा दुश्मन है जो टिक सकेगा।"

मनुष्य का स्वभाव है कि अपनी जिस दुर्बलता के कारण उसमें हीन-भावना का संचार होने लगता है, यदि उसी को कोई प्रशंसा में परिणत कर देता है तो उसकी प्रसन्नता की सीमा नहीं रहती। जहाँदारशाह, जिस बात को अपनी कमजोरी समझते थे उसी की प्रशंसा लालकुँअरि के मुँह से सुनकर, फूले न समाये। अपने को और अधिक वीर सिद्ध करने के अभिप्राय से उन्होंने कहा, "अजीमुश्शान तो यह जानकर कि मैं भी मैदान जंग में आया हूँ सामने ही नहीं आया। और लोगों का तो कहना है कि वह मुझसे खौफ खाकर नदी में डूब मरा।"

"तो यह कहिए कि आपको अजीमुश्शान का सामना नहीं करना पड़ा।"

"मेरे सामने आने की उसमें हिम्मत ही कहाँ थी। मेरा तो जंग में पहुँच जाना ही काफी था। अगर कहीं मैंने तलवार उठाली होती तो फिर कयामत ही नजर आती।"

"तब तो बड़ा ही अच्छा हुआ कि आपको हथियार उठाना नहीं पड़ा।" लालकुँअरि मुस्करा दी थीं।

"हथियार भी तो मैं अपने साथ नहीं ले गया था। अगर जरूरत पड़ती भी तो मुझे किसी सिपाही से माँगना पड़ता।"

"खैर जो कुछ हुआ ठीक ही हुआ। आप सारे हिन्दुस्तान के बादशाह बन गये।"

"इसमें क्या शक है। मैं बादशाह और तुम बेगम।"

दोनों एक साथ हँस पड़े। लालकुँअरि ने सुराही से मदिरा का पात्र

भरा और शाहजादे की ओर बढ़ा कर कहा, "बादशाह बनने की खुशी में यह जाम।"

जहांदारशाह ने मुस्कराकर जाम हाथ में ले लिया। वह जाम-पर-जाम पिलाती रही और वह पीते रहे। बीच-बीच में विशेष आग्रह किये जाने पर वह भी चख लेती थी। दोनों ज्यों-ज्यों पीते गये त्यों-त्यों मदिरा के अधिकार में होते चले गये।

रफीउश्शान और जहानशाह के डेरे खाँ साहब के डेरे से लगभग सौ-सौ गज की दूरी पर लगे हुये थे। दोनों ही खाँ साहब की प्रतीक्षा कर रहे थे। प्रत्येक अपने को हिन्दुस्तान का बादशाह समझे बैठा था। दीर्घप्रतीक्षा के पश्चात् भी जब खाँ साहब नहीं आये तो दोनों शाहजादों ने अपने अनुचरों को खाँ साहब के पास भेजा। अनेक अनुचर खाँ साहब के पास अनेक बार गये। खाँ साहब ने अपनी योजनानुसार पूरी व्यवस्था पहले से ही कर रखी थी। शहजादों का जो भी अनुचर खाँ साहब से मिलने की अभिलाषा प्रगट करता अर्धचन्द्र देकर भगा दिया जाता था। यदि उसने तनिक भी जोर दिखाने का दुस्साहस किया तो उसका सिर कलम कर दिया गया। दोनों शहजादों को जब अपने अनुचरों के प्रति खाँ साहब के इस दुर्व्यवहार की सूचना मिली तो उन लोगों ने स्वयं ही मिलने का निश्चय किया। रफीउश्शान तो अपनी तैयारी में लग गया। दिन भर युद्ध-स्थल में रहने के कारण उसका सम्पूर्ण नख-शिख शृंगार बिगड़ गया था। इसलिये वह शीशा-कंघी लेकर अपने को तैयार करने लगा। जहानशाह ने हाथ में तलवार ली और सीधा खाँ साहब के डेरे की ओर अकेले ही चल दिया। जहानशाह के हाथ में नंगी तलवार देखकर किसी को भी उसे रोकने का साहस नहीं हुआ। सभी पहरेदार किनारे हो गये और वह बिना रोक-टोक डेरे के अन्दर प्रवेश कर गया। खाँ साहब अपने कुछ विशे

सरदारों के साथ विचार-विमर्ष कर रहे थे। जहानशाह को सामने देखकर एक बार खाँ साहब भी सहम गये। वह उसके उग्र स्वभाव से भलीभाँति परिचित थे, परन्तु शीघ्र ही प्रकृतिस्थ होते हुये शाहजादे को उचित स्थान की ओर संकेत करते हुए बैठने को कहा। पास ही पड़ी हुई चाँदी की चौकी पर जहानशाह बैठ गया। खाँ साहब का स्वर उनके व्यक्तित्व के अनुकूल ही था। उनकी आयु लगभग पैंतीस वर्ष के आसपास थी। शरीर अत्यंत सुदृढ़ और साँचे में ढला हुआ था। चेहरे की कठोर रेखाएं उनके दृढ़ संकल्प का परिचय दे रही थीं। उनकी दृष्टि पैनी थी। जीवन के उत्कर्षापकर्ष ने उन्हें अत्यन्त वाक् संयमी बना दिया था। वातावरण के अनुकूल अपने को परिवर्तित कर लेने की उनमें अपूर्व क्षमता थी। अपने स्वर में नम्रता लाते हुए उन्होंने कहा, "कहिये, आपने कैसे इतनी रात गए यहां आने की तकलीफ उठाई, मुझे ही बुला भेजा होता ?"

"मेरे आदमी तो आपके पास कई बार आये, मगर उन्हें बाहर से ही धक्का मारकर भगा दिया जाता रहा। इस वजह से मुझे ही आना पड़ा।"

"किसलिए।"

"यह भी कोई पूछने की बात है कि मैं किसलिए आया हूँ ?"

"अगर आपको कोई खास तकलीफ न हो तो बेहतर होगा कि आप एक बार अपनी ज़ुबान पर ला दीजिए।"

जहानशाह को खाँ साहब से ऐसे व्यवहार की आशा न थी। खाँ साहब के इस वाक्य ने शाहजादे की क्रोधाग्नि में घी का कार्य किया, परन्तु अवसर के अनुकूल अपने को ढालते हुए उसने कहा, "मैं चाहता था कि करार के मुताबिक लूटे हुए माल का बटवारा आज ही कर दिया जाय तो अच्छा रहेगा।"

"इतनी जल्दी किसलिए ? अभी तो मैंने लूटे हुए माल को गौर से देखा भी नहीं है। कल सुबह उसका बटवारा हो जायगा।"

"कल के लिए इस काम को क्यों छोड़ रखा जाय। अगर आज ही रात को इस काम से फुरसत मिल जाय तो अच्छा है। कल सुबह तो तख्तेताऊज

पर बैठने की तैयारियाँ करनी हैं ?"

"किसके तख्त पर बैठने की तैयारियाँ करनी है ?"

"मेरे।" जहानशाह मुँझला उठा था।

जुल्फिकार खाँ इस 'मेरे' शब्द को सुनकर बड़ी जोर से अट्टहास कर उठे। खाँ साहब की हँसी में योग देने के अभिप्राय से पास बैठे हुए सभी सरदार हँस पड़े। जहानशाह ने उस हँसी में अपना अपमान समझा। वह जल कर खाक हो गया और रोषपूर्ण स्वर से बोला, "आप मेरी बात को हँसी में उड़ा देना चाहते हैं।"

"ऐसी बात हँसी में उड़ाई ही जाती है।" हँसी को रोकते हुए खाँ साहब ने उत्तर दिया।

"तो क्या मेरे तख्त पर बैठने की बात ऐसी है जिसकी इस तरह हँसी उड़ाई जाय ?"

"बड़े भाई के रहते भला आप कैसे हिन्दुस्तान के बादशाह बन सकते हैं ?"

"तो आपके कहने का मतलब है कि जहाँदारशाह हिन्दुस्तान का बादशाह बनेगा ?"

"बेशक।"

"तो फिर, वह आपका वायदा झूठा था जो आपने मुझसे अकेले में किया था ?"

"मैंने कौन-सा ऐसा वायदा किया था जिसे आप झूठा साबित करना चाहते हैं ?"

"यही कि दुश्मन को फतह करने के बाद मैं हिन्दुस्तान का बादशाह बनूँगा।"

"मगर आप उस वायदे को क्यों भूल जाते हैं जो सबके सामने किया गया था ?"

"तो मेरे साथ अकेले में किया गया वायदा रद्द समझा जाय ?"

"अगर आप ऐसा समझ लें तो आपकी अक्लमंदी होगी। जितने भी वायदे किये जाते हैं उनमें आखिरी वायदा ही असली मानना चाहिये। अगर आ

सामने किया गया वायदा नहीं मन्जूर था तो आपको उसी वक्त खिला-
करनी चाहिये थी। मैंने तो खुले आम सबके सामने जो बात कही थी उसके
ाविक अब भी चलने को तैयार हूँ। रही लूट के माल के हिस्से की बात
ह सबके सामने ही हो सकेगी।"

"तो इसके माने यह हैं कि आपने मुझसे झूठा वायदा किया था ?"

"तो क्या आप चाहते हैं कि मैं आपके वादे को पूरा करके सब के सामने
झूठा साबित होऊँ ?"

"तब तो इस बात का फैसला कल सुबह मैदानेजंग में ही होगा कि हिन्दु-
स्तान का बादशाह कौन बनेगा।" यह कहता हुआ जहानशाह उठकर खड़ा हो
गया और तीव्र गति से डेरे से निकल कर अपने डेरे की ओर चल दिया।

रफीउश्शान ज्योंही खाँ साहब के डेरे के सामने आया त्योंही उसे अन्द
होनेवाली वार्तालाप का स्वर सुनाई पड़ा। उसने मुस्कराते हुए दरबान
पूछा "अन्दर कौन है ?"

"छोटे शाहजादा साहब खाँ साहब से बातें कर रहे हैं।" दरबान
उत्तर दिया।

"जहानशाह खाँ साहब से बात कर रहा है ?"

"जी हाँ।"

"तुम तो सुन ही रहे हो, किस बारे में बातें हो रही हैं ?"

"आप ही खुद जाकर सुन लीजिये।"

"जब दो लोग बात कर रहे हों उस वक्त तीसरे का वहाँ जाना
ख़िलाफ है।"

रफीउश्शान की बात दरबान की कुछ समझ में आ गई। उस
रफीउश्शान से कहा, "मैं पूरी बात तो सुन नहीं पाया हूँ मगर

गया हूँ उससे यही मालूम हो रहा है कि शायद लूट के माल के हिस्से के बाबत बातें हो रही हैं ।"

दरबान की बात सुनकर रफीउश्शान समझ गया कि जहानशाह भी उसी उद्देश्य से खाँ साहब के पास आया है जिसके लिये वह आया है। उसके मन में आया कि चलकर क्यों न मैं भी बँटवारे में शामिल हो जाऊँ। यह सोचकर ज्यों ही वह अन्दर घुसने को हुआ कि अन्दर से बड़ी तेज आवाजें सुनाई दीं और उसके साथ ही कोई तेजी से बाहर की ओर आता हुआ भी दिखाई दिया। तम्बू के अन्दर प्रकाश था और बाहर अंधकार इसलिये डेरे के पर्दे पर परछाहीं देखते ही वह समझ गया कि जहानशाह ही बाहर की ओर आ रहा है। यह समझते ही उसने तुरन्त पीछे की ओर डेरे के बगल में अपने को छिपा लिया। जहानशाह बिना इधर-उधर दृष्टि किये सीधे अपने डेरे की ओर चला गया। उसके चले जाने के बाद रफीउश्शान की जान-में-जान आई। वह जितना जहानशाह से डरता था उतना किसी से भी नहीं। रफीउश्शान ने धीरे से मुस्कराते हुये डेरे के अन्दर प्रवेश किया। खाँ साहब के मस्तिष्क में अभी जहानशाह की बातें चक्कर काट ही रही थीं कि सामने दूसरी बला को आता हुआ देखकर मन में आया कि उसे वहीं से वापस जाने को कह दें, लेकिन उस बला से भी उसी समय निपट लेना उन्होंने उचित समझा। उसे भी उसी आसन पर बैठने को कहा जिस पर जहानशाह को बैठाया था। रफीउश्शान के आसन ग्रहण करने के पश्चात् खाँ साहब ने शिष्टतापूर्वक पूछा, "कहिए, ऐसी क्या जरूरत पड़ गई आपको कि इतनी रात गए यहाँ तक तशरीफ लाने की जहमत उठानी पड़ी ?"

"कोई खास जरूरत तो ऐसी नहीं है।" नाक सिकोड़ते हुए शहजादे ने कहा।

"फिर भी ?"

"यों ही, मैंने सोचा कि कल के लिये बड़ी-बड़ी तैयारियाँ करनी होंगी। अगर मेरे लायक कोई काम हो तो सुन आऊँ।"

"किस बात के लिये तैयारियां करनी हैं ?" नासमझ बनते हुये खाँ साहब ने पूछा।

"मुझे कल तख्त पर बैठना है न।"

"अच्छा, तो आप कल हिन्दुस्तान के बादशाह बनने के लिये तैयारियाँ सुनने आये हैं ?"

"जी हाँ, जी हाँ।" कहकर रफीउश्शान औत्सुक्यपूर्ण दृष्टि से खाँ साहब की ओर देखने लगा।

"आपने अपना मुँह आइने में देखा है ?"

"क्यों, क्या कोई कमी नजर आ रही है ? मैं तो अपने डेरे से खूब अच्छी तरह देखकर चला हूँ। हो सकता है कि रास्ते में चलने की वजह से कोई खराबी आ गई हो। ठहरिये, अभी देखे लेता हूँ। शीशा तो मेरे पास ही है। जेब से शीशा निकालने का उपक्रम करते हुये, "हालाकि रास्ते में मैंने सोचा था कि आपके डेरे में घुसने से पहिले एक बार फिर अपना चेहरा आइने में देख लूँगा।" जेब से शीशा निकाल कर वह उसमें अपनी शक्ल देखने लगा। मुँह को चारों ओर से देखने के अभिप्राय से घुमाते हुये बोला, "मुझे तो कोई खास खराबी नजर नहीं आ रही है। हाँ, सिर्फ भौं के एक बाल पर कंघी नहीं फिर सकी, इसलिये वह ऊपर की तरफ कुछ उठा हुआ-सा नजर आ रहा है। खैर कोई बात नहीं। कंघी भी साथ लेता आया हूँ।" कंघी निकालकर भौं के बाल को ठीक करते हुये वह कहने लगा, "क्या बताऊँ इतनी हिफाजत रखने पर भी ये बाल अपनी अकड़ से बाज नहीं आते हैं।"

भौं के बाल को ठीक करने के पश्चात् रफीउश्शान ने अपना शीशा-कंघा जेब में रख लिया और सम्हल कर बैठते हुये कहा, "हाँ, अब बताइये कि कल के लिये मुझे क्या-क्या तैयारियां करनी होंगी ?"

खाँ साहब को रफीउश्शान की बेवकफी पर तरस आ रह था। डेरे में बैठे हुये सरदार मुँह में कपड़ा लगाये हुये रफीउश्शान के रंग-ढंग देखकर हँस रहे थे। रफीउश्शान को इसकी चिंता नहीं थी कि उस पर कौन हँस रहा है और

क्यों हँस रहा है। वह तो अपनी धुन में मस्त था। उसने अपने को बादशाह समझ लिया था। खाँ साहब भी, यह जानने के लिये कि वह कितना मूर्ख है, प्रसंग को आगे जारी रखते हुये बोले, "मगर अभी से बादशाह बनने की फिक्र आप क्यों कर रहे हैं ? उसके पहिले तो लूट के माल का बँटवारा होना बाकी है।"

"मैं उसके बँटवारे की कोई जरूरत नहीं समझता।"

"क्यों ?"

"उसे मैंने आपको दे दिया। आप उस माल को अपना समझिये।"

तब तो आप बहुत दरिया दिल मालूम पड़ते हैं।"

"अभी आपने मेरी दरियादिली देखी ही कहाँ है। जरा तख्त पर बैठने तो दीजिये। आप को माला-माल न कर दूँ तो मेरा नाम नहीं।"

"तब तो आप अपने को अभी से हिन्दुस्तान का बादशाह समझ लीजिये।"

"यह तो मैंने शाम को ही दुश्मन को शिकस्त देने के बाद समझ लिया था, आपके कहने की कोई जरूरत नहीं।"

"अगर आपके भाइयों ने बादशाहत को पाने के लिये जंग छेड़ दी तो..."

"उनसे मुकाबिला करने के लिये आप ही काफी हैं। मैं आपको अभी से अपने सभी हुकूक बख्शता हूँ। आप उनके साथ जैसा चाहें सलूक कर सकते हैं।"

"तो हिन्दुस्तान पर हुकूमत आप करें और लड़ाई की आफत मैं अपने सिर लूँ ?"

"जी हाँ, आप बहुत जल्दी मेरा मतलब समझ गये।"

खाँ साहब ने पास बैठे हुये सरदारों को संकेत से रफीउश्शान को डेरे के बाहर निकाल देने के लिये कहा। उनमें से दो सरदार उठे और उसका हाथ पकड़कर बाहर की ओर घसीटने लगे। यह देख रफीउश्शान ने कहा "अ रे रे रे ! यह क्या कर रहे हो ? मुझे तुम्हारी यह मजाक पसन्द नहीं।"

रफीउश्शान की इस बात पर सरदारों ने कोई ध्यान नहीं दिया और ज्यों-ज्यों रफीउश्शान रुकने का प्रयास करता त्यों-त्यों वे अधिक शक्ति लगाकर घसीटने लगे। जब उसने देखा कि सरदार पर कोई भी प्रभाव नहीं पड़ रहा है तो ऊँचे स्वर में चिल्लाते हुये बोला, "अरे खाँ साहब ! देखिये आपके ये

सामने ये लोग मेरी बेइज्जती किये डाल रहे हैं। मुझे अभी आपसे बहुत सी बातें करनी हैं।"

"सुबह का इन्तजार करिए। इस वक्त फुरसत नहीं है।"

"मगर बुलवाना न भूलिएगा। मैं तैयार रहूँगा।" रफीउश्शान ने बाहर की ओर घसिटते हुए कहा।

खाँ साहब ने कुछ भी ध्यान नहीं दिया और रफीउश्शान को अन्तिम धक्का देकर डेरे के बाहर कर दिया गया। आधी से अधिक रात्रि व्यतीत हो चुकी थी। रात अँधेरी थी। आकाश में तारागण टिमटिमा रहे थे। रफीउश्शान धीरे-धीरे गिरते-पड़ते अपने डेरे की ओर चला गया। रास्ते में उसकी समझ में आया कि खाँ साहब ही इस दुर्व्यवहार के लिये उत्तरदायी हैं जो सरदारों ने मेरे साथ किया है। इस निष्कर्ष पर पहुँचते ही वह रुक गया और खाँ साहब के डेरे की ओर मुड़ने को हुआ कि उसके मस्तिष्क ने उलटा सोचना प्रारम्भ कर दिया, 'गलती अपनी ही है। जब वह मुझे बादशाह बनाने का वादा कर ही चुके थे तो फिर मुझे उनसे इतनी जल्दी नहीं मिलने जाना चाहिये था। खैर, जो व्यवहार उन्होंने मेरे साथ किया है उसके लिये वह स्वयं पश्चाताप करेंगे और सुबह खुद माफी माँगने के लिये मेरे पास आयेंगे और मैं उन्हें माफ कर दूँगा।' ऐसा सोचता हुआ वह अपने डेरे में प्रविष्ट हो गया।

o

सूर्योदय की प्रतिक्षा सेनाओं ने नहीं की। अंधकार में ही मोर्चे लग गये दोनों सेनाओं में से प्रत्येक सोच रही थी कि वह पहिले आई है, लेकिन यह गलतफहमी तब दूर हुई जब कि प्रातःकालीन धुँधले प्रकाश में दोनों ने एक दूसरे को तैयार देखा। दोनों दलों में युद्ध का डंका बजा। डंके की ध्वनि जब लालकुँअरि और जहाँदारशाह के कानों में पड़ी तो वे चौंक पड़े। इस न

कारण को जानने के लिये जहाँदारशाह डेरे के बाहर निकल आए। एक सरदार को अभिवादन करते हुए अपनी ओर आता देखकर जहाँदारशाह पूछ बैठे, "यह आज सुबह ही जंग का डंका क्यों बजाया गया ?"

"हुजूर खाँ साहब का सामना करने के लिये छोटे शाहजादे साहब अपनी फौज लेकर आये हैं।"

"क्या जहानशाह खाँ साहब की फौजों से लड़ेगा ?"

"हाँ सरकार। यही खबर देने के लिये तो खाँ साहब ने गुलाम को हुजूर की खिदमत में भेजा है।"

"मेरी खिदमत में ?"

"जी हाँ आपकी ही खिदमत में ?"

"तुम्हें गलतफहमी हो गई होगी। खाँ साहब ने तुम्हें रफीउश्शान के पास भेजा होगा।"

"नहीं सरकार, ऐसा कैसे हो सकता है। उन्होंने आपका नाम लेकर साफ-साफ कहा था कि मैं आपकी खिदमत में जल्द-से-जल्द जंग के लिये तैयार होने की इत्तिला करूँ।" रुक कर वह उत्तर की प्रतीक्षा करने लगा, लेकिन जब जहाँदारशाह ने कोई उत्तर न दिया तो उसने कहा, "अब मैं जाने की इजाजत चाहता हूँ।"

"अच्छा जाओ।" संकट में पड़े हुये प्राणी की भाँति निराशापूर्ण स्वर में जहाँदारशाह ने कहा।

"फिर उनसे क्या कह दूँ जाकर ?" जाते हुये सरदार ने प्रश्न किया।

"कह दो कि अभी आ रहा हूँ।" जहाँदारशाह डेरे के अन्दर की ओर मुड़ गए थे।

जहाँदारशाह ने अपने को संकट से बाहर समझ लिया था, इसलिये रात आनन्दपूर्वक कटी थी, परन्तु इस नवीन संकट को सुनकर उनकी रूह फना हो गई, लेकिन खाँ साहब का बुलावा था। उसकी उपेक्षा भी नहीं की जा सकती थी। मजबूर होकर उन्हें तैयार होना पड़ा। हाथी पर सवार होकर वह युद्ध-स्थल की ओर चल दिये। दोनों ओर की सेनायें आपस में भिड़ने

हुये बेचैन हो रही थीं। खाँ साहब अपने डेरे में बैठे हुये प्रमुख सरदारों को न्तिम आदेश दे रहे थे कि एकाएक जहाँदारशाह ने डेरे के भीतर प्रवेश किया। खाँ साहब ने खड़े होकर उनका अभिवादन किया और सम्मानपूर्वक ठाया। जहाँदारशाह युद्ध का कारण जानने की इच्छा को रोक न सके और छ बैठे, "आखिरकार जहानशाह से किस लिये जंग छिड़ गई ?"

"वह पूरे हिन्दुस्तान का बादशाह बनना चाहते हैं।"

"हूँ" ! कुछ सोच वह उठ खड़े हुए, "अच्छा फिर मैं चलूँ।"

"कहाँ ?"

"डेरे की तरफ।"

"डेरे की तरफ नहीं मोर्चे की तरफ चलिये। और हाँ, एक बात का ख्याल रखिएगा कि जहानशाह को शिकस्त देने के बाद शायद रफीउश्शान से भी निपटना पड़ेगा।"

"अजीब आफत में जान फँस गई है।"

"इन लोगों को भी रास्ते से हटाना लाजमी है वरना ये काँटा बन कर कभी चुभ सकते हैं।" आप मयमना को सम्हालिए जाकर।

जहाँदारशाह बिना कुछ प्रतिवाद किए मैदानेजंग के दक्षिणी भाग की ओर चल दिये। खाँ साहब भी साथ ही डेरे के बाहर निकले। अपने हाथी पर सवार होकर उन्होंने आक्रमण करने की आज्ञा दी। जहानशाह पहिले से ही प्रत्याक्रमण के लिये प्रस्तुत था। दोनों सेनायें एक साथ बढ़ीं। घमासान युद्ध होने लगा। मार-काट प्रारम्भ हो गई। सैनिक कट-कट कर गिरने लगे। उत्साह से भरे हुये सैनिक आगे बढ़-बढ़ कर मारते और सैनिकों के सिर भुट्टे की तरह कट-कट गिरते। जिस हाथी के गुर्ज का भरपूर हाथ बैठता उसी के शरीर से रक्त की धारा पहाड़ी झरने की भाँति बह चलती थी। जहानशाह की सेना दुगने उत्साह से लड़ रही थी। खाँ साहब की सेना के पैर उखड़ रहे थे। हाहाकार और चीत्कार की ध्वनियाँ भयावह वातावरण को जन्म दे रही थीं। रणवाद्यों की झन्कार कानों के पर्दे फाड़े डाल रही थी। कोलाहल वीरों में

जोश उत्पन्न कर रहा था। तलवार का हाथ सैनिक के कंधे पर ऐसा पड़ रहा था कि तलवार कंधे से लेकर कमर तक चीरती चली जाती थी। अगर वह पेट में घुसती तो समस्त आँतों को साथ लेकर बाहर ढेर कर देती थी और उसी ढेर पर सैनिक मुँह के बल ऐसा गिरता मानो उनकी रक्षा के लिये वह अपने शरीर से ढकना चाहता हो। वीरों की ललकार, हुँकार और हाहाकार वायु-मण्डल को प्रकम्पित कर रहा था। जब जहानशाह ने शत्रु की सेना को पीछे हटते देखा तो दुगने जोश से शत्रु की सेना में सैनिकों का संहार करता हुआ धँसने लगा। उसकी मार से शत्रु की सेना में खलबली मच गई। सेना बुरी तरह पीछे हटने लगी।

दक्षिणी भाग पर जहाँदारशाह हौदे में बैठे हुए सेना का सचालन कर रहे थे जैसे ही उन्होंने शत्रु सेना को तीव्रगति से अपनी ओर बढ़ते हुये देखा वह हौदे में लेट गये। जहानशाह ने हौदा खाली देख महावत से पूछा, "जहाँदारशाह कहाँ है?"

"महावत ने शीघ्र ही उत्तर दिया, "वह मारे गये।" महावत की बात सुनकर वह शत्रुओं का संहार करता हुआ आगे निकल गया। महावत उचित अवसर समझ हाथी लेकर भाग खड़ा हुआ और एक सुरक्षित स्थान पर जाकर रुका।

दक्षिणी भाग के शत्रुओं का सफाया करके जहानशाह पूर्वी भाग की ओर बढ़ा। पूर्वी भाग पर खाँ साहब का मोर्चा लगा हुआ था। खाँ साहब के सैनिकों ने जहानशाह को अपनी ओर आता हुआ देखकर पीछे हटना प्रारम्भ कर दिया। खाँ साहब पीछे हटते हुये सैनिकों में मोर्चे पर डटे रहने के लिए साहस का संचार कर रहे थे। लेकिन शत्रु की मार उन्हें रुकने नहीं दे रही थी। जहानशाह विजयोउल्लास में पागल हो उठा था। अबाध मार कर रहा था। शत्रु के दल में वह इस प्रकार निर्द्वन्द्व भाव से घुस रहा था जैसे मृगों के दल में शेर। खाँ साहब ने जहानशाह को और अधिक अपने दल में घुसने का अवसर दिया। जहानशाह अनुभवशून्य होने के कारण शत्रुओं में घिर गया। जहानशाह के ऊपर शत्रुओं की मार चारों ओर से होने लगी। जहानशाह को संकट में पड़ा हुआ देखकर उसके सैनिक जो कुछ ही दूर पर युद्ध कर रहे थे, उसके रक्षार्थ

दौड़े, लेकिन इसके पूर्व कि वे उसकी रक्षा कर सकें, वह खाँ साहब की गोली का निशाना बन गया। गोली खाते ही वह धराशायी हो गया। जहानशाह को गिरते हुये उसके सैनिकों ने देख लिया था, अतः उनमें भगदड़ मच गई। खाँ साहब की हार जीत में परिणत हो गई। इस बार भी विजय-लक्ष्मी ने खाँ साहब को ही वरण किया।

रफीउश्शान को खाँ साहब और जहानशाह के बीच युद्ध छिड़ने का समाचार प्राप्त हो चुका था। वह इस बात की प्रतीक्षा कर रहा था कि जहानशाह से निपटने के पश्चात् खाँ साहब उसे मनाने अवश्य आवेंगे। इसलिये वह युद्ध की समाप्ति की प्रतीक्षा करने लगा। यह सुनकर कि जहानशाह पराजित हो गया और खाँ साहब अब मेरी प्रतिक्षा में हैं, बड़ी प्रसन्नतापूर्वक कुछ अंग-रक्षकों के साथ वह खाँ साहब से मिलने के लिये स्वयं ही चल पड़ा। खाँ साहब के सामने पहुँचते ही उसने मुस्करा कर कहा, "मैं तो सोच रहा था कि आप खुद ही तशरीफ लायेंगे। खैर, कोई बात नहीं, मैं ही हाजिर हो गया आकर। कहिये, किस वजह से मुझे तकलीफ दी ?"

"मैं आप का इम्तहान लेना चाहता हूँ।"

"इम्तहान ! किस बात का ?"

"आपकी बहादुरी का ?"

क्यों ?"

"मेरे बहादुर सिपाहियों का कहना है कि बादशाह को बहादुर होना चाहिए।"

"तो क्या आपको मेरी बहादुरी में शक है ?"

"नहीं, मुझे तो जरा भी शक नहीं है, मगर सिपाहियों को आप की बहादुरी पर यकीन नहीं है। ये आपके बादशाह बनने से पहले आपकी बहादुरी देखना चाहते हैं।"

"वाह, ! कमाल कर दिया आपने। यह कोई बहादुरी दिखाने का वक्त है। मैंने तो सोचा था कि आपने मेरे तख्तेताऊस की सारी तैयारियाँ कर ली होंगी और मुझे तो आपने सिर्फ इसीलिए याद फरमाया होगा कि मैं आकर तख्त

पर रौनक अफरोज हो जाऊँ ।"

"आपका सोचना गलत नहीं है। बादशाह बनने की सारी तैयारियाँ हो चुकी हैं। अब तो सिर्फ आपकी अपनी बहादुरी का इम्तहान देना है।"

"सिपाहियों का तो दिमाग फिर गया है। आप उन्हें बकने दीजिये। आइये, हम और आप चलें।"

"लेकिन, मैं सिपाहियों के बगैर नहीं जा सकता।"

"क्यों, तख्त पर बैठने में उनकी क्या जरूरत है ?"

"उन्हीं की वजह से तो आप हिन्दुस्तान के बादशाह बनने के काबिल हुये हैं। जो कुछ वे चाहेंगे वही होगा।"

"तो क्या मुझे अपनी तलवार का जौहर इसी वक्त दिखाना पड़ेगा ?"

"बेशक।"

"फिर, बतलाइए, कौन मरने को तैयार है ?" कहते हुए उसने तलवार के लिए जेब में हाथ डाला तो शीशा-कंघी ही हाथ लगे। शीशा-कंघी को पूर्ववत् जेब में रखते हुए उसने कहा, "खाँ साहब ! तलवार तो मैं डेरे पर ही छोड़ आया हूँ। इसे फिर किसी वक्त के लिए छोड़िए।"

"डेरे पर कहाँ भूल आए हैं ? ढाल-तलवार तो आपकी जेब में हैं।"

"जेब तो मैं देख चुका हूँ उसमें शीशा और कंघी के अलावा कुछ भी नहीं है।"

"शीशा-कंघी ही तो आपके लड़ने के हथियार हैं। इन्हीं का कमाल दिखाइये।"

"फिर, आप यह क्यों नहीं कह रहे हैं कि आप लोग मेरे शीशा और कंघी का कमाल देखना चाहते हैं।" यह कह कर ज्योंही उसने जेब से कंघी निकालने के लिए सिर झुकाया त्योंही खाँ साहब की तलवार के एक ही वार ने रफीउश्शान का काम तमाम कर दिया। धड़ से सिर अलग होकर लुढ़कता हुआ दूर जा रुका। खाँ साहब के उस अप्रत्याशित रूप को देख समस्त उपस्थित सैनिक सहम गए। प्रत्येक की दृष्टि में मौन जिज्ञासा थी, 'यह क्या हुआ। अब

किसकी बारी है ? हिन्दुस्तान का बादशाह कौन होगा ?"

O

जुल्फिकार खाँ ने जहाँदारशाह को सत्ताइस मार्च सन सत्रह सौ बारह को दिल्ली की गद्दी पर बैठा दिया। वह जहाँदारशाह की चरमाभिलाषा की पूर्ति का आनन्दमय दिवस था, अतएव उन्होंने अपनी हार्दिक प्रसन्नता व्यक्त करने के अभिप्राय से पूर्व परम्परानुसार अपने निकटस्थ सम्बन्धियों, सहयोगियों तथा कृपापात्रों को विभिन्न उपाधियों से विभूषित किया। जुल्फिकार खाँ को वजीरे-आजम का पद देकर अपनी कृतज्ञता प्रकट की। अपनी प्रेमिका लालकुँअरि को, जिसके लिए वह अपना सर्वस्व अर्पण करने के लिए सदैव प्रस्तुत रहते थे, 'इम्तियाज महल' की उपाधि से विभूषित किया। बेगम के तीनों प्रमुख सहयोगियों को, जिनका पेशा केवल नाचना और गाना था, 'नियामत खाँ', 'नामदार खाँ' और 'खानाजादा खाँ' के शानदार नामों से सम्मानित किया और उन्हें सूबों की गवर्नरी के योग्य समझा गया। इसके अतिरिक्त अन्य कृपा-पात्र सेवकों को खाँ साहब के आदेशानुसार मुक्त रूप से उपाधियाँ वितरित की गईं, जिन्हें अपनी सेवा का प्रमाण पत्र समझकर कृपापात्रों ने स्वीकार किया। उपाधि वितरण के पश्चात् दरबार में संगीत का आयोजन प्रारम्भ हुआ। नर्तकियों के पैरों की घुँघुरु की ध्वनि और वाद्ययन्त्रों की सुमधुर स्वरलहरी ने समस्त वातावरण को संगीतमय बना दिया। दरबारी झूम-झूम उठे। सभी तन्मय होकर नृत्य और गान का रसास्वादन कर रहे थे। यदि किसी को उस कार्य-क्रम में आनन्द न आ रहा था तो वह थीं लालकुँअरि क्योंकि उनकी दृष्टि में यह निम्नकोटि का कार्य-क्रम था। उनका मन कर रहा था कि वह खुशी के अवसर पर अपनी कला के प्रदर्शन से सब को चकित करदें, परन्तु इस समय वह हिन्दुस्तान के बादशाह की बेगम की हैसियत से वहाँ पर उपस्थित थीं,

इसलिए यह अपनी अभिलाषा को मन में ही लिए हुए उदास-सी बैठी हुई कार्यक्रम को अनिच्छापूर्वक देख रही थी। अनेक कलाविद अपनी श्रेष्ठ कलाओं के प्रदर्शन से सम्राट को मुग्ध करने का प्रयास कर रहे थे। कार्यक्रम की समाप्ति पर कलाकारों को पुरस्कारस्वरूप बहुमूल्य वस्तुयें देकर विदा किया गया।

दिन का अस्तित्व समाप्त हो चला था। पश्चिम में रक्तमय आकाश को देख पक्षीगण भयभीत हो उठे थे और अपने-अपने निविड़ को उन्मुख हो गतिमान हो गए थे। सन्ध्या देवी झिलमिलाते वस्त्रों से सुसज्जित शनैः शनैः पृथ्वी पर उतर रही थी। उसके आगमन के स्वागत के लिए पृथ्वी पर असंख्य दीपक जल उठे थे। दीपकों का झिलमिल-झिलमिल प्रकाश अत्यन्त आकर्षक था। अपने नवीन बादशाह के स्वागतार्थ जनता ने दीपमालाओं से नगर को सजाया था। उस सजावट को देखने के लिए बादशाह लालकुँअरि के साथ किले की दीवार पर खड़े हो गये थे और प्रकाश से उत्पन्न निराली छटा को मन्त्रमुग्ध होकर देख रहे थे। लालकुँअरि अपने जीवन में प्रथम बार इस अतीव आनन्द का अनुभव कर रही थी। वह काफी देर तक एकटक उस प्रकाशित नगरी को देखती रही। बादशाह को लालकुँअरि का यह मौन खलने लगा। वह चाहते थे कि कुछ हास-परिहास की बात हो, अतएव उस अवस्था को समाप्त करने के अभिप्राय से बादशाह ने कहा, "शायद बेगम को आज की रोशनी बहुत पसंद आई ?"

"ऐसा कौन होगा जिसे यह रोशनी पसंद न आयेगी। वाकई आज की सजावट काबिलेतारीफ है।"

"मगर इसे देखने में तुम इतना मशगूल हो गई कि यह भी भूल गई कि साथ में कोई और भी है।"

"जिसकी वजह से यह रोशनी देखने को नसीब हुई है, उसी को भूल जाऊँगी, यह कैसे मुमकिन है ?"

"इतनी देर की खामोशी तो यही बता रही है।"

"ऐसी बात नहीं है। आप तो मेरी नजरों के सामने दिन-रात रहते हैं। यह रोशनी तो थोड़ी देर के लिए है। न मालूम, फिर कभी, देखने की नौबत आये या न आये।"

"दुबारा न देखने की क्या बात है। इसे तो रोजाना देखा जा सकता है।"

"कैसे ?"

"इसी तरह रोशनी करके।"

"क्या ऐसा मुमकिन है ?"

"क्यों नहीं, हिन्दुस्तान के बादशाह के लिए मुमकिन क्या नहीं है। सिर्फ हुक्म की देर है।"

"तब, मेरी दिली ख्वाहिश है कि रोजाना इसी तरह रोशनी देखा करूँ।"

"यह तो बहुत मामूली ख्वाहिश है। मैं अभी इसका इन्तजाम किए देता हूँ।" कह कर बादशाह ने ताली बजाई। ताली बजते ही एक कनीज हाजिर हो गयी। बादशाह ने खाँ साहब को तत्काल उपस्थित होने का आदेश दिया। थोड़ी देर में खाँ साहब आ उपस्थित हुए और अभिवादन करने के पश्चात् बोले, "गुलाम हुजूर की खिदमत में हाजिर है।"

"ओह खाँ साहब ! आप आ गये। बेगम की तमन्ना है कि ऐसी रोशनी रोज की जाय।" खाँ साहब की ओर उन्मुख हो बादशाह ने कहा।

"यह क्या, बेगम साहबा की हजारों ऐसी ख्वाहिशें पूरी की जा सकती हैं; मगर ......।" कहकर खाँ साहब खामोश हो गये।

"हाँ, हाँ, कहिए ! आप रुक क्यों गये ?"

"हुजूर, यह ऐसी ख्वाहिश है जिसके लिये रियाया को काफी तकलीफ उठानी पड़ेगी।"

"बादशाह की खुशी के लिए रियाया को हर तकलीफ बरदाश्त करनी चाहिए।" बादशाह ने गम्भीर होकर कहा।

"अगर तकलीफ बरदाश्त करके भी जहाँपनाह की ख्वाहिश पूरी की जा सकती तो रियाया उसे पूरा करने में कुछ भी न उठा रखती, मगर यह तो

नामुमकिन है, सरकार ।"

"मगर इसमें नामुमकिन की क्या बात है ?"

"हुजूर रोशनी के लिए तेल की जरूरत पड़ती है जिसका [illegible] मुमकिन नहीं है ।"

"वाह, आप भी कमाल करते हैं । तेल का इन्तजाम करना कौन बड़ी बात है । अगर रियाया के पास तेल खरीदने के लिए पैसा नहीं है तो [illegible] से दे दो ।"

"हुजूर, उसमे पैसे से खरीदने की परेशानी नहीं है । [illegible] यह है कि इतना तेल आयेगा कहाँ से जिससे रोजाना रोशनी की जा सके [illegible]

"रियाया पैदा करेगी ।"

"हुजूर, आप अन्दाज नही लगा पा रहे हैं कि इस [illegible] तेल की जरूरत पड़ेगी । रोशनी करने के लिए बहुत तेल की जरूरत [illegible] पैदा किया जा सकना नामुमकिन है ।"

"तो आप के कहने का मतलब है कि तेल की [illegible] की वजह से रोशनी नहीं की जा सकती ?"

"जी, आलमपनाह ।"

"मगर, खाँ साहब ! आपको मालूम है कि यह [illegible] है । और फिर, यह इनकी पहली तमन्ना है, [illegible] तो मेरा बादशाह होना न होने के बराबर है ।"

बादशाह के शब्दों में जो वेदना थी, उसे [illegible] बोल उठी, "जाने भी दीजिये ।"

[illegible] की इस बात ने बादशाह की वेदना को और भी [illegible] दिया । आज सर्वसमर्थ होते हुये भी उन्हें अपनी [illegible] रहा था । चेहरे पर उभरी हुई रेखाओं से व्यथा की [illegible] हुये खाँ साहब ने कहा, "रोजाना तो रोशनी नहीं की जा सकती है । [illegible], कोशिश करने पर हफ्ते में दो बार तो जरूर ही हो सकती है ।"

डूबते हुये को जैसे तिनके का सहारा मिला। खाँ साहब की बात ने बादशाह को व्यथा के सागर में डूबने से बचा लिया। उन्होंने शीघ्र ही कहा, "फिर कोशिश करिये। अगर रोजाना न हो सके तो हफ्ते में दो बार ही सही।"

"मैं अपनी तरफ से कोई कसर न उठा रखूँगा।" कहकर खाँ साहब अभिवादन कर वहाँ से चले गये।

खाँ साहब के चले जाने के पश्चात् बेगम ने बादशाह की ओर देखा। वह अत्यन्त गम्भीर थे। निराशा में पूर्णतया डूबे हुये कुछ विचार कर रहे थे। विचारों में इतने तल्लीन थे कि उनका ध्यान लालकुँअरि के देखने की ओर नहीं गया। उनके अन्तर की वेदना का अनुभव लालकुँअरि को हो रहा था। उनकी वेदना से वह स्वयं व्यथित होते हुये बोलीं, "क्या रात यों ही गुजारने का इरादा है?"

"नहीं बेगम।" बादशाह ने बेगम की ओर देखा।

"फिर तशरीफ ले चलिए। काफी रात हो गई है। अराम करें चलकर।"

"चलो।" कहकर बादशाह वहाँ से चल दिये।

लालकुँअरि भी बादशाह का अनुसरण करने लगीं।

इस घटना ने बादशाह को इतना प्रभावित किया कि वह एक क्षण के लिये भी उसके अतिरिक्त कुछ भी न सोच पा रहे थे। जिसके लिये वह अपने प्राण तक न्योछावर कर सकते थे उसी की एक अभिलाषा की पूर्ति वह न कर सके, यही बात उन्हें पीड़ित किए हुए थी। आज उन्हें अनुभव हो रहा था कि मनुष्य कितना दुर्बल है। वह कुछ भी नहीं कर सकता है। उसकी अपनी कुछ सीमायें हैं। उन सीमाओं के बाहर वह कुछ भी कर सकने में असमर्थ है। बादशाह बनने का सम्पूर्ण उल्लास न जाने कहाँ विलीन हो गया। लालकुँअरि अत्यन्त दुखी थीं, क्योंकि बादशाह के दुख का कारण वह स्वयं अपने को समझती थीं। इस अवस्था से उन्हें मुक्त करना वह अपना कर्त्तव्य समझती थीं और इसके लिये उन्होंने अनेक प्रयास भी किये। मदिरा की मात्रा

भी बढ़ा दी। नृत्य और गायन का भी अच्छा प्रबन्ध किया। मनोरंजन के अन्य सभी सम्भव साधन जुटाये, परन्तु उनकी उदासीनता दूर न हो सकी। लालकुँअरि के कुछ पूछने पर संक्षेप में वह उत्तर दे देते और पुनः मौन धारण कर लेते। दिन तो किसी प्रकार व्यतीत हो गया। संध्या हुई। कालिमा बढ़ने लगी। बादशाह ने बाहर दृष्टि दौड़ाई, लेकिन कल की भाँति प्रकाश नहीं दिखाई दिया। थोड़े समय में ही इतना बड़ा परिवर्तन उनके न चाहने पर भी हो गया। उनकी वेदना पुनः हरी हो गई। उन्होंने नेत्र बन्द किये और पलंग पर चुपचाप लेट गये। उनकी यह अवस्था देख लालकुँअरि की चिन्ता और अधिक बढ़ गई। उनके पास लोग अपनी उदासीनता को दूर करने के लिये आया करते थे। उनके न चाहने पर भी लोगों की उदासीनता उनके दर्शन मात्र से दूर हो जाया करती थी। आज चाहने पर भी वह बादशाह की मानसिक अवस्था में परिवर्तन नहीं ला पा रहीं थी। अपनी असमर्थता पर वह ग्लानि अनुभव करने लगी। चुपचाप पास ही बैठे हुये कुछ देर तक विचार करती रहीं। एकाएक उनके मस्तिष्क में एक विचार आया और अन्तिम प्रयास के लिये वह उद्यत हो गई। खड़े हो उन्होंने अपने वस्त्रों पर एक दृष्टि दौड़ाई। उनमें कुछ आवश्यक परिवर्तन भी वहाँ उपस्थित गायिकाओं की सहायता से किये। आज उनकी कला की अन्तिम परीक्षा थी। काफी दिनों के बाद उनके पैरों में घुँघुरू फिर बंध गये। तबले पर थाप पड़ी। तबले की थाप के साथ ही घुँघुरू भी बज उठे। नृत्य की गति शनैः शनैः, तीव्रतर होती गई। यद्यपि वह दत्तचित्त होकर नृत्य कर रही थीं, फिर भी बीच-बीचमें बादशाह की ओर देख लेती थीं। घुँघुरू तथा तबले की ध्वनि से बादशाह के कान अभ्यस्त हो चुके थे। वह उसी अवस्था में नेत्र बन्द किये हुये पड़े रहे। वहाँ की उपस्थित गायिकाओं ने ऐसा सुन्दर नृत्य पहले कभी न देखा था। वे आत्म-विस्मृत हुई जा रही थीं। काफी देर तक नृत्य करने के पश्चात् भी जब कोई परिणाम न निकला तो लालकुँअरि ने उसने नृत्य को एक क्षण के लिये विराम दिया और आलाप भरी। कक्ष का समस्त वातावरण ध्वनित हो उठा। आलाप की ध्वनि बादशाह

के कानों में भी पडी। आवाज कुछ परिचित-सी लगी। उन्होंने नेत्र खोले। लाल कुँअरि को जब नृत्य की मुद्रा में आलाप भरते हुये देखा तो उठकर बैठ गये। इसका उन पर जादू का-सा प्रभाव पड़ा। बादशाह को उठकर बैठते हुये लालकुँअरि ने देख लिया था क्योंकि उन्हीं की ओर मुँह किये वह आलाप भर रही थीं। अपने प्रयास में सफलता पा उनका मन प्रसन्नता से भर गया। अपने स्वर में और अधिक मधुरता तथा सरसता लाते हुये उन्होंने वह गीत गाना प्रारम्भ किया जिसे वह सबसे अधिक पसन्द करते थे और बारम्बार आग्रह करने पर भी उन्हें कभी-कभी ही उसे सुनने का सौभाग्य प्राप्त हो पाता था। आज बिना आग्रह के ही वही गीत सुनने का अवसर था। संगीत की सरसता ने समस्त वातावरण को संगीतमय बना दिया। गायिकायें झूमने लगीं। बादशाह भी अपनी वर्तमान अवस्था को भूलकर संगीत का रसास्वादन तन्मय होकर करने लगे। गीत के आरोह—अवरोह के साथ उनका हृदय भी गति-शील हो उठा। हृदय की प्रसन्नता मुँह तक आने के लिये मचलने लगी। वह इतने तन्मय होकर गा रही थीं कि नेत्र धीरे-धीरे स्वतः बन्द हो गये थे। गीत समाप्त हुआ। बादशाह के मुँह से सहसा निकला, "वाह! कमाल कर दिया।"

लालकुँअरि ने गाना समाप्त करने के पश्चात् धीरे से नेत्र खोले। उनके कानों ने अपनी प्रशंसा सुनी और नेत्रों ने बादशाह का मुस्कराता हुआ चेहरा देखा।

वह भी मुस्कराती हुई बादशाह के बगल में जाकर बैठ गईं। इस समय तक इस कार्यक्रम में सहयोग देने वाली एक-एक करके बाहर जा चुकी थीं। परिश्रम के परिणामस्वरूप चेहरे पर झलकते हुये प्रस्वेद को पोछते हुये लालकुँअरि ने पूछा हुजूर को गाना पसन्द आया ?"

"वाह ! यह भी कोई पूछने की बात है। जब कोई चीज किसी की पसन्द को ख्याल में रखकर गाई जाती है तब उसमें नापन्दगी का सवाल ही नहीं उठता। आज तो तुमने मेरी पसन्द का वह गाना गाया है जिसको सुनने के लिये मैं अक्सर तुमसे फरमाइश किया करता था।"

"इस गाने के पहले कल रात में मैंने ऐसे बहुत से काम किये हैं जो आप को पसंद थे, मगर उनमें से कोई भी आपको खुश न कर सका, इसलिए मैंने समझा कि शायद उन्हीं की तरह यह भी न पसन्द आया हो।'

"गाने में वह कशिश है बेगम कि जानवर को भी अपनी ओर खींच लेता है, फिर मैं तो एक इनसान हूँ। इधर कई दिनों से तुम्हारा यहाँ गाना सुनने की तमन्ना भी थी।"

"फिर, आपने मुझे गाने के लिए हुक्म क्यों नहीं दिया ?"

"मैं नहीं चाहता कि तुम्हें तकलीफ हो।"

"इसमें तकलीफ की क्या बात। यह तो मेरा पेशा है।"

"अब भी तुम अपने को पेशेवर ही समझती हो ?"

"क्यों नहीं, जिस पेशे ने मुझको आपसे मिलाया, उसका अहसान कैसे भुलाया जा सकता है।"

"लेकिन तुमने तो कुछ दिन पहले कहा था कि तुमने अपना पेशा छोड़ दिया है ?"

"हाँ कहा था और वाकई मैं छोड़ भी दिया था, लेकिन आज मुझे तजुर्बा हुआ कि अपना पेशा छोड़ देने पर किसी का गुजारा होना कितना मुश्किल होता है।"

"सो कैसे ?"

"मैंने महसूस किया कि जिस चीज के जरिये मैं आपको हासिल कर सकी हूँ अगर उसी को छोड़ दूँगी तो इसका मतलब होगा आपको खो देना।'

"यह तुम क्या कह रही हो ?"

"मैं जो कुछ कह रही हूँ, ठीक कह रही हूँ। कल से मैं यह देख रही हूँ कि आपको मुझसे नफरत होती जा रही है। मैंने तमाम कोशिशें कीं इस नफरत को प्यार में बदलने की, मगर मुझे किसी में भी कामयाबी हासिल न हुई। आखिर, मुझे आपको खुश करने के लिए उसी चीज का सहारा लेना पड़ा जिससे मैं दूसरों को भी खुश किया करती थी।"

"तो क्या तुमने यह समझ लिया कि मैं तुमसे नफरत करने लगा हूँ ?"

"बेशक।"

"यह तुम्हारी नासमझी है। मुझे तुमसे नफरत नहीं, बल्कि अपनी इस ादशाहत से नफरत होती जा रही है।"

"किसलिए ?"

"मैंने अभी तक समझा था कि बादशाहत बहुत बड़ी चीज होती है। ादशाह के लिए ऐसी कौन चीज है जो नामुमकिन है, लेकिन आज समझ गया कि यह कितनी नाचीज है।"

'यह आप क्या कह रहे हैं, जिसको पाने के लिए लोग अपनी जान की बाजी लगा देते हैं, वह भला मामूली चीज कैसे हो सकती है ?"

"यही तो इन्सान की नासमझी है। जिस चीज को अपनी बनाने के लिए इन्सान को जान की बाजी लगानी पड़े, वह उसकी कभी नहीं हो सकती, वह कभी-न-कभी उससे जरूर दूर हो जायगी। रिश्ता वही मुस्तकिल होता है जो दोनों ओर से किया जाता है। एक ओर से कोशिश किया हुआ रिश्ता जबर-दस्ती का होता है, दिल का नहीं।"

"बादशाहत में जबरदस्ती की कौन चीज है ?"

"बादशाहत में बादशाह और रियाया के बीच एक रिश्ता होता है। रियाया कभी भी नहीं चाहती कि उसके ऊपर कोई हुकूमत करे। सभी आजाद रहना चाहते हैं। और मुझे तो कुछ ऐसे आसार नजर आ रहे हैं कि कभी-न-कभी ऐसा वक्त जरूर आयेगा जब इस दुनियाँ से बादशाहत का नामोनिशान तक मिट जाएगा। कोई बादशाह नहीं होगा। सब आजाद होंगे। कोई किसी पर हुकूमत नहीं करेगा।"

"ऐसी हालत में तो 'जिसकी लाठी उसकी भैंस' वाली बात होगी। जो ताकतवर होगा उसी की जिन्दगी चैन से कटेगी। कमजोर इनसान को तो जिन्दा रहने का भी हक नहीं रहेगा, ऐसी हालत से ही तो बचने के लिए इनसान ने इस बादशाहत को पैदा किया है।"

"अब वह वक्त नहीं रहा। दुनिया काफी आगे बढ़ चुकी है। इन्सान अब वैसा नासमझ नहीं रहा जैसा पहले था। अब तो वह ऐसा इन्तजाम करेगा जिसमें अमनोचैन भी रहेगा और कोई हुकूमत करने वाला भी नहीं होगा।"

"ऐसा तो नामुमकिन है कि हुकूमत के बिना अमनोचैन रह सके।"

"ऐसी बात नहीं है कि हुकूमत नहीं रहेगी। हुकूमत रहेगी, लेकिन वह किसी एक की न होकर सबकी मिली-जुली होगी।"

"मतलब ?"

"मेरे कहने का मतलब है कि रियाया खुद हुकूमत करेगी।"

"रियाया बादशाह पर हुकूमत करेगी ?" बीच में ही ताजकुँअरि ने प्रश्न किया।

"रियाया बादशाह पर नहीं, खुद अपने ऊपर हुकूमत करेगी।"

"तब तो बड़ा मजा रहेगा। सभी बादशाह बनने की कोशिश करेंगे और आपस में लड़ेंगे।"

"बादशाह का नामोनिशान नहीं होगा। रियाया अपने नुमाइन्दे चुनेगी और वे ही नुमाइन्दे उन पर हुकूमत करेंगे।"

"तो यह कहिए कि एक बादशाह न होकर कई बादशाह होंगे।"

"वे बादशाह न होंगे। वे रियाया की मर्जी पर हुकूमत के ओहदे पर रह सकेंगे। जब रियाया चाहेगी तब उन्हें हटा देगी।"

"ऐसी हालत में तो सभी बराबर होंगे। न कोई बादशाह होगा और न कोई रियाया, पर कोई भी जुल्म न होगा। सभी अमनोचैन की जिन्दगी गुजार सकेंगे।"

"ऐसा जमाना दूर नहीं है, जल्दी ही आने वाला है।"

"जब आयेगा तब आयेगा, आप अभी से क्यों उसकी इतनी फिक्र कर रहे हैं ?"

"मैं उसकी फिक्र नहीं कर रहा हूँ, अगर वह आज आ जाय तो मैं उसका खुशी से इस्तकबाल करूँ। मैं तो अपनी मजबूरी पर अफसोस कर रहा था।'

"मुझे तो ऐसी कोई मजबूरी नजर नहीं आ रही है जो आपको इतना परेशान करे।"

"है क्यों नहीं। मैं बादशाह होकर भी तुम्हारी छोटी-सी ख्वाहिश पूरी नहीं कर सका।"

"आपने भी कमाल कर दिया। वह तो मैंने यों ही कह दिया था। यह तो मैं खुद भी जानती हूँ कि रोजाना रोशनी नहीं की जा सकती। अगर मेरी मामूली हँसी की बात ने आपको कल से इतना परेशान कर रक्खा है तो मैं उसके लिए माफी मांगती हूँ।" जानबूझ कर अनजान बनते हुए लालकुँअरि ने कहा।

"इसमें माफी मांगने की कोई बात नहीं, हाँ, मगर इतना कह सकता हूँ कि तुम्हारी मामूली-से-मामूली बात मुझे गमगीन बनाने के लिए काफी है।"

"उसका इलाज भी मेरे पास है। आपकी उस गमगीन हालत को दूर करने के लिए ही मुझे आज गाना पड़ा है।"

"फिर तो रोजाना गमगीन होना मैं अपनी खुशकिस्मती समझूँगा।"

"और मुझे यूँही नाचना गाना पड़ेगा।"

दोनों की प्रसन्नता का स्वर एक साथ कक्ष को ध्वनित कर उठा।

O

जहाँदारशाह और लालकुँअरि की जीवनधारायें एकाकार होकर प्रवाहित होने लगीं थीं। जीवन चिन्तारहित हो गया था। संसार में एक दूसरे को छोड़ कर उनके लिए कोई न था। बादशाह के जीवन की गति लालकुँअरि बन चुकी थीं। उनके बिना उनका गतिहीन-सा हो जाने की सम्भावना थी। लाल-कुँअरि ने भी उन्हें ही अपना जीवनाधार समझ लिया था। बादशाह भी लालकुँअरि को अपना सर्वस्व समझ चुके थे, उन्हीं के हावो-भावों में डूबे रहना

उनका स्वभाव बन गया था। राज-काजों के प्रति उनकी उदासीनता चरम-सीमा का स्पर्श कर रही थी। शनैः शनैः शासन सूत्र लाल साहब के हाथ में आता जा रहा था। बढ़ती हुई शक्ति के सामने सभी सिर झुकाते हैं। लाल साहब को दिन-पर-दिन शक्तिशाली होता हुआ देख दरबार के सभी अमीर-उमरा और सामन्तगण उसकी आज्ञा को ही राजाज्ञा समझ शिरोधार्य करने लगे। आवश्यकता से अधिक शक्ति हाथ में आजाने के कारण लाल साहब की महत्वाकांक्षायें भी दिन दूनी रात चौगुनी बढ़ने लगी थी, परन्तु महत्वाकांक्षायें शक्ति की ओर उन्मुख न होकर जीवन के भौतिक सुखों की ओर थीं। शक्ति के मद में वह मदान्ध हो गये थे। उचित-अनुचित का विवेक किये बिना ही वह कार्य कर बैठते थे, जिसके परिणामस्वरूप अत्यधिक निकटवर्ती कर्मचारी अपनी इच्छानुकूल आज्ञायें लाल साहब से प्रसारित करवा लेते थे।

शक्ति और सौन्दर्य का परस्पर आकर्षण स्वाभाविक है। सुन्दरता शक्ति की पुजारिन है। शक्ति को अपने में डुबाकर मिटा देना ही मानो उसके जीवन का एक मात्र ध्येय हो। सुरा सुन्दरता की दासी है। शक्ति को वश में करने के लिए उसे इसका सहारा लेना पड़ता है। सर्वप्रथम उसकी दासी पुरुष को विवेकहीन बनाती है, क्योंकि विवेक रखते हुये कोई पुरुष कभी भी सौन्दर्य में अपने अस्तित्व को विलीन नहीं कर पाता। सुरा के वशीभूत हो जाने के पश्चात सुन्दरता को उस पर नियन्त्रण पाना बायें हाथ का खेल बन जाता है। लाल साहब की मदिरा की मात्रा में अनियन्त्रित वृद्धि हो रही थी। वह दिन-रात उसी में डूबे रहते थे। नित नवीन सुन्दरियाँ लाल साहब के मनोरंजनार्थ भेजी जाने लगी थीं। जो भी कोई अनुचित कार्य करना चाहता था, किसी-न-किसी सुन्दरी के साथ लाल साहब की सेवा में जा उपस्थित होता था। शक्ति का बाँध टूटने लगा। धारा बह चली। एक धारा अनेक धाराओं में विभक्त होकर अनेक दिशाओं की ओर प्रवाहित हो उठी। स्वार्थान्ध कर्मचारी शक्ति के सरदार बन गए। उनमें से अधिकांश ने बादशाह और लाल साहब का अनुसरण किया। सम्पूर्ण अधिकारी विलासी बन गए। जिन हाथों में शासन रहा

करती थी, उनमें सुरापूरित पात्र भी सम्हाल सकने की सामर्थ्य न रही; जिन कानों को रणवाद्य भी वधिर न बना सके थे, उन्हें घुँघुरुओं की आवाज के अलावा कुछ भी सुनाई न देने लगा था; जो नेत्र रक्तरञ्जित शत्रु को ही देखना पसंद करते थे, वे केवल सुन्दरियों के कपोलों पर सुरा-जनित लालिमा को देखकर संतुष्ट रहने लगे थे; जो शरीर रणस्थल में लाशों के साथ सोने के अभ्यस्थ थे, वे ऊँची-ऊँची अट्टालिकाओं में सुन्दरियों के साथ सुख की नींद लेने लगे थे। कर्त्तव्यपरायणता लुप्त हो गयी थी। सम्पूर्ण वातावरण सुरा और सुन्दरीमय हो गया था।

महल में लालकुँअरि का एक मात्र शासन था। उनकी इच्छा के प्रतिकूल एक तिनका भी इधर-से-उधर नहीं हो सकता था। वहाँ की प्रत्येक गतिविधि का निरीक्षण वह स्वयं करती थीं। वह नेत्रों से सुनने की अभ्यस्त हो गई थीं। उनके मुंह से निकले हुए शब्द ही कानून थे। उनकी कृपादृष्टि किसी को भी उन्नति के शिखर पर बैठा देती थी और यदि कोई उनकी कुदृष्टि का शिकार हुआ तो सीधे यमपुर को प्रस्थान कर जाता था। सम्पूर्ण महल उनकी शक्ति-सम्पन्नता से आतंकित था। बादशाह ने अपने सभी अधिकार लालकुँअरि को सौंप दिये थे और वह उनका स्वतंत्र रूप से प्रयोग करने लगी थीं। सम्पूर्ण महल ने उनकी सत्ता सिर झुकाकर स्वीकार कर ली थी। महल में केवल एक ही ऐसा व्यक्तित्व था जो लालकुँअरि से अप्रभावित था और वह थीं बादशाह की बुआ बेगम जन्नतुन्निसा। उन्हें लोग उनकी वृद्धावस्था के कारण 'दादी' कह कर सम्बोधित करते थे। उनकी अवस्था अस्सी को पार कर चुकी थी। उन्होंने कई मुगल बादशाहों के उत्थान और पतन को देखा था और उनके कारणों पर भी विचार किया था। यद्यपि उनकी दृष्टि दिन-पर-दिन क्षीण होती जा रही थी, फिर भी उनके कान तो बात को उनके मस्तिष्क तक पहुँचा ही देते थे। महल में कुछ ऐसी भी दासियाँ थीं जो दादी को सभी प्रकार की खबरें दिया करती थीं और उनके बदले में पुरस्कार प्राप्त करती थीं। एक आध तो इस पुरस्कार के लालच में लालकुँअरि की क्रोधाग्नि का ग्रास भी बन चुकी

थी। वृद्ध आदमी का शरीर जितना ही अशक्त होता जाता है उसका मुँह उतना ही शक्तिशाली होता जाता है। ऐसा प्रतीत होता है मानों शरीर के विभिन्न अंगों ने अपनी संचालन-शक्ति को बटोर कर मुँह को उपहारस्वरूप दे दिया हो और उस उपहारस्वरूप प्राप्त शक्ति का सदुपयोग करने में मुँह न चूकता हो। वह किसी-न-किसी बात की दिन-रात आलोचना किया करती थी और बादशाह के राजकीय कार्यों की उपेक्षा का एक मात्र जिम्मेदार लाल-कुँअरि को ही समझती थी। उन्हें वह शासन का शत्रु समझने लगी थी, अतएव लालकुँअरि की प्रत्येक आज्ञा का विरोध करना उनका स्वभाव बन गया था। लालकुँअरि उनका सम्मान करती थी, क्योंकि बादशाह स्वयं अपनी बुआ का सम्मान करते थे। बादशाह के पिता बहादुरशाह भी अपनी बहिन का बहुत आदर करते थे। इसलिए बेगम की धाक महल में पहले से ही चली आ रही थी। जो इतने दीर्घकाल से शासन करता चला आ रहा हो वह भला कल बनने वाली बेगम के नियन्त्रण में कैसे रह सकती थी। परिणामस्वरूप दोनों में विरोध बढ़ने लगा। एक दूसरे को दोनों शत्रु समझने लगीं। सत्ता अपना विरोध कभी नहीं सह सकती। लालकुँअरि कभी-कभी बेगम साहबा की आलोचनाओं की उपेक्षा कर जाती, लेकिन उनकी उपेक्षा उनकी विरोधाग्नि को प्रज्वलित करने में सहायक होती। लालकुँअरि को कभी-कभी बेगम साहबा की बातें असह्य हो उठतीं लेकिन वह उनके विरुद्ध कोई भी कदम उठाना उचित न समझती थी। जरा-जरा-सी बात पर झगड़ा हो जाती थी। झड़प के समय दादी महल सिर पर उठा लेती और जो कुछ भी उनके मन में आता बक डालती। अन्त में, लालकुँअरि को ही कुछ सोच-समझ कर शान्त हो जाना पड़ता। दोनों एक दूसरे को फूटी आँख भी देखना पसन्द न करने लगीं। यदि सम्भव होता तो दोनों एक दूसरे को खा डालतीं। बादशाह के दोनों लड़कों, जिनसे दादी बहुत ही स्नेह करती थी, सदैव अपने पास ही रखती थी, वे दोनों दादी के कान भरा करते थे। इस बात से लालकुँअरि परिचित थी, इसलिए वह उन्हें भी अपना शत्रु समझने लगी थी।

महल के इन दो विरोधी दलों के कारण खवासों और खवासिनों में भी दो दल बन गये थे। पुराने लोग तो दादी की ही बात का समर्थन करते, परन्तु खुलकर नहीं, जबकि नये लोग खुलकर लालकुँअरि का पक्ष लेते थे; इसी में वे लोग अपना भला समझते थे; क्योंकि पदोन्नति की शक्ति लालकुँअरि के ही पास थी। लालकुँअरि के द्वारा रखे गये सेवक उन्नति करते चले जा रहे थे जबकि पुराने कर्मचारी उन्नति करने की अपेक्षा कभी-कभी किसी त्रुटि के कारण अवनति के भी शिकार हो जाते। इस पक्षपात को देखकर पुराने कर्मचारी भीतर-ही-भीतर लालकुँअरि के विरोधी होते गये। कभी-कभी खवास और खवासिनें आपस में ही भिड़ जाया करते जिसकी खबर लालकुँअरि के कानों तक पहुँचती; परन्तु वह इन लोगों के झगड़ों में पड़ना पसन्द न करतीं और जानबूझ कर उपेक्षा कर जातीं।

खुर्शीद, जो लालकुँअरि की मुँहलगी दासी थी, खवासों के आकर्षण का केन्द्र बनी हुई थी। उसके प्रति आकर्षण के दो कारण थे। एक तो वह सबसे अधिक सुन्दर थी और दूसरे वह लालकुँअरि के नजदीक पहुँचने की ताकत रखती थी। लालकुँअरि की दृष्टि में उसका स्थान अब भी पूर्ववत् था। परिणामतः खुर्शीद के दिमाग आसमान पर थे। उसकी जबान बड़ी तेज थी। किसी को भी वह किसी समय टका-सा जवाब दे सकती थी, किसी का स्वागत वह कोड़ों से करवा सकती थी और किसी को भी नौकरी तक से निकलवा सकती थी। कभी-कभी उसका व्यवहार इतना अशिष्ट हो जाता था कि दूसरों के लिए वह द्वेष का कारण बन जाता। बादशाह और लालकुँअरि को छोड़ वह किसी को कुछ न समझती थी। सभी खवास और खवासिनें उसके लिए भुनगे के समान थे। गुस्सा तो सदा नाक पर ही बना रहता था। चलती थी तो ऐसे अकड़कर मानों तीनों लोकों के शासन का छत्र उसके ही सिर पर हो।

एक दिन, प्रातःकाल, वह किसी कार्यवश दादी के कमरे के सामने से गुजर रही थी कि उसके पैरों की आहट सुनकर उसकी ओर बिना देखे हुए ही दादी ने कहा, "जरा अजीज को तो बुला देना।"

जहाँदारशाह के बड़े पुत्र का नाम अजीजुद्दीन था, परन्तु दादी उसे प्यार से 'अजीज' ही कहकर पुकारती थी। दादी की बात खुर्शीद के कानों में पड़ी। वह रुक गयी और अपने उग्र स्वभाव का परिचय देते हुए बोली, "क्या दिखाई नहीं देता कि मैं कौन हूँ?"

"कौन है?" स्वर के द्वारा अनुमान करके दादी बोली, "जरूर खुर्शीद होगी। बेगम ने तेरा दिमाग आसमान पर चढ़ा रखा है।"

"आसमान पर दिमाग होंगे उनके जिन्हें आपकी शह मिली हुई है। न काम के न धाम के। दिन रात मटरगश्ती किया करते हैं।"

"तू कितनी कामकाजिन है। यह मैं खूब अच्छी तरह जानती हूँ। बेचारी दिन-रात काम के बोझ की वजह से दबी जा रही है। अरी, ये छल छद्दर किसी और को दिखाना। इन आँखों ने तेरी जैसी सैकड़ों देखी-परखी हैं। तमीज से बात कर वरना जबान खींच लूँगी।'

"फिर तो, बेगम साहिबा के पास सीधी जा रही हूँ। जो आप के लिए हो उठा न रखिएगा।"

'ठहर तो बदज़ात!' "लाठी को सम्हाल उठने का उपक्रम करते हुए दादी ने कहा, "अभी तुझे जहन्नुम पहुँचवाती हूँ। खाल खिंचवा कर भूसा न भरवा दूँ तो मेरा नाम नहीं।" वह धीरे-धीरे हिलती-डुलती बाहर की ओर चली।

पहले तो खुर्शीद रुकी और मन में आया कि कुछ जवाब दे, लेकिन जब दादी को उठ कर अपनी ओर आते देखा तो अपनी खैर न समझकर वहाँ से सीधे लालकुँअरि के कमरे की ओर चल दी। इतनी कड़ी बात आज तक उसने अपने लिये किसी के मुँह से न सुनी थी। लालकुँअरि ने भी कभी उसके साथ ऐसा व्यवहार न किया था। उसके आत्मसम्मान को धक्का लगा। सम्मान के विरुद्ध कही गई बात पर यदि व्यक्ति शक्तिशाली हुआ तो उसमें प्रतिशोध की आग भड़कती है और यदि वह प्रतिशोध लेने में अपने को असमर्थ पाता है तो फिर उसका हृदय रो उठता है। खुर्शीद में इतनी शक्ति नहीं थी कि वह दादी से बदला ले सके, फलतः उसका हृदय रो पड़ा और

आँसू वहाती हुई वह आगे वढ़ गई।

दादी के जीवन में भी यह पहला अवसर था जब किसी नौकरानी ने उनकी प्रतिष्ठा के विरुद्ध इतनी कड़ी वात कही थी। वहादुरशाह के समय से प्राप्त प्रतिष्ठा और सम्मान में तपा हुआ स्वभाव अपनी आज्ञा की अवहेलना एक नौकरानी के द्वारा किसी भी प्रकार सहन नहीं कर सकता था। यद्यपि उनका स्वभाव वहुत कुछ चिड़चिड़ा हो गया था, फिर भी उनकी आज्ञा चाहे उचित हो या अनुचित उसका उल्लंघन कोई नहीं करता था। आज एक तुच्छ सेविका ने उनके सम्मान को धक्का पहुँचाया था। वह भला इसे कैसे सहन कर सकती थीं। वह क्रोध से पागल हो रही थीं। शरीर थर-थर काँप रहा था। पैर डगमगा रहे थे, फिर भी, लकड़ी के सहारे लालकुँअरि के कमरे की ओर वढ़ रही थीं क्योंकि वह जानती थीं कि लालकुँअरि ने ही उसे सिर चढ़ा रखा है और वह जरूर उन्हीं के यहाँ गई होगी। खुर्शीद और दादी की गरमा-गरम वात सुनकर, पास के कार्यों में व्यस्त, कर्मचारी घटना-स्थल पर एकत्र हो गये थे और दोनों के वाद-विवाद का आनन्द ले रहे थे। इनमें से अधिकांश खुर्शीद के शत्रु ही थे वे सोच रहे थे कि खुर्शीद ने आज अच्छे घर वायन दिया है! कुछ-न-कुछ जरूर गुल खिलेगा, परन्तु यह विचार अधिक देर तक न टिकने पाया, क्योंकि वे यह भी जानते थे कि खुर्शीद लालकुँअरि की कितनी मुँह-लगी है। उसके कहने भर की देर होती है कि लोगों की खाल उधड़ दी जाती है और नौकरी से निकाल दिया जाता है। इन्हीं विचारों में सभी कर्मचारी डूबे हुये लुक-छिपकर दादी के पीछे-पीछे आगे वढ़ने लगे।

खुर्शीद ने लालकुँअरि के कमरे में प्रवेश किया। यह जानने के लिये कि कौन आया है लालकुँअरि ने घूम कर देखा तो दृष्टि खुर्शीद पर पड़ी। खुर्शीद के नेत्रों से आँसू टप-टप गिर रहे थे। उनकी आँखों में आँसू देखकर आश्चर्ययुक्त वाणी में लालकुँअरि ने प्रश्न किया, "अरे तू तो रो रही है! क्या हो गया?"

शीघ्रता से हाथ की वस्तु यथास्थान रख वह अपने आँचल से आँसू

पोंछने लगी, परन्तु वह जितना ही उन्हें पोंछने का प्रयास करती वे उतनी ही तेज़ी से बाहर आने का उपक्रम कर रहे थे। लालकुँअरि ने जब अपनी बात का गुनींद से उत्तर नहीं पाया तो तेज स्वर में पूछा, "बताती क्यों नहीं कि क्या हुआ है ?"

"कुछ नहीं।" कहते ही वह फफककर रो पड़ी। इतनी जोर से फूट-फूट कर रोते देख लालकुँअरि अपने को न रोक सकीं, । वह पलंग से उठकर उसके पास गईं और उसके हाथों को मुँह से हटाते हुये पूछा, "तू इतनी जोर-जोर से रो रही है और कहती है कि कुछ हुआ ही नहीं। किसी ने कुछ कह दिया क्या ?"

"बताने से क्या फायदा ?" गुनींद ने सिसकियाँ भरी, "किसकी मजाल है जो मेरे रहते हुये तेरी ओर आँख उठा कर भी देखे। मैं उसकी अभी खबर लेती हूँ। मगर, तू बोल भी तो किसने क्या कहा है ?"

"दादी ने सबके सामने......।" कहते ही उसका गला रुँध गया। वह आगे कुछ न कह सकी। लालकुँअरि ने भी आगे सुनने की आवश्यकता नहीं समझी। तत्काल उनकी प्रतिक्रिया व्यक्त हो गई, "वह मेरे पीछे हाथ धोकर पड़ी है। योगी से न जीते मठ के कान उमेठे। जब मुझसे बस न चला तो तुझसे बदला लेने पर उतारू हुई है।"

लालकुँअरि अनेक बार अपनी नौकरानियों की बेइज्जती होते हुये सुन चुकी थीं, लेकिन कभी भी ध्यान न दिया था। आज तो उनकी उस दासी का अनादर किया गया था जो केवल दासी ही थी, बल्कि सहेली भी थी। बचपन से साथ-ही-साथ खाई-खेली थी, नृत्य और गान की शिक्षा भी पाई थी। हमेशा दुख-सुख में साथ देती आई थी। अतएव ऐसी आत्मीय दासी के साथ किये गए दुर्व्यवहार का बदला लिये बिना वह कैसे रह सकती थीं। गुनींद की बात ने उनके शरीर में आग दी थी। बादशाह की ओर झटके के साथ मुड़ते हुये उन्होंने कहा, "इधर मैं काफी दिनों से देख रही हूँ कि दादी सारे दिन किसी-न-किसी की बेइज्जती कर डालती है। मैं यह कभी भी

बरदाश्त नहीं कर सकती कि मेरी कनीजों को इस कदर सरेआम बेइज्जत किया जाय।"

"मुझसे तुम यह सब क्यों कह रही हो।" बादशाह ने उपेक्षा व्यक्त की।

"आप से न कहूँ तो फिर किससे कहूँ। आप ही की तो शह पाकर वह इस तरह का बर्ताव हम लोगों के साथ कर रही हैं।"

"मैं किसी को शह-वह क्यों देने लगा। उनका मिजाज ही ऐसा है। उनके मुँह लगना ही नहीं चाहिये।"

"आप भी इस वक्त मुझे नसीहत देने लगे हैं। आप की यही तो चिकनी चुपड़ी बातें मुझे अच्छी नहीं लगतीं।"

"उनके मामले में कोई कर ही क्या सकता है?"

"कोई कुछ कर सके या न कर सके, लेकिन मैं तो कम-से-कम इस तरह अपनी बेइज्जती बरदाश्त नहीं कर सकती।"

"इसमें तुम्हारी क्या बेइज्जती हो गई?"

"मेरी बेइज्जती नहीं तो और किसकी है। मैं अपनी नौकरानियों की बेइज्जती अपनी ही बेइज्जती समझती हूँ। दादी के हौसले दिन-पर-दिन बढ़ रहे हैं। मुझे तो ऐसा मालूम होता है कि एक दिन इसी तरह मुझे भी बेइज्जत कर बैठेंगी।"

"तुम भी कैसी बच्चों की तरह बात कर रही हो। इतनी किसमें हिम्मत है जो तुम्हारी तरफ आँख उठा कर भी देखे।"

"किसी में हिम्मत हो या न हो मगर दादी में जरूर है। मैं तो यहाँ तक कह सकती हूँ कि वह मेरी ही नहीं किसी दिन आप की भी बेइज्जती कर सकती हैं।"

"अगर वह मुझे कुछ कह भी लेंगी तो मैं बुरा न मानूँगा।" बादशाह ने कहकर मुस्करा दिया। बादशाह की मुस्कान ने लालकुंअरि की क्रोधाग्नि में घी का काम किया। वह नागिन की भाँति फुफकार उठीं, "आप सह सकते हैं, क्योंकि वह आप की दादी हैं, लेकिन दूसरा कोई क्यों उनकी डाँट-फटकार

सहेगा ? मैं तो सिर्फ आप का लिहाज करती हूँ, वरना आज मैं उन्हें ऐसा मजा चखाती कि वह भी याद करती कि किसी से पाला पड़ा था।"

बादशाह ने अभी तक लालकुँअरि का मधुर सतोगुणमय स्वर ही सुना था। आज उनका क्रोधित स्वर सुन कर उनको विश्वास ही न हो रहा हो था कि लालकुँअरि का ही वह स्वर है। लालकुँअरि की रोषपूर्ण मुद्रा को देख कर उन्होंने इस बला को टालने की नियत से कहा, "अरे, मुझे क्यों बिना वजह इसमें फाँस रही हो। यह तुम्हारा उनका मामला है। तुम जानो वह जानें मैं कुछ नहीं जानता।" सुराही से प्याले में शराब उँड़ेलते हुए बोले "मुझे तो सिर्फ............।"

"फिर मैं अभी जाकर उन्हें आखिरी बार आगाह किये देती हूँ कि आइन्दा वह मेरी नौकरानियों से इस कदर पेश न आया करें।"

ज्योंही लालकुँअरि द्वार की ओर बाहर जाने के लिये मुड़ी त्योंही दादी लाठी के सहारे सामने ही आती हुई दिखाई दी। वह उन्हें देखकर सहम-सी गईं। दादी के क्रोध से काँपते हुये शरीर को देखकर लालकुँअरि का गुस्सा न जाने कहाँ गायब हो गया। वह कुछ भी निश्चय न कर सकीं कि क्या करना चाहिये। दादी ने लालकुँअरि की अन्तिम बात सुन ली थी, इसलिये उसी को पकड़ते हुये उन्होंने कहा, "तुम्हें मेरे पास आने की क्या जरूरत। मैं तो खुद ही सुनने आ गई हूँ। जरा सुनूँ तो कि तू क्या हुक्म देती है ?"

अपने लिये 'तू' का सम्बोधन सुन कर लालकुँअरि का पारा गर्म हो गया, परन्तु क्रोध को पीते हुये शान्त स्वर में उन्होंने कहा, "चलो, यह भी अच्छा हुआ कि आप यहीं आ गईं। आज मेरा और आपका फैसला इन्हीं के सामने हो जाएगा।"

"मेरी बात का फैसला यह कल का लौंडा करेगा। होगा बादशाह जिनके लिये होगा। इसके बाप ने तो कभी मेरी बात का फैसला करने की हिम्मत की नहीं। भला यह क्या करेगा मेरा फैसला।"

बेगम साहबा आपे से बाहर हुई जा रही थीं। जब वह क्रोधित होती थीं

तो बिना सोचे-समझे जो कुछ भी मन में आता था बक डालती थीं। लालकुँअरि अभी तक तो अपने को संयत किये हुये थीं, लेकिन जब उन्होंने यह देखा कि उनके सामने बादशाह की बेइज्जती हो रही है तो उनके संयम का बांध टूट गया और निर्देशात्मक स्वर में कहा, "देखिये, अब आप हद से बाहर जा रही हैं। आप अपनी जबान को लगाम दें।"

"अच्छा, तो तू मेरी जबान में लगाम लगायेगी। कल की छोकरी मेरी जबान में लगाम लगाने चली है। पहिले तू अपनी नौकरानियों की जबान में लगाम लगाकर देख फिर मेरी जबान की बाबत सोच।"

"देखिये, मैं आप के साथ तहजीब से पेश आ रही हूँ और आप······।"

"अच्छा तो तू मेरे साथ तहजीब के साथ पेश आ रही है और मैं तेरी बेइज्जती कर रही हूँ। कल तक दर-दर की खाक छानने वाली रंडी मुझे तहजीब सिखाने चली है। यह कह कि तेरी किस्मत थी कि तू हिन्दुस्तान की बेगम बनी बैठी है; वरना न जाने क्या हालत होती।"

बेगम साहबा के मुँह में अपने प्रति 'रंडी शब्द सुन कर वह आपे से बाहर हो गईं और फुफकारती हुई बोलीं, "बस ! अब हद हो गई। अगर एक भी लफ्ज मेरी शान के खिलाफ निकाला तो·········।"

"तो क्या करेगी ? मारेगी ? खा डालेगी ? ले खा, मैं खड़ी हूँ।" लाठी को ठीक से जमीन पर टेकते हुये बेगम साहबा ने कहा। "अगर आपकी जगह दूसरा होता तो खा ही डालती। आप बादशाह सलामत की बुआ हैं,इस लिये कुछ नहीं कह पा रही हूँ।"

"अरे अब भी कुछ कहने को बाकी रह गया है। इतनी बेइज्जती करने के बाद भी बादशाह के रिश्ते का अहसान जता रही है। अगर इसने" बादशाह की ओर लाठी से संकेत करते हुए, "वाकई में रिश्ता माना होता तो क्या मैं ए ए ए र ई ई" कहते-कहते मुँह के बल वह वहीं फर्श पर गिर पड़ीं। लालकुँअरि दो कदम पीछे हट गईं। आस-पास छिपे हुए जो कर्मचारी वार्तालाप को सुन रहे थे, किसी के गिरने की आहट पाकर उस ओर को बढ़े,

लेकिन परिणाम की कल्पना ने उनकी इच्छा का वहीं दमन कर दिया। मुर्शीद ने जो कि वहीं दीवाल की बगल में छिपी हुई बात सुन रही थी, आगे बढ़ कर दादी को गिरा हुआ देखा, लेकिन फिर पीछे हट गई। बादशाह ने पलंग से उतर कर उन्हें उठाने का प्रयास किया। उनको उठाते हुए देखकर पास की कई नौकरानियाँ सहायतार्थ आ गईं। दादी को उठाकर उनके कमरे में लिटाया गया। हकीम साहब को बुलवाया गया। उन्होंने दादी की भली-भाँति देख-भाल की। सिर फटजाने के कारण अधिक खून निकल गया था जिससे चेहरा सफ़ेद पड़ गया था। बादशाह के दोनों लड़के तब तक वहाँ आ उपस्थित हो गए थे। वे अपने सहारे की लौ को बुझते हुए देख रहे थे। घाव को धोकर पट्टी बाँध दी गई थी। इसके पश्चात् कुछ दवा पिलाई गई, लेकिन वह गले के नीचे न उतर सकी। हकीम साहब ने पास की पड़ी हुई चौकी पर बैठकर गहरी साँस लेते हुए कहा, "हालत खराब नजर आ रही है। अब तो खुदा ही इनका मालिक है। इन्सान के काबू के बाहर की बात हो चुकी है।"

बादशाह कुछ क्षणों तक तो वहाँ रुके, परन्तु उनके मदिरा-पान का समय हो जाने के कारण उसका अभाव उन्हें बेचैन किए दे रहा था, अतएव वह उठकर वहाँ से अपने कक्ष की ओर चल दिये।

जब दादी को सब लोग उठा कर ले आ रहे थे तब मुर्शीद ने डरते-डरते अन्दर प्रवेश किया। वह डर रही थी कि वह अवश्य ही बेगम साहिबा के क्रोध का शिकार बनेगी, परन्तु लालकुँअरि ने मुस्कराकर उसका स्वागत करते हुये कहा, "आओ मुर्शीद! आज से हम लोग बेफ़िक्र हो गये। लाठी भी न टूटी और साँप भी मर गया।"

"यह आप क्या कह रही हैं? क्या······"

"हाँ, अब उनके बचने की कोई उम्मीद नहीं है। सिर फट जाने के कारण खून इतना अधिक निकल चुका है कि उनका बचना नामुमकिन है।"

"तब तो बड़ा गजब हो जायगा।" भयत्रस्त नेत्रों से लालकुँअरि की ओर देखते हुए मुर्शीद ने कहा।

"तू भी कैसी बातें कर रही है। गजब क्या होगा। होता तो वही है जो होना होता है। फर्क सिर्फ इतना है कि जिसे कल होना था, वह आज ही हो गया। समझ लो रास्ते का एक काँटा था वह दूर हो गया। अब चैन से जिन्दगी गुजार सकेंगी।" कहते हुए लालकुँअरि ने खुर्शीद को अपनी बाहों में कसकर जकड़ लिया। इसी समय बादशाह ने अन्दर प्रवेश किया। दोनों हड़बड़ाकर अलग हो गईं। खुर्शीद तो दुम दबाकर इस तरह भागी जैसे गधे के सिर से सींग। लालकुँअरि का हृदय धड़क रहा था। वह सोच रही थीं कि बादशाह सलामत अवश्य कुछ-न-कुछ कहेंगे, लेकिन जब उन्होंने मुस्कराकर उनकी ओर देखते हुए मदिरापान की अभिलाषा व्यक्त की तो लालकुँअरि का भय दूर हो गया और उन्होंने बड़ी प्रसन्नता के साथ मदिरा का पात्र लाकर बादशाह के मुँह से लगा दिया। बादशाह पी रहे थे और वह पिला रही थीं। बीच-बीच में दोनों एक दूसरे को देखकर मुस्करा देते थे। वह मुस्कराहट कभी-कभी हँसी में भी परिणत हो जाती थी। इस प्रकार बादशाह अपनी बुआ के गिरने से उत्पन्न विषादमय स्थिति को भूलने का प्रयास कर रहे थे और लालकुँअरि उसमें पूरा योग दे रही थीं।

उस ओर दादी की स्थिति में कोई परिवर्तन दृष्टिगोचर नहीं हो रहा था। कुछ क्षणोपरान्त तो उनकी स्थिति और भी चिन्ताजनक होने लगी। यद्यपि पास ही में बैठे हुए हकीम दोनों शहजादों को धैर्य बँधाने का प्रयास कर रहे थे। तथापि उस मौखिक सहानुभूति का उन पर कोई भी प्रभाव नहीं पड़ रहा था। उनकी पलकों में कुछ गति प्रतीत हुई। ऐसा प्रतीत होने लगा कि वह नेत्रों को खोलने का प्रयास कर रही हैं लेकिन वह असमर्थ हैं। इस परिवर्तन ने कुछ आशा उत्पन्न की; लेकिन यह आशा एक क्षण में ही विलीन हो गई जब कि उनका शिर एक ओर को लुढ़क गया। एक बार पुनः वही दृश्य उपस्थित हो गया जो बहादुरशाह की मृत्यु के समय था। इस रुदन का स्वर बादशाह और लालकुँअरि तक पहुँचा; लेकिन बादशाह तो नशे में इतने डूबे हुए थे कि उनको किसी के रोने की कल्पना भी नहीं हो सकती थी और लालकुँअरि ने

स्थिति को अनुभव करते हुए भी उपेक्षा की । किसी अन्य व्यक्ति को साहस भी न था कि ऐसे समय में उनके पास जा सके । बादशाह से लोग इतना नहीं डरते थे । जितना लालकुँअरि से । अतएव बादशाह को यह मालूम भी न हो सका कि उनकी बुआ का क्या हुआ । उन्हें तो तब मालूम हुआ जब कि वह दफना दी गई । बादशाह ने भी सुनकर यह कहते हुए निश्चिन्तता प्रगट की, "चलो इस झंझट से भी छुट्टी मिला ।"



प्रातःकाल का समय था । वायु मन्द-मन्द बह रही थी । पूर्व की लालिमा सूर्योदय का संदेश दे रही थी । पक्षीगण सूर्योदय के स्वागत में गीत गा रहे थे । प्रकृति उल्लास में डूबी थी । विशाल जनसमूह रंग-बिरंगे वस्त्रों में अलंकृत किले के सामने वाले मैदान में एकत्र था । आपस में धीरे-धीरे • र्तालाप भी चल रहा था । किले की दीवार पर एक झरोखा बना हुआ .। जिसमें बैठकर बादशाह जनता को दर्शन देता था । दर्शन करनेवालों । से एक वर्ग ऐसा भी था जो 'दर्शनिया' कहलाता था । इसके विषय में प्रसिद्ध था कि जब तक बादशाह के दर्शन नहीं कर लेता तब वह तक पानी नहीं पीता । बादशाह इसकी श्रद्धा और भक्ति से अत्यंत प्रभावित था । इसे खड़े होने के लिए विशेष सुविधा थी । इसे बादशाह के ठीक सामने ही खड़े होने स्थान निश्चित था । बादशाह की कृपादृष्टि भी इस पर रहती थी । इससे कभी-कभी विशेष लाभ भी हो जाया करता था । इसी विशेष लाभ का आकर्षण दर्शनियों की संख्या में दिन दूनी रात चौगुनी वृद्धि करता जा रहा था । इनमें अधिकांश अवसरवादी चापलूस होते थे ।

बादशाह के आगमन की सूचना खवास द्वारा मिली । झरोखे पर पड़ा

पर्दा एक ओर को खिसका। बादशाह के आने की आहट हुई। झरोखे पर बादशाह को आया हुआ देखकर दर्शनियों ने उच्च स्वर से 'अलीजाह' 'जहाँपनाह' 'परवरदिगार' इत्यादि सम्बोधनों से बादशाह का स्वागत किया। 'जिन्दाबाद' की ध्वनि से सारा आकाश-मण्डल गुञ्जायमान हो उठा। बादशाह अपनी जय-जय-कार सुनकर प्रसन्न हो उठा। लेकिन आज उतनी ध्वनि उत्पन्न नहीं हो पा रही थी जितनी रोज हुआ करती थी। इसका कारण जानने में बादशाह को देर नहीं लगी। वह शीघ्र ही समझ गया कि दर्शनियों का साथ आज जनता नहीं दे रही है, फिर भी, बादशाह ने चेहरे पर मुस्कराहट लाते हुए सिर झुका-झुका कर उनके अभिवादन स्वीकार किए। इसके पश्चात् बादशाह ने अपना स्थान ग्रहण किया। एक अन्य खवास ने आकर उसी समय बादशाह के हाथ में एक गुलाब का फूल दिया। इसके पश्चात् समक्ष उपस्थित जनसमूह पर एक विहंगम दृष्टि डाली तो उन्हें परिस्थिति कुछ गम्भीर प्रतीत हुई। शीघ्र ही अपनी जिज्ञासा को शान्त करने के उद्देश्य से उन्होंने पास ही खड़े एक कर्मचारी से पूछा, "क्या मामला है ? रियाया आज खामोश क्यों नजर आ रही है ?"

"जहाँपनाह ! रियाया हुजूर की खिदमत में उन जुल्मों-ज्यादतियों के खिलाफ दरख्वास्त पेश करना चाहती है जिनका सहना अब नामुमकिन हो गया है।"

"ज्यादती और वह भी मेरी हुकूमत में ! ताज्जुब है। मैं रियाया की हर शिकायत सुनने को तैयार हूँ।"

"जो हुक्म परवरदिगार।" एक बूढ़ा कुछ आगे बढ़ा और झरोखे के पास सिर झुका कर बादशाह की अनुमति की प्रतीक्षा करने लगा।

बादशाह ने उसे निकट आया देख पूछा, "तुम्हें किस बात की शिकायत है ?"

"शिकायत नहीं हुजूर अर्ज है।"

"अच्छा, अच्छा अर्ज ही सही, कहो क्या बात है ?"

"हम लोगों को रोशनी करने से बख्श दिया जाय।"

"क्यों, रोशनी करने से क्यों बख्श दिया जाय ? हफ्ते में दो बार तो रोशनी

की जाती है और उस पर कह रहे हो कि उसकी भी माफी कर दी जाय। इसमें तुम लोगों को क्या तकलीफ है ?"

"हुजूर इन तीन हफ्तों में की गई रोशनी ने हम लोगों को तबाह कर दिया है। तेल बाजार से ऐसा गायब हो गया है कि कहीं भी कान में डालने तक को नहीं मिल रहा है। अगर कहीं पर मिलता भी है तो इतना महगा होता है कि उसका खरीदना हम लोगों की ताकत के बाहर है।"

"तीन हफ्तो की रोशनी मे ही सब तेल खत्म हो गया ?"

"जहाँपनाह ! खत्म नही हो गया है, खत्म किया गया।"

"मतलब ?"

"परवरदिगार···"

"मैं बाज आया इस परवरदिगारी और जहाँपनाही से। इन्हें सुनते-सुनते तो मेरे कान पक गये।" बादशाह ने झल्ला कर कहा, "मैं अब इन्हें नहीं सुनना चाहता। अपनी बात सीधी तरह से कहो।"

"लेकिन हुजूर···।"

"फिरी वही हुजूर-हुजूर-हुजूर। मैं कहता हूँ बन्द करो इसे। अपनी बात बताओ।"

"सेठ, साहूकारों ने उसे खत्म कर डाला है।" उस व्यक्ति ने मन ही मन प्रसन्न होते हुए कहा।

"क्या उन लोगों ने पी डाला ?"

"जी नहीं, हुजूर······।'

"फिर ?"

"उन लोगों ने बाजार का सारा तेल तेज दामों मे खरीद कर भर लिया है।"

"इस तरह भरने से उनको क्या फायदा ?"

"इसी में तो उनका फायदा है। जब तेल बाजार मे नही रहेगा। तब तेल की माँग बढ़ेगी और तेल ख्वामख्वाह तेज होगा। ऐसे मौके से वे लोग फायदा उठायेंगे।"

"ऐसे मौके से उन्हें क्या फायदा होगा ?"

"जिस भाव चाहेंगे, बेचेंगे। रियाया को अगर गरज होगी तो वह उस भाव पर तेल खरीदेगी।"

"इसमें तुम लोगों को परेशान होने की क्या जरूरत ? तुम लोग तेल मत खरीदो।"

"यह कैसे हो सकता है। तेल तो खरीदना ही पड़ेगा।"

"किसलिये ?"

"रोशनी के लिए। तेल के बगैर रोशनी कैसे की जा सकेगी ?"

"जो लोग रोशनी न कर सकें, वे न करें। इसमें परेशान होने की क जरूरत है ?"

"अगर आपकी तरह रहमदिल ओहदेदारान भी होते तो फिर रोना ि बात का था। रोशनी न करने पर हम लोग बेइज्जत किये जाते हैं। चौ पर कपड़े उतरवा कर कोड़ों से खाल खिचवा ली जाती है। यह देखिये" हुए कुर्ते को बदन से हटाकर शरीर पर बने हुये कोड़ों के निशान दिखाते "मैं कल तेल न खरीद सकने की वजह से रोशनी नहीं कर सका था। लिए मुझे आज सवेरे किस तरह बेरहमी से मारा गया है।"......कहते इसका गला भर आया। आँखों से आँसू झरने लगे। बादशाह उसके प्र अत्याचार को देखकर अत्यंत द्रवित हो उठे, लेकिन इसके पूर्व कि वह कुछ निर्णय दें, उन्होंने पीछे बैठी हुई लालकुँअरि की ओर देखा। बाद पीछे एक महीन जाली का परदा पड़ा रहता था। उसी के पीछे लाल आकर बादशाह के साथ बैठती थीं। बादशाह को अपनी ओर देखते ह लिया कि वह उनकी सम्मति जानना चाहते हैं। लालकुँअरि ने मुस्कराते हुये बादशाह से कहा, "रोशनी करने की अब कोई जरूरत

लालकुँअरि की बात सुनकर बादशाह उछल पड़े। उन्होंने वही दी थी जो बादशाह इस समय चाहते थे। शीघ्र ही जनता की ओर बादशाह ने कहा, "जाओ, आज से रोशनी करने की कोई जरूरत न

बादशाह का निर्णय सुनते ही उस व्यक्ति ने अपने दोनों हाथ ऊपर उठाकर ऊँचे स्वर में कहा, "जहाँपनाह जिन्दाबाद, परवरदिगार जिन्दाबाद।" जनता ने भी उस व्यक्ति का भलीभाँति साथ दिया। वह शीघ्र ही पीछे मुड़कर जनता में मिल गया। सभी के चेहरों पर प्रसन्नता दौड़ गई। अपना निर्णय देने के पश्चात् बादशाह झरोखे से उठकर चले गये। जनता भी बादशाह की जय-जयकार करती हुई जाने लगी। बादशाह का निर्णय यदि किन्हीं लोगों को अच्छा नहीं लगा था तो वे थे दर्शनिए। उन दर्शनियों में अधिकतर सेठ-साहूकार ही शामिल थे। जितने लोग नतसिर आ रहे थे, उन्हें देख प्रत्येक कह रहा था, "वह देखो, दर्शनिये जा रहे हैं। तेल की खरीद बेकार साबित हुई, नुकसान हो गया बेचारों को।"

O

दूसरे दिन भी नित्य की भाँति जनता बादशाह के दर्शनार्थ झरोखे के सामने एकत्र थी। जनता विशेष प्रसन्न दृष्टिगत हो रही थी, क्योंकि कल उसे एक बहुत बड़े संकट से छुटकारा मिल गया था। बादशाह के झरोखे में आगमन के पश्चात् जनता ने दूने जोश के साथ बादशाह की जय-जयकार की। बादशाह ने भी सिर झुका-झुका कर स्वीकृति प्रदान की। इतने में ही भीड़ को चीरती हुई एक युवती ऊँचे स्वर में चिल्लाकर बोली, "इन्साफ हो जहाँपनाह–इन्साफ हो।"

स्त्री कंठ से निकली हुई आवाज बादशाह के कान में आ पड़ी। एकाएक स्त्री की आवाज सुनकर बादशाह की दृष्टि भीड़ में उसे ढूंढने लगी। इस बीच वह नवयुवती भीड़ के आगे आ चुकी थी और बादशाह की ओर मुँह उठाये हुये देख रही थी। बादशाह ने शीघ्र ही पहचान

रयाद करने वाली वही स्त्री है। उन्होंने पास के कर्मचारी ने उसको पास
ाने का संकेत किया। कर्मचारी के संकेत पर वह स्त्री आगे बढ़ी और
रोखे के ठीक सामने खड़ी हो गई। बादशाह ने झुककर अच्छी तरह उसे एक
ार देखा। फिर, उन्होंने पीछे घूमकर लालकुँअरि की ओर देखा। वह अपने
स्थान पर उपस्थित थीं। बादशाह ने पुनः झुककर उस युवती की ओर देखा।
उसी प्रकार अनेक बार उन्होंने लालकुँअरि और उस नवयुवती की ओर देखा;
लेकिन अपना आश्चर्य अव्यक्त, रख उन्होंने मृदुल स्वर में उस नवयुवती से पूछा,
"तुम्हें किस बात का इन्साफ चाहिये ?"

"आलमपनाह की हुकूमत में औरतों के साथ अच्छा सुलूक नहीं होता।"

"क्या कहा, मेरी हुकूमत में औरतों के साथ अच्छा सुलूक नहीं होता !
नामुमकिन, ऐसा कभी नहीं हो सकता। अगर इसी बात को कोई मर्द कहता
तो एक बार मान भी लेता। जिस सल्तनत की हुकूमत बेगमसाहबा के हाथ
में हो, उसमें औरतों के साथ बुरा सुलूक। तुम अपनी बात कहो, तुम्हारे साथ
क्या गैरइन्साफी की गई है ?"

"फिर, मैं क्या कहूँ। जब जहाँपनाह के दिल में पहले से ही यह बात जम
चुकी है कि औरतों के साथ बुरा सलूक नहीं होता, फिर किस तरह हुजूर मेरी
बात पर यकीन करेंगे ?"

"तुम अपनी बात कहो। मैं हसीन औरतों की हर बात का यकी
करता हूँ।"

"तब तो हुजूर जरूर मेरी बात पर गौर फरमायेंगे।"

"हाँ, हाँ, क्यों नहीं। अगर तुम्हारी बात काबिलेयकीन भी नहीं होगी,
भी उस पर गौर किया जायगा।"

बादशाह की बात को सुनकर उसे पूर्ण विश्वास हो गया कि बादशाह उ
बात पर अवश्य ध्यान देंगे। उसका मन उल्लास से भर गया। उसका
भय जाता रहा। उसने निर्भीकतापूर्वक कहा, "मैं परवरदिगार की खिद
इस बात का फैसला कराने आई हूँ कि मुझे मण्डी में कुँजड़े परेशान कर

मुझे देख-देख कर जलते हैं।"

"मैं तुम्हारी बात समझ नहीं पा रहा हूँ। अपनी शिकायत के पहले तुम यह बयान करो कि तुम कौन हो? तुम्हारा क्या नाम है? तुम कहाँ रहती हो?"

"मेरा नाम जुहरा है, मगर बाजार के कलमुहे कुँजड़े मुझे 'जुहरिया' कहकर पुकारते हैं। सब्जी मण्डी में मेरी सब्जी की दुकान है।"

"तो तुम कुँजड़िन हो?"

"हाँ, सरकार।" प्रसन्नता से उछलते हुये जुहरा ने कहा।

"अच्छा, तो तुम्हारी शिकायत क्या है?"

"मण्डी के कुँजड़े मुझे वहाँ से भगाना चाहते हैं। अब आप ही बताइये कि मैं कहाँ जाऊँ। अगर मैं अपनी चलती हुई दुकान छोड़ कर कहीं चली जाऊँ तो फिर खाऊँ क्या?"

"लेकिन, वे तुम्हें वहाँ से क्यों भगाना चाहते हैं?"

"यह तो मैं नहीं जानती, आलमपनाह लेकिन इतना जरूर सुनने में आया है कि मेरी वजह से उनकी दुकानदारी कमजोर पड़ गई है। मगर, हुजूर, इसमें मेरा क्या कुसूर। अगर ज्यादा खरीददार मेरी ही दुकान से सौदा खरीदना चाहते हैं तो इसके लिए मैं क्या करूँ?"

बादशाह जुहरा की बात की अपेक्षा उसके बात करने के ढंग पर विशेष ध्यान दे रहे थे। जुहरा के अंगों का संचालन अत्यन्त मोहक था। उसके नेत्रों का संचालन तो इतना आकर्षक था कि बादशाह की दृष्टि स्वयं उसके साथ घूमने लगी थी। जुहरा ने जब एकाएक अपनी बात समाप्त की तो बादशाह को उसके अन्तिम वाक्य की अपेक्षा कुछ भी न याद रहा। उस समय उनकी समझ में ही नहीं आ रहा था कि वह उसकी बात का क्या उत्तर दें। फिर भी कुछ-न-कुछ तो उन्हें उसकी बात का उत्तर देना ही था, अतएव उसके अन्तिम वाक्य का आश्रय लेते हुये कहा, "तुम्हें उसके लिए कुछ भी नहीं करना है। उसका सारा इन्तजाम मैं कर दूँगा। तुम्हें मण्डी में बैठने के लिए जगह दी जायगी और जैसी तुम चाहोगी वैसी ही दी जायगी वहाँ से कोई

नहीं हटा सकेगा।"

सभी बादशाह के साथ जुहरा की बात का आनन्द ले रहे थे। लालकुँअरि भी इससे वञ्चित न थीं। वार्तालाप के साथ-साथ लालकुँअरि की सहानुभूति भी जुहरा के प्रति बढ़ती जा रही थी। यद्यपि सर्वप्रथम जुहरा को देखकर लालकुँअरि के हृदय में भी शंका ने घर कर लिया था, परन्तु शीघ्र ही उन्होंने अपनी शंका को निर्मूल समझकर समाप्त करने का प्रयास किया और किसी सीमा तक उन्हें उस कार्य में सफलता भी मिली। जब उन्होंने देखा कि बादशाह जुहरा की बात का समर्थन कर रहे हैं तो अवसर से लाभ उठाते हुए लालकुँअरि ने कहा, "हम लोग इसकी दुकान पर किसी दिन खुद चलेंगे।"

"हाँ, हाँ, जरूर-जरूर, किसी दिन हम लोग तुम्हारी दुकान पर आयेंगे।" लालकुँअरि की बात का समर्थन करते हुए बादशाह ने जुहरा की ओर उन्मुख हो कहा।

"जहाँपनाह एक कुँजड़िन की दुकान पर तशरीफ लायेंगे?" जुहरा के प्रश्न में आश्चर्य अधिक था।

"हाँ, हाँ, तो क्या हुआ! इन्सानियत के नाते यह मेरा फर्ज है कि मैं तुम्हारी परेशानी को दूर करूँ।"

"लेकिन, सरकार इस छोटी-सी बात के लिए इतनी जहमत गवारा करेंगे। हुजूर का एक इशारा ही मेरी परेशानी को दूर करने के लिये काफी है।"

"तुम ठीक कहती हो, लेकिन कुछ लोगों के कुछ काम ऐसे होते हैं जिनको करने में खास मजा आता है। उन्हीं लोगों के कामों में से तुम्हारा भी एक काम है। इसको मैं खुद आकर देखना चाहूँगा।"

"जैसी हुजूर की मर्जी, लेकिन जल्दी ही आइएगा?"

"जल्दी ही आऊँगा।"

अपनी दुकान पर किसी दिन बादशाह के आने की स्वीकृति पा कर वह अपनी प्रसन्नता न रोक सकी और उच्च स्वर में बोली, 'इन्साफपसन्द बादशाह" और जनता ने उसके स्वर-में-स्वर मिला दिया, "जिन्दाबाद"। इसके पश्चात्

जुहरा वहाँ से उछलती-कूदती भीड़ को चीरती हुई निकल गई। भीड़ पार करके वह कुछ ही दूर गई होगी कि एक घोड़ा गाड़ी दिखाई दी और जुहरा उसमें जा बैठी। गाड़ी जुहरा को लेकर चल दी। घोड़े हवा से बातें कर रहे थे। थोड़ी ही देर में गाड़ी आकर एक महल के सामने रुक गई। वह गाड़ी से उतरी और तीर की भाँति महल में प्रविष्ट हो गई। उसे अपने कार्य में अप्रत्याशित सफलता प्राप्त हुई थी, इसलिए उसके पैर जमीन पर नहीं पड़ रहे थे। वह नहीं समझ सकी कि वह पूरी सीढ़ियाँ एक साँस में कैसे चढ़ गई और हाँफती हुई उस कमरे में दाखिल हुई जिसमें खाँ साहब बैठे उसका इन्तजार कर रहे थे। जुहरा के आने की आहट पाकर उन्होंने पीछे देखा तो हाँफती हुई उसकी प्रसन्न मुद्रा सामने दिखाई दी। स्वागतार्थ आगे बढ़कर उसका हाथ पकड़ते हुए खाँ साहब ने पूछा, "बहुत देर लगा दी लौटने में? कितनी देर से इन्तजार कर रहा हूँ।"

"जरा बैठ कर दम तो ले लेने दीजिए। अभी सब बताती हूँ।" खाँ साहब के साथ बैठते हुए उसने कहा।

"तुम तो इस कदर हाँफ रही हो जैसे किसी ने तुम्हारा पीछा किया हो।"

"हुजूर का अंदाज दुरुस्त है।"

"क्या कहा, तुम्हारा कोई पीछा कर रहा था?"

"हाँ।"

"इतनी किसमें हिम्मत है जो मेरे रहते तुम्हारा पीछा कर सके। अभी कोतवाल को बुलाता हूँ और उसकी गिरफ्तारी का इन्तजाम करता हूँ।"

"रहने दीजिये। उसका पकड़ना हुजूर की इमकान के बाहर है।"

"तुम मेरी ताकत को अजमाना चाहती हो? मैं अभी कोतवाल से कहकर उसको गिरफ्तार करने के लिए लन्दन का चप्पा-चप्पा छनवा डालूँगा। और जिन्दा या मुर्दा जैसा मिलेगा तुम्हारे सामने हाजिर करूँगा।"

"आप उनके लिए इतना परेशान मत होइए। उसके लिए मैं ही . . हूँ।"

"तो क्या तुम उसे खुद ही सजा दे लोगी ?"

"और नहीं तो क्या मैं अपना पीछा करने वाले को सजा देने की ताकत नहीं रखती ?"

"अगर उसको सजा देने की ताकत तुम्हारे पास है तो फिर उससे डर कर भागी क्यों ?"

"मैंने उस वक्त जैसी जरूरत समझी वैसा किया। उस वक्त मेरा भागना ही वाजिब था। फिर कभी उसे सजा दे लूँगी।"

"फिर तो तुम उसे पहचानती भी होगी ?"

"उसकी सकल-सूरत से तो वाकिफ नहीं हूँ; लेकिन इतना जरूर जानती हूँ कि वह कौन है और कहाँ रहता है।"

"फिर जल्दी बताओ कि वह कौन है। मैं अभी उसे मौत के घाट उतार दूँगा।"

"उसे मारने की जरूरत नहीं पड़ेगी।"

"क्यों ?"

"वह तो बेचारा खुद ही आखिरी साँस ले रहा है।"

"तो क्या तुमने उसे घायल कर दिया है ?"

"नहीं।"

"फिर वह अपनी जिन्दगी की आखिरी घड़ियाँ कैसे गिन रहा है ?"

"वह अपने आप पैदा होता है और वक्त गुजर जाने के बाद खुद ही खत्म हो जाता है।"

"तब तो अजीब किस्म का है तुम्हारा पीछा करने वाला। लेकिन वह है कहाँ ?"

"आप के यहाँ।"

"क्या कहा तुम्हारा दुश्मन और मेरे यहाँ ?" खाँ साहब ने आँखें फाड़ कर कहा।

"हाँ-हाँ, आप के ही यहाँ है। सुन कर आप को ताज्जुब क्यों हो रहा है ?"

'हिन्दुस्तान के वजीरेआजम के यहाँ चोर और बदमाश रहें, क्या यह ताज्जुब की बात नहीं है ?"

"ताज्जुब की बात है भी और नहीं भी।"

'क्यों ?"

"ताज्जुब की बात इसलिए नहीं है क्योंकि वह आप के साथ नहीं, बल्कि आपके अन्दर है।"

"क्या कहा, मेरे अन्दर है !"

"हाँ-हाँ, वह आपके अन्दर, आपके दिल में है और वह है आपका उतावलापन।"

जुहरा की बात सुनकर खाँ साहब हँसते-हँसते लोट-पोट हो गये। वह भी उनका साथ पूरी तरह से दे रही थी। गम्भीर वातावरण तनिक देर में हास्य में परिणत हो गया। जुहरा ने अपनी हँसी पर नियन्त्रण पाने का प्रयास करते हुए कहा, "मैं तो जानती थी कि आपकी बेसब्री बढ़ रही होगी। इसी के ख्याल से मुझे भागते हुए आना पड़ा।"

खाँ साहब की हँसी अभी भी पूरी तरह से नियन्त्रण में न आ सकी थी। उनके नेत्रों का गीलापन हास्य की चरमसीमा का प्रतीक था। वह अपनी स्थिति को शनैः शनैः परिवर्तित करने का प्रयास कर रहे थे, लेकिन बीच में ही जुहरा के बात करने के ढंग के स्मरण आते ही हँसी पुनः वापस लौट आती थी और साथ-ही-साथ उन्हें उसकी बौद्धिक कुशलता पर विश्वास भी हो गया था कि उसे अपने उद्देश्य में अवश्य सफलता मिलेगी। कुछ क्षणोपरान्त प्रकृतिस्थ होते हुए उन्होंने पूछा, "हाँ तो क्या हुआ ?"

"वहाँ की बात क्या पूछना है। जो होना था वही हुआ।"

जुहरा ने इस बात को इस ढंग से कहा कि खाँ साहब को शंका हो गई कि सम्भवतः उसे कार्य में सफलता नहीं मिली, क्योंकि जिसको अपने कार्य में सफलता मिलती है वह इतने उपेक्षापूर्ण ढंग से उत्तर नहीं देता। इस उत्तर ने उनकी जिज्ञासा को और भी तीव्रतर कर दिया। शीघ्र ही चेहरे पर

लाते हुए उन्होंने पूछा, "वह तो मैं भी जानता हूँ कि जो होना होता है वही होकर रहता है; फिर भी, जरा साफ-साफ बताओ कि वहाँ जाने के बाद क्या हुआ ?"

"आपकी दुआ से काम के होने की पूरी-पूरी उम्मीद है।"

खाँ साहब तनिक क्रोधित हो गये। वह स्वयं अल्पभाषी थे। उन्हें व्यर्थ की बात पसंद नहीं थी। लेकिन जिस ढंग से जुहरा उन्हें टाल रही थी, उससे उनकी उत्सुकता उस सीमा तक बढ़ गई थी कि वह क्रोध रूप धारण कर रही थी। जुहरा ने इस बात को ताड़ लिया कि खाँ साहब को अब और अधिक परेशान करना उचित नहीं है; इसलिए उसने शीघ्र ही कहना प्रारम्भ किया, "जब मैं किले के सामने मैदान में पहुँची तो लोग बादशाह सलामत जिन्दाबाद के नारे लगा रहे थे। मैं भीड़ को चीरती हुई सीधे आलमपनाह के सामने जा पहुँची। पहले तो उन्होंने मुझे बड़े गौर से देखा और फिर अपने पास बुला कर मुझसे बातचीत की। मैंने भी इस ढंग से बात की कि उन्हें पूरा यकीन हो गया कि मैं वाकई में कुंजड़िन हूँ। मैंने जो कुछ उनके सामने अर्ज किया उन्होंने मेरी बात पर पूरा-पूरा यकीन किया और यह भी वायदा किया कि किसी दिन वह बेगम साहबा के साथ मेरी दुकान पर तशरीफ लायेंगे।"

"तुम्हारी दुकान पर आने के लिए पहिले बेगम साहबा ने कहा था या बादशाह सलामत ने ?"

"शायद पहले बेगम साहबा ने ही कहा था। उसके बाद बादशाह सलामत ने भी हामी भरी थी।"

"तब तो तुम्हें पूरी उम्मीद करनी चाहिए।"

"किस चीज की ?"

"महल में दाखिल हो सकने की।"

"क्यों ?"

"इसलिए कि बेगम साहबा ने आने का वायदा किया है। वे तुमसे ए मालूम होती हैं। किसी-न-किसी दिन वह तुम्हारी दुकान पर जरूर आये

और अगर तुम उन्हें मुग्ध कर सकी तो वे जरूर तुम्हें हरम में रख लेंगी।"

"अरे, जरा उन्हें दुकान पर आने तो दीजिए, फिर देखिए, कि मैं उन्हें कैसे अपने चगुल में फाँसती हूँ।"

"चगुल में फँसने के बजाय कहीं ऐसी न भड़क जायें कि फिर कभी मजे में ही न आयें।"

"ऐसा नामुमकिन है।"

"क्यों ?"

"वह भी तो उसी कौम की हैं जिस कौम की मैं हूँ। मैं अपनी कौम वालियों का मिजाज अच्छी तरह जानती हूँ। मैं यह भी जानती हूँ कि वह सब कुछ बरदाश्त कर सकती हैं, लेकिन यह नहीं कि बादशाह सलामत किसी और की ओर आँख उठा कर देखें।"

"अगर उनका मिजाज ऐसा है तो उनका भी किसी की ओर आँख उठाकर देखना मुश्किल है ?"

"हाँ, मुश्किल है, लेकिन नामुमकिन नहीं और फिर मैं किस मर्ज की दवा हूँ?"

"उसका तो मुझे पूरा यकीन है कि तुम जरूर अपने मकसद में कामयाब होगी, लेकिन......।"

"लेकिन वक्त लगेगा !" बीच में ही बात को पूरा करते हुए जुहरा ने कहा।

"यह तो मैं भी जानता हूँ कि इस काम में वक्त लगेगा, लेकिन काम में तुम जितना ही कम वक्त लोगी मैं तुम्हें उतना ही ज्यादा मालामाल कर दूँगा।" रुपयों की थैली जुहरा की ओर बढ़ाते हुए खाँ साहब ने कहा।

"इसकी क्या जरूरत है। कनीज तो आपका ही दिया हुआ खाती है।"

"फिर भी, खर्च की जरूरत तो सभी को पड़ती है। मैं देख रहा हूँ कि तुम्हारा सारा वक्त इसी में लग जाता है।"

"रात-दिन इसी उधेड़-बुन में रहती हूँ कि हुजूर की तमन्ना कैसे पूरी हो।"

"इसी ख्याल से तो दे रहा हूँ।" थैली को और आगे बढ़ाते हुए खाँ साहब

कहा ।

"हुजूर का हुक्म भला कैसे टाला जा सकता है।" थैली को हाथ में पकड़ते ए जुहरा ने कहा ।

थैली छोड़ जुहरा की कलाई थामते हुए खाँ साहव मन्द स्वर में बोले, 'यह राज राज ही रहे। किसी पर जाहिर न होने पाये ।"

"हुजूर, वेफ़िक्र रहें ।" उठते हुए, "अच्छा ! कनीज को इजाजत दीजिए । वेचारे ग्राहक भटक रहे होंगे ।"

"जरूर-जरूर ।" अभिवादन कर प्रस्थान करती हुई जुहरा को देख खाँ साहव सहास्य स्वीकृति दे रहे थे ।

O

जुहरा के आगमन ने दिल्ली की सब्जीमण्डी में हलचल मचा दी थी । थो समय के अन्दर ही वह ग्राहकों के आकर्षण का केन्द्र वन गई थी । पहले कुंजड़ों ने सोचा कि चलो एक सुन्दर कुंजड़िन मण्डी में आ गई । मण्डी कुछ-न-कुछ रौनक ही वढ़ेगी । और उसके आने से रौनक वढ़ी भी । खरीदद की संख्या में वृद्धि हुई । वड़े-वड़े नवावों के कानों तक जुहरा कुंजड़िन सौन्दर्य की चर्चा पहुँची । वे भी सब्जी खरीदने के वहाने उस तक आने ल इस प्रकार सुवह से शाम तक मण्डी में चहल-पहल रहने लगी, लेकिन कुंजड़ों की दुकनदारी को तो जैसे पाला ही मार गया । वे अपनी सब्जी से शाम तक लिए वैठे रहते । उनके पास तक कोई ग्राहक न आता जव कि जुहरा के पास सब्जी शेष रहती । इसका परिणाम यह हुआ कि वह आकर्षण का केन्द्र वनने की अपेक्षा ईर्ष्या का केन्द्र वन गई । वे उसकी अ चना करने लगे । तरह-तरह की वातें उसके विषय में फैलने लगीं । हर

से उसे बदनाम करने का प्रयास किया जाने लगा, लेकिन जब अपने इन सब प्रयासों को उन्होंने विफल होते देखा तो उन लोगों ने सरकारी कर्मचारियों को कुछ ले-दे कर उसे परेशान करवाना आरम्भ किया। इसमें भी उन्हें सफलता दृष्टिगोचर न हुई, क्योंकि छोटे कर्मचारी भी उसकी बातों में आ जाते थे और फिर उनकी शिकायत भी जुहरा खाँ साहब से करती थी, जिसके परिणाम-स्वरूप उन्हें कठिन-से-कठिन दण्ड देकर नौकरी से बरखास्त कर दिया जाता था।

परन्तु, विरोधी कुंजड़ों में कुछ ऐसे नौजवान भी थे जिन्हें अवस्था प्राप्त कुंजड़ों की विरोधी बातें कुछ अच्छी नहीं लगती। जुहरा के विरुद्ध एक शब्द भी उन्हें असह्य था। आर्थिक हानि की अपेक्षा उसका सौन्दर्यनिर्गण उनके लिए विशेष महत्व रखता था। जब कभी कोई कुंजड़ा जुहरा के विरुद्ध कोई बात कहता तो वह अनेक कुंजड़ों के प्रश्नों का शिकार बन जाता और उसके पुरखे तक प्रश्नों की लपेट में आ जाते। पर आर्थिक हानि ऐसी कोई साधारण बात नहीं है जिसकी उपेक्षा अधिक दिन तक की जा सके, फलतः एक नीम के नीचे कुछ कुंजड़े एक-एक दो-दो करके एकत्र हो गए। गर्मी के दिन थे। सूर्य सिर पर तप रहा था। वायु में उष्णता आ गई थी। नीम की सघन छाया ऐसे समय में बड़ी सुखद प्रतीत होती है और फिर, चौधरी की दुकान भी तो नीम के नीचे थी जो सबसे बड़ी और पुरानी दुकान समझी जाती थी। चौधरी की अवस्था साठ पार कर चुकी थी, पर, चेहरे पर एक भी झुर्री का नामो निशान न था। दोहरे के वह इतने शौकीन थे कि बटुआ सदा बगल में दबा रहता था और सरौता सुपारी के टुकड़े बनाने में व्यस्त रहता था। दोहरा तैयार कर आगे बढ़ाते हुए उन्होंने कहा, "जुहरिया आज दिखाई नहीं दे रही है ?"

"जब दुकान पर रहती है तब भी ग्राहकों की भीड़ के कारण कहाँ दिखाई देती है।" दोहरा मुँह में रख चूना लेते हुए कुंजड़ा आगे बोला, "दुकानदारी में तो इसने आपके भी कान काट लिए, काका।"

"तुम दुकानदारी की बात करते हो, सुबह वह नीलामी में सारी हरी सब्जी मार ले जाती है और ठेकेदार भी उस पर ऐसे लट्टू हो उठे हैं कि उसी

की बोली पर सौदा छोड़ देते हैं।"

"ठेकेदारों का इसमें क्या कसूर, वह बोली भी तो एक ही बार में इतना ज्यादा बोल देती है कि दूसरों को आगे बोलने की हिम्मत ही नहीं पड़ती।"

"उसके आगे बोलने की हिम्मत करे कौन। दस-पांच एक-एक बार में बढ़ाना तो उसके बाँए हाथ का खेल है।"

"फिर तो, वह अच्छा सौदा मार ही ले जायेगी।"

"मगर, ताज्जुब तो इस बात का है कि फिर भी वह सौदा सबसे सस्ता बेचती है।"

"कौन कहता है कि वह सस्ता बेचती है। वह हम सबसे तेज बेचती है।"

"फिर, ग्राहक उसकी ही दुकान पर क्यों जाते हैं ?"

"रहे जिन्दगी भर बुद्धू-के-बुद्धू। इतनी छोटी-सी बात भी आज तक न समझ सके। अरे भाईजान ! उसकी सब्जी अच्छी ताजी होती है। हर शख्स बढ़िया चीज लेना पसन्द करता है और फिर, वह बेचती भी तो खुद है।"

"इसीलिए तो ग्राहक चार आने का सौदा लेता है और रुपया छोड़कर चला जाता है।"

"मगर उसकी ईमानदारी पर आज तक किसी ने शक नहीं किया। बाकी पैसे वह लौटाती जरूर है, चाहे दूर जाते ग्राहक को आवाज ही क्यों न देनी पड़े।"

"फिर भी, कुछ तो सुन कर भी नहीं सुनते और ऐसे बहरे बन जाते हैं जैसे उन्हें नहीं किसी और को बुलाया जा रहा हो।"

"फिर तो, जुहरा के घाटे का सवाल ही नहीं उठता। उसकी आमदनी अच्छी-खासी होगी।"

"आमदनी ! उसकी आमदनी की बात करते हो ! मैं कहता हूँ चार-छै महीने उसे यहां बैठने दो, कोठी-पर-कोठी न खड़ी हो जांय तो कहना।"

"अमां, तुम तो इस तरह बोल रहे हो, जैसे दुकान पर बैठकर उसकी दूकानदारी देखी हो।"

"तो क्या तुम समझते हो मैं यों ही कह रहा हूँ। इसके लिए कल सुबह

चार घण्टे बरबाद किए थे।"

"क्यों झूठ बोल रहे हो यार। दुकानदारी देखने का तो बहाना होगा आँखें सेकते रहे होगे।" एक समवयस्क कुँजड़े ने कह कर मुस्करा दिया।

इस बात को सुन कर सभी कुजड़े हँस पड़े। वह बेचारा शर्म के कारण नीचे सिर झुकाकर चुप हो गया। यद्यपि वह अपनी बात कहना नहीं चाहता था, क्योंकि वहाँ पर काफी बुजुर्ग कुँजड़े भी बैठे थे जो रिश्ते में उसके कुछ-न-कुछ लगते थे, फिर भी, प्रसंग आने पर वह अपने को रोक न सका और आवेश में आकर जो नहीं कहना चाहता था वह भी कह गया। उसका चेहरा शर्म से लाल हो रहा था। उसके एक साथी ने उसकी इस लज्जा को समाप्त करने के अभिप्राय से कहा, "अमां इसमें शर्म किस बात की! मण्डी में कौन ऐसा कुँजड़ा है जो उसकी सूरत पर फिदा नहीं है। हम गरीबों की क्या बात! बड़े-बड़े रईस सब्जी खरीदने के बहाने उसकी सूरत देखने आते हैं। मेरा तो मन होता है कि उसी की दुकान के सामने अपनी भी दुकान लगाऊँ।"

"क्यों बिलावजह भूखों मरना चाहता है। यहाँ तो दो चार पैसे कमा भी लेता है, अगर वहाँ चला गया तो फिर कौड़ी का भी दीदार मुश्किल से हो पायेगा।"

"पेट न भरेगा तो न भरे, भूखे रह लेंगे। आँखों की प्यास तो बुझ जायेगी, दिल की तमन्ना तो पूरी हो जायगी।"

"प्यास बुझेगी नहीं और बढ़ेगी। इन आँखों की प्यास बड़ी अजीब है। ये जितना पीती है इनकी प्यास उतनी ही बढ़ती है।"

"प्यास बढ़ने में ही तो मजा है। थोड़ी सी जिन्दगी है, क्यों न मजे से इसे काट लूँ। आखिरकार मरना तो एक-न-एक दिन है ही।"

"तब तो तुम आज ही शाम को अपनी दुकान वहाँ ले जाओ।"

इस अन्तिम बात को सुनकर सभी कुँजड़े हँस पड़े। काफी देर तक इसी प्रकार हँसी-मजाक चलता रहा। यद्यपि इन बातों में वास्तविकता अधिक थी फिर भी, सभी इसको हँसी में ही ले रहे थे। इसी बीच में एक वृद्ध कुँजड़े ने

गम्भीर वाणी में कहा, "क्यों बेकार की बातों में वक्त जाया कर रहे हो। क्या इन्हीं बातों के लिए हम यहाँ जमा हुए हैं?"

वृद्ध कुँजड़े की बात ने सब का ध्यान आकर्षित किया। सभी शान्त होकर सोचने लगे कि बात तो ठीक ही कही गई है। व्यर्थ की बातों में इतना समय नष्ट कर डाला गया—इस का ज्ञान तब हुआ जब कि उस वृद्ध कुँजड़े ने टोका। एक अन्य कुँजड़े ने बात का समर्थन करते हुए कहा, "हाँ, हाँ, बड़े मियाँ ठीक तो कह रहे हैं। हम लोग बेकार की बातों में वक्त जाया कर रहे हैं। यही भूल गए कि यहाँ सब इकट्ठा क्यों हुए हैं।"

"अमाँ, यह सब जुहरा का जादू है। हम लोग तो यहाँ सिर्फ अपना मतलब ही भूले हैं, लोग तो उसके सामने अपने तक को भूल जाते हैं।"

"खैर, छोड़ो इन बातों को। मैंने आज एक नई बात सुनी है।"

"क्या?"

"जुहरा आज सुबह बादशाह सलामत के पास गई थी।"

"किसलिए?"

"यह मुझे ठीक तरह से नहीं मालूम हो सका, लेकिन इतना जरूर सुना है कि शायद उसने हम लोगों की शिकायत की है।"

"वाह, यह अच्छी रही, उल्टा चोर कोतवाल को डाँटे। हमी लोग उसके सबब से परेशान हैं और उल्टी हमारी ही शिकायत की गई है।"

"तब तो वह बहुत होशियार निकली। जिस काम को हम लोग सोच भी नहीं पाते हैं, उसे वह कर डालती है। अब तो उससे पार पाना मुश्किल है।"

"आपने यह बात अच्छी याद दिलाई। मैं उस वक्त वहीं मौजूद था जिस वक्त वह बादशाह सलामत से शिकायत कर रही थी।" एक कुँजड़े ने सम्हल कर बैठते हुए कहा। सभी लोग उसकी ओर उन्मुख हो गए और जिज्ञासापूर्ण दृष्टि से उसकी ओर देखने लगे।

उनमें से एक ने पूछा, "तब तो तुम्हें बताना चाहिए था।"

"बताना चाहता था, लेकिन सुबह वहाँ से लौटने के बाद मौका ही न

मिला और फिर, इसके बाद इस वक्त यहाँ दूसरी बातों में उलझ गये जिसक
वजह से बता न सका।"

"खैर, कोई बात नहीं। अगर सुबह का भूला शाम तक घर वापस आ
जाए तो भूला नहीं कहलाता। जरा सुनाइए तो क्या शिकायत की है उसने ह
लोगों के खिलाफ?"

"शिकायत तो कोई खास नहीं है। सिर्फ यही कहा है कि हम लोग उ
मण्डी से भगाना चाहते हैं।"

"तो, बादशाह सलामत ने क्या कहा?"

"उन्होंने उसकी बात का जवाब कोई खास तो नहीं दिया। हाँ, इत
जरूर कहा था कि वह किसी-न-किसी दिन उसकी दुकान पर जरूर आवेंगे।

"क्या कह रहे हो! क्या बादशाह सलामत ने वायदा किया है कि उसक
दुकान पर वह खुद आवेंगे?"

"यही नहीं, बल्कि बेगम साहबा भी साथ आवेंगी।"

"अरे, वे भला क्या एक कुंजड़िन की दुकान पर आवेंगे। यों ही उसक
दिल रखने के लिए कह दिया होगा।" एक अन्य कुजड़े ने कहा।

"ऐसा न कहो भाईजान। अब जमाना ही ऐसा आ गया है कि सब कु
मुमकिन है। इसमें कोई ताज्जुब की बात न होगी अगर वे किसी दिन उस
दुकान पर आ जाँय।"

"भाई, मुझे तो कम यकीन होता है क्योंकि आने के लिए पहले बे
साहब ने कहा था।"

"वैसे चाहे न आते, लेकिन अब जरूर आवेंगे?"

"क्यों?"

"क्योंकि बेगम साहबा की आने की ख्वाहिश है। बेगम साहबा
ख्वाहिश को वह हर कीमत पर पूरा करने की कोशिश करते हैं। उनकी ब
को टालने की दम बादशाह सलामत में कहाँ।"

"वाकई, जुहरिया से हम लोग मात खा गए। हम ी करि

लेकर बादशाह की खिदमत में जाना ही चाहते थे और वह हो भी आई।"

"खैर, अब भी कुछ नहीं बिगड़ा है। हम लोग आओ जल्दी से तय कर लें कि कब बादशाह सलामत की खिदमत में हाजिर हों।"

"मेरा तो ख्याल है कि अब वक्त का इन्तजार करना ठीक नहीं। कल सुबह ही हम लोग क्यों न चलें?"

"आप ठीक कह रहे हैं। मैं भी यही सोचता हूँ कि सब लोग एक साथ मिलकर कल सुबह ही बादशाह सलामत के सामने अपनी दरख्वास्त पेश करें।"

किसी ने भी इस बात का विरोध नहीं किया। सभी ने अपनी स्वीकृति प्रदान की। सूर्य पश्चिम की ओर शनैः शनैः अग्रसर हो रहा था। उसकी किरणें पेड़ों से छन कर पृथ्वी पर तिरछी पड़ रही थीं। जुहरा के विरुद्ध षड्यन्त्र तैयार हो जाने के पश्चात् लोगों की दृष्टि एकाएक जुहरा की दुकान पर गई। जुहरा उस समय भी, जब कि अन्य दुकानों पर एक भी ग्राहक कठिनाई से दिखाई पड़ता था, ग्राहकों से घिरी सब्जी बेच रही थी। जैसे ही लोगों ने उठ कर अपनी-अपनी दुकानों पर जाने की बात सोची वैसे ही एक ओर से अचानक अनेक कुत्तों के भूकने की आवाज सुनाई दी। कुत्तों का पीछा लड़के कर रहे थे और शोर मचा रहे थे। सभी का ध्यान उस ओर को आकृष्ट हो गया। कौतूहलवश एक ने आगे बढ़ कर इस शोर का कारण जानना चाहा तो मालूम हुआ कि बादशाह की सवारी आ रही है। बादशाह की सवारी के आगे बाजा बजा करते थे। आज बाजों की आवाज तनिक भी नहीं सुनाई दे रही थी। पहले तो उसे विश्वास नहीं हुआ, लेकिन जब और आगे बढ़कर देखा तो वास्तव में बादशाह की सवारी दिखाई पड़ी। उसने लौट कर शीघ्र ही अन्य कुंजड़ों को इसकी सूचना दी। सभी कुंजड़े आश्चर्य में पड़ गये कि ऐसी धूप में बादशाह सलामत कैसे बाजार घूमने के लिए निकल पड़े। सशंकित मन से शीघ्रतापूर्वक सभी अपनी-अपनी दुकान पर जा बैठे।

O

बादशाह की सवारी जैसे ही महल से बाहर निकली वैसे ही उनके आगमन की सूचना उच्च स्वर से दी जाने लगी। बादशाह को यह बहुत बुरा लगा। वह प्रथम बार बेगमसाहबा के साथ घूमने निकले थे। वह चाहते थे कि एक साधारण व्यक्ति की भाँति वह घूमें और सबसे मिलें। इस स्वतन्त्रता में सरकारी कर्मचारियों को बाधास्वरूप समझकर उन्होंने सूचना देने की मनाही कर दी। वाद्यों का बजना भी रोक दिया गया था। गाड़ीवान गाड़ी हाँक रहा था और गाड़ी राजमार्ग पर मन्थर गति से अग्रसर हो रही थी। केवल बादशाह के सिर पर लगने वाला छत्र, जो कि इस समय बेगमसाहबा के ऊपर लगा हुआ था, बादशाह की सवारी के आगमन की सूचना दे रहा था। राहगीर मार्ग के दोनों ओर खड़े होकर सवारी के आगे निकल जाने की प्रतीक्षा कर रहे थे। वे दोनों राजमार्ग के दोनों ओर के दृश्यों का आनन्द ले रहे थे। गाड़ीवान बादशाह के आदेशानुसार मण्डी के अन्दर गाड़ी को प्रविष्ठ कराने लगा। बादशाह बड़े ध्यानपूर्वक दोनों ओर की सब्जियों से सजी हुई दुकानों को देख रहे थे, क्योंकि उन्हें यह नहीं पता था कि जुहरा की दुकान किस स्थान पर है। सहसा एक दुकान पर उनकी दृष्टि पड़ी जहाँ पर कुछ ग्राहक खड़े सब्जी खरीद रहे थे। जुहरा ग्राहकों को सौदा देने में इतनी व्यस्त थी कि बादशाह के आगमन के परिणामस्वरूप उत्पन्न चहल-पहल भी उसका ध्यान आकर्षित न कर सकी थी। बादशाह को यह जानने में देर न लगी कि जुहरा की दुकान यही है। उनके संकेत पर गाड़ी वहीं रोक दी गई। दोनों वहीं उतर पड़े। उन लोगों को उतरते देखकर मण्डी का कोलाहल सहसा शान्त हो गया। जो जहाँ था वहीं खड़ा रह गया। किसी को भी टस-से-मस होने का साहस नहीं हो पा रहा था। जुहरा ने अपने सामने के ग्राहकों के [illegible] आभास

पाया। ऊपर दृष्टि उठाई तो सामने बादशाह को बेगमसाहबा के साथ खड़े हुये देखा। जुहरा सकपका गई। उससे कुछ करते-धरते न बना। वह हड़बड़ा कर उनके बैठने के लिये किसी उचित स्थान की खोज में इधर-से उधर दृष्टि दौड़ाने लगी, लेकिन उनके उपयुक्त भला वहाँ कौन-सा स्थान हो सकता था। वह उनका स्वागत न कर सकने के कारण उत्पन्न पीड़ा का अनुभव कर रही थी। बादशाह जुहरा की इस अवस्था को ताड़ गये। उन्होंने शीघ्र ही मुस्कराते हुये कहा, "जुहरा बीबी, क्यों परेशान हो रही हो। हम लोग तुम्हारी दुकान देखने आये हैं, बैठने नहीं।"

"फिर भी, आलमपनाह मेरा भी तो कुछ फर्ज है।"

"फर्ज दिखाने के और भी बहुत से मौके आयेंगे। हाँ, यह बैंगन क्या भाव हैं ?" वह एक कदम आगे बढ़े और झुक कर हाथ में ये बैंगन उठाकर परखते हुए बोले।

जुहरा अभी तक अपने को पूर्णरूप से सम्हाल न सकी थीं; फिर भी, उसने अपने को प्रकृतिस्थ करते हुये उत्तर दिया, "यह तो परवरदिगार की दुकान है। अपनी दुकान पर मोलभाव कैसा ?"

"अपनी दुकान के माने यह तो नहीं कि बिना पैसा दिये ही सौदा लेकर चल दें।"

"हाय अल्ला ! परवरदिगार यह क्या फरमा रहे हैं। आलमपनाह और पैसा ! हुजूर से कनीज सब्जी की कीमत कैसे ले सकती है !"

"नहीं जुहरा ! जिन्दगी के लिए कुछ वसूल बहुत जरूरी होते हैं जहाँ छोटा-बड़ा, अमीर-गरीब नहीं देखा जाता। पैसा तो सिर्फ एक जरिया है जिससे लोग अपनी जरूरियात पूरी करते हैं। ग्राहक और दुकानदार को पैसा खरीदता है। दुकानदार उन्हीं पैसों से फिर उसी अपने ग्राहक की जरूरत की चीजें लाता है। यही सिलसिला चलता रहता है। अगर लोग इसी तरह मुरौवत में बिना कीमत अदा किए चीजें ले जांय तो फिर दुकानदार का दिवाला ही निकल जाय।"

"लेकिन आलमपनाह ! गुस्ताखी माफ हो ! मैं तो यही देखती हूँ कि आमतौर से लोगों की यही ख्वाहिश रहती है कि उन्हें चीजें मुफ्त ही मिल जांय। और ऐसे लोगों की अल्लाह के फजल से यहाँ भी कमी नहीं है।"

"मेरी हुकूमत में ?"

"जी हाँ, एक नहीं सैंकड़ों हैं और आलमपनाह की हुकूमत में ही हैं। जो भी सरकारी मुलाजिम आता है, मन चाहा सामान उठाकर चल देता है। आज तक एक ने भी मोलभाव न किया और फिर हुजूर तो उनके भी सरकार हैं।"

"यह बहुत बेजा बात है। सरकारी मुलाजिम रियाया की जान-माल की हिफाजत के लिए होते हैं, उन्हें लूटने या परेशान करने के लिये नहीं। रियाया के साथ बेजा पेश आने वालों को सजा दी जायेगी।"

हाथ जोड़ जुहरा गिड़-गिड़ा उठी, "कहीं ऐसा न कर बैठिएगा जहाँपनाह, वरना आप उन्हें सजा देंगे और वे हम गरीबों को कहीं का न रखेंगे। एक-एक की खाल उधेड़ दी जायगी, सारी इज्जत-आबरू मिट्टी में मिल जायगी। सरकार माफी फरमायें। फिर कभी, सरकारी मुलाजिमों के खिलाफ एक लफ्ज भी जुबान से निकालूँ तो सरकार सर कलम करवा दें।"

"इसका भी इन्तजाम हो जायगा। किसी पर कोई भी ज्यादती न होने पायेगी। सब सीधे हो जायेंगे।"

"नहीं परवरदिगार ! वे जैसे हैं, हम गरीबों के लिए बहुत अच्छे हैं। हुजूर इस बाबत कुछ न कहें-सुनें।"

"फिर तो, तुम्हारा सौदा बिना मोल-भाव के ही जाता रहेगा।"

"सरकार की सिर्फ नजरे इनायत चाहिये। देने वाले······।"

"मगर, मैं बिना मोल-भाव के नहीं खरीदने का।" बादशाह ने बीच में ही एक दूसरे बैंगन को उठा घुमाकर देखते हुये कहा, "यह तो और भी बढ़िया दिखाई दे रहा है।"

"जीहाँ, सरकार, सुबह का तोड़ा हुआ है। बिल्कुल ताजा है। बाजार भर में इसका मुकाबिला नहीं।"

"यह भी तो वैसा ही नजर आ रहा है ?" तीसरे बैंगन को उठा बादशाह
पूछा, "इसमें क्या ख़राबी है ?"

"ख़राबी और जुहरा की सब्ज़ी में, नामुमकिन है, सरकार। एक-एक अदत
न-बीन कर बाजार ऊपर ख़रीदती हूँ, सरकार। अपने ग्राहकों की तरह मैं
। ख़रीद के वक्त मोल-भाव नहीं करती, सिर्फ सब्जी की किस्म और ताजगी
र निगाह रखती हूँ।"

"मगर मैं बिना मोल-भाव के ख़रीदने का नहीं।"

"हुजूर भी शर्मिन्दा कर रहे हैं। हुक्म हो तो सारी दुकान महल में पहुँचा
दूँ सरकार।"

"तुम्हारी दुकान नहीं मुझे तो सिर्फ तुम्हारे ये दोनों बैंगन पसन्द हैं। बोलो
क्या कीमत है इनकी ?"

"हुजूर के लिए इनकी क्या कीमत। यह तो कनीज की ख़ुशकिस्मती है कि
हुजूर को हमारे बैंगन पसंद आए।"

"इसीलिए तो इनकी कीमत पूछ रहा हूँ।"

जुहरा असमंजस में पड़ गई। वह बोले तो क्या बोले। उसकी कुछ भी
समझ में न आ रहा था। बादशाह की जगह कोई दूसरा ग्राहक होता तो जो
मन मे आता बता देती पर बादशाह के आग्रह करने पर भी उसकी जुबान न
खुल पा रही थी ! लालकुँअरि वार्तालाप सुन रही थीं। जुहरा की मनः
स्थिति को भाँपते ही वह बोल उठीं, "बताती क्यों नहीं ? जो भाव तूने बेचे हे
बोल दे।"

जुहरा की दृष्टि लालकुँअरि पर से फिसलती हुई बादशाह पर जा टिकी
"दो पैसे पंसेरी बेचे हैं सरकार। मगर, हुजूर के लिए एक पैसे पंसेरी।"

"क्यों, मेरे लिए इतनी रियायत क्यों ?"

"हुजूर से कहीं मुनाफा खाया जा सकता है। जो भाव ख़रीदे हैं, व
हुजूर को बता दिया। फिर, हुजूर की मर्जी......।"

"और, अगर, मैं तुम्हारे इन बैंगनों की कीमत इससे भी आधी कहूँ तो·

"सरकार की खुशी। जो दिल चाहे कीमत आँकें। वैसे सरकार की जगह अगर और कोई ग्राहक होता तो वह सुनाती कि छठी का दूध याद आ जाता। मगर, हुजूर जहाँपनाह हैं।"

"ताक में रक्खो इस जहाँपनाही को। मैं इससे बहुत तंग आ गया हूँ। इस जहाँपनाही ने तो जिन्दगी का सारा मजा किरकिरा कर रक्खा है।" जुहरा के तनिक और निकट होते हुए बादशाह ने आगे पूछा, "हाँ तो, छठी का दूध याद दिलाने के लिए क्या सुनाती ?"

"हुजूर तो मजाक कर रहे हैं।" शर्म से लाल पड़ती जुहरा ने कहा।

"नहीं जुहरा, मजाक नहीं, मैं तो सिर्फ वह सुनना चाहता हूँ जिससे लोगों को छठी का दूध याद आ जाता है।"

"मुझे माफ कर दें, हुजूर। वह सब जहाँपनाह के सुनने लायक नहीं।"

"गोली मारो, इस जहाँपनाही को। न कुछ देखने देती है न सुनने। जुहरा, भूल जाओ कि मैं हिन्दुस्तान का वह बादशाह हूँ जो किसी कुँजड़िन की दूकान पर बैठने में अपनी तौहीन समझता है।"

"यह कैसे मुमकिन है, सरकार।"

"सरकार गये भाड़ में।" बादशाह ने मुँझलाकर कहा, "मैं तुम्हारे ये बैंगन मिट्टी मोल खरीदना चाहता हूँ।"

"हुजूर के लिए ये मिट्टी से भी गये बीते हैं। जैसे चाहें ले लें "

"जुहरा, तुमने ग्राहक को पटाना नहीं सीखा।" लालकुँअरि बैंगन का निरीक्षण करते हुए बोली, "कई दिन के मालूम होते हैं।"

"लगते तो कुछ मुझे भी ऐसे ही हैं।" बादशाह ने लालकुँअरि का समर्थन किया।

जुहरा सब कुछ सह सकती थी, परन्तु, अपनी सब्जी की बुराई नहीं। वह भूल गयी कि कौन उसकी दुकान पर है। वह स्वाभाविक स्वर में बैंगन हाथ से छीनते हुए बोल उठी, "चलिये, चलिए, रास्ता नापिए। पास में धेला नहीं, चल दिये जुहरा के बैंगन खरीदने। यह मुँह और मसूर की दाल। सबकी

क़िस्मत में ऐसे वैंगन मयस्सर नहीं। वाप-दादों ने कभी ऐसे वैंगन देखे हों तो, पहचान हो।" वैंगन को सम्हाल-सम्हाल कर रखते हुए जुहरा वोल रही थी, "मुए न जाने कहाँ से टपक पड़ते हैं। न टलेंगे न दूसरों को मौका देंगे।" जुहरा ने, वैंगन सुव्यवस्थित कर, गरदन सीधी की तो वादशाह-वेगम को हँसी से लोट-पोट होते देखा। वह सहम गई। खड़ी हो गयी। हाथ जोड़ कर थर-थर कांपने लगी। उसके अधर काँप रहे थे, मुंह से आवाज नहीं निकल रही थी।

वादशाह ने, हँसी को किंचित नियन्त्रित कर, जुहरा को दृष्टि का केन्द्र-विन्दु वना कहा, "कमाल कर दिया जुहरा तुमने! तुम्हारी वातें सुनकर वहुत मजा आया। आज जिन्दगी का असली लुफ्त आया है। हाँ, कुछ गाना-वजाना भी जानती हो या यूँही ग्राहकों का ही दिल वहलाया करती हो?"

"यूँही थोड़ा-वहुत सरकार।" जुहरा की दृष्टि नत थी।

"तव तो यह महल के काविल है।" वादशाह ने लालकुँअरि की ओर समर्थन के अभिप्राय से देखा।

"जी हाँ, नाचने-गाने वालों की मण्डली में यह शरीक हो सकती है।"

"विल्कुल ठीक, इसे गाने वालों की मण्डली में कर दिया जाएगा। वहीं चैन से इसकी जिन्दगी कटेगी। यहाँ के कुंजड़ों की शिकायत दूर हो जाएगी और कूड़े में पड़ा हुआ हीरा भी महलों में पहुँच जाएगा।"

"तुम अपनी दुकानदारी किसी और को सौंप दो और मेरे साथ महल में रहो चलकर। तुम वादशाह सलामत को वहुत पसंद आ गई हो। वहाँ वादशाह सलामत का मन वहलाया करना। वहाँ तुम्हें किसी वात की कमी न रहेगी।"

"हाँ-हाँ, तुम्हें सवारी के लिए एक हाथी दिया जाएगा जिस पर वैठकर तुम घूम सकोगी। इसके अलावा नौकर भी मिलेंगे और खर्च के लिए काफी दौलत भी।"

वादशाह के द्वारा अपने इनाम की घोषणा सुनकर जुहरा अत्यन्त प्रसन्न

हो गई। उसका हृदय बादशाह के प्रति कृतज्ञता से भर गया। उसने इस बात की कल्पना भी न की थी कि गरीबों के प्रति बादशाह इतने दयालु और हमदर्द हो सकते हैं। वह उनके प्रति अपना आभार प्रकट करने के लिये चरणों में गिरने ही वाली थी, कि लालकुँअरि ने उसे बीच में ही पकड़कर अपने हृदय से लगा लिया और अत्यन्त स्नेहपूर्ण शब्दों में कहा, "तुम अपने को छोटा क्यों समझती हो ? हम सब बराबर हैं। जो तुम हो वही हम हैं। छोटे-बड़े और अमीर-गरीब के फर्क इनसान के बनाये हुये हैं। वह इन्हीं के चक्कर में पड़ा रहता है। अपने को बड़ा कहलाने की तमन्ना इनसान को पीसे डाल रही है। जब सैकड़ों तबाह होते हैं तब एक अमीर बनता है। जितनी ही अमीरी की दीवालें आसमान को चूमने की कोशिश कर रही हैं, गरीबी की नींव उतनी ही गहरी होती जा रही है। वक्त का इन्तजार है। गरीबों की आहें इन्हें जलाकर राख कर देंगी। फिर, सब बराबर होंगे। न कोई छोटा होगा और न कोई बड़ा। सभी लोग इसी तरह मिलेंगे, जिस तरह हम मिल रहे हैं।"

जुहरा के नेत्रों से अश्रुधारा प्रवाहित हो रही थी। लालकुँअरि के इस सहृदयतापूर्ण व्यवहार की उसने कल्पना तक न की थी। उसके आँसू देखकर लालकुँअरि ने आगे कहा, "रो क्यों रही है ? तू तो मेरी बहिन की तरह रहेगी।"

"गल्ती से जो मैंने आप लोगों की शान के खिलाफ बातें कही हों, उनके लिए मुझे माफ कर दीजिएगा।"

"इसमें माफी माँगने की क्या बात है। तुमने तो आज वह काम दिखाया है जो बड़े-बड़े नहीं कर सके हैं। मैंने कभी भी परवरदिगार को इतना खुश नहीं देखा जितना आज। कल सुबह हाथी आएगा। उसी पर बैठकर चली आना।"

"उसकी क्या जरूरत है, मैं पैदल ही चली आऊँगी।"

"पैदल क्यों चली आओगी। अब तुम जुहरा कुँजड़िन नहीं रहीं, मेरी छोटी बहिन हो गई हो।"

"आप क्यों इस नाचीज को जरूरत से ज्यादा तरजीह दे रही हैं। इस काविल नहीं हूँ कि आपकी वहिन का दरजा हासिल कर सकूँ।"

"यह सोचना मेरा काम है, तुम्हारा नहीं। मैं वना रही हूँ तुम खुद न वन रही हो। मैं जो कह रही हूँ, खूब सोच-समझ कर ही कह रही हूँ। अ तुम वैठो। वेचारे ग्राहक वड़ी वेसब्री से तुम्हारा इन्तजार कर रहे होंगे। कह कर वह मुस्करा दीं। जुहरा को भी हँसी आ गई। इसके पश्चा लालकुँअरि वादशाह के साथ गाड़ी पर जा वैठीं। गाड़ी आगे वढ़ गई। ज तक गाड़ी दृष्टि से ओझल नहीं हो गई जुहरा टकटकी लगाये उसी ओ देखती रही। गाड़ी मन्द गति से आगे वढ़ रही थी।

मार्ग के दोनों ओर नयनाभिराम दृश्य थे। सामान्य जनजीवन के चित्त कर्षक क्रिया-कलापों एवं गतिविधियों का दृष्टि लाभ करते हुए, वेगम-वादशा कभी दृष्टि-संकेत द्वारा और कभी मुक्त हास्य द्वारा अपनी प्रतिक्रियाएँ व्य कर रहे थे। वेगम की भावाभिव्यक्ति की मोहकता एवं सरसता में वादशा अपनी वर्तमान अवस्था भूला हुआ जीवन के उस दुर्लभ आनन्द की अनुभू कर रहा था, जिसे सर्व साधन सम्पन्न उनके पूर्वज प्रतिष्ठा के विरुद्ध समझ थे। सवारी जन कोलाहल को पार कर जनशून्य मार्ग पर कव आ पहुंच इसका ध्यान वादशाह को तव हुआ जव वेगम ने गाड़ीवान को आज्ञा द "वस ! गाड़ी यहीं रोक दो।"

सूर्यास्त हुए काफी देर हो चुकी थी। रात्रि की कालिमा शनैः श घनीभूत होती जा रही थी। सर्वत्र सन्नाटा व्याप्त था। एक अति साधार कच्चे मकान के सामने रुकी गाड़ी से वेगम को नीचे उतरते देख वादशाह प्रश्न किया, "यहाँ क्या है, जो·········?"

पृथ्वी पर पैर रखते हुए वीच में ही वेगम वोल पड़ीं, "तशरीफ लाइ तो।" मोहनी के दास में इतनी शक्ति कहाँ थी जो आदेश की उपेक्षा क अपना कौतूहल निवारण कर सकता, विवश हो उन्हें गाड़ी से नीचे आन पड़ा।

"आइए।" बेगम ने अपना अनुसरण करने का अभिप्राय व्यक्त कर मकान की ओर पैर बढ़ा दिए। बादशाह ने अनुचर की भाँति बेगम का अनुसरण किया।

बेगम ने आगे बढ़कर द्वार की कुण्डी खटखटाई। द्वार अन्दर से बन्द था। बेगम को अन्दर से पुरुष-स्वर सुनाई दिया, "करीमन, जरा देखना तो दरवाजे पर कौन है।"

"तुम्हीं उठकर देख लो न। मेरे दोनों हाथ आटे में सने हैं।"

"मैं गल्ला सम्हाल रहा हूँ, भूल हो जाएगी।"

"मुए, न शाम देखते हैं न सवेर। चल देते हैं जब जी चाहा। गाँठ में दो टके हुए नहीं कि प्यास सताने लगी।" बेगम और बादशाह को स्त्री-कण्ठस्वर निकट आता प्रतीत हुआ। असमय आने वाले ग्राहकों के प्रति गृहस्वामिनी की झुंझलाहट सुनकर भी उनका स्वाभिमान न जागा। कारण, ऐसे ही क्षणों द्वारा तो उनका मनोरंजन होता था।

दरवाजा खुला। करीमन ने क्षीण प्रकाश में बाहर खड़ी बेगम को अविश्वास भरी दृष्टि से देखा। भ्रम दूर होते ही वह 'बेगम साहबा' ध्वनि उच्चारित करती हुई, पैरों पर गिरने ही वाली थी कि बेगम ने उसे अपने दोनों हाथों से बीच में ही रोक आदेशात्मक मन्द स्वर में कहा, "जल्दी रोशनी दिखा, बादशाह सलामत भी तशरीफ लाए हैं।"

करीमन चाहकर भी बादशाह को बिना दृष्टिगत किए ही अन्दर की ओर तत्क्षण भागी। अविलम्ब बेगम और बादशाह ने करीमन द्वारा प्रकाशित मार्ग से भीतर प्रवेश किया। इस बीच गृहपति ने करीमन द्वारा बेगम और बादशाह के आगमन की सूचना पा। यथासम्भव साफ चादर तख्त पर डाल दी थी। उसी की ओर बेगम ने बादशाह का ध्यान आकृष्ट किया, "तशरीफ रखिए।" बादशाह ने यन्त्रवत्, आज्ञानुसार आचरण किया। बादशाह की बगल में स्वयं भी बैठते हुए बेगम ने आदेश व्यक्त किया, "जो सबसे बेहतरीन हो, हुजूर की खिदमत में पेश करो।"

पति के हाथ से सुराही और पात्र तत्काल ले वह मदिरा उड़ेलने लगी। स क्षीण प्रकाश में भी सुगंधित मदिरा की धार देखते ही बादशाह की जान-जान आ गई, मुरझाया चेहरा खिल उठा, यात्राजनित क्लांति सहसा काफूर ो गई। आंतरिक उल्लास फूट पड़ा, "वाह बेगम। तुम्हारी भी सूझ-बूझ का वाब नहीं। आज आयेगा घूमने का असली लुत्फ। कितना खयाल रखती हो रा।" मदिरा-पात्र बादशाह के ओंठों से आ लगा।

बेगम के संकेत भर की देर थी। करीमन तो पूर्वयोजनानुसार आचरण ; लिए तैयार खड़ी ही थी।

पात्र की सम्पूर्ण मदिरा उदरस्थ कर बादशाह से प्रसन्नता व्यक्त की, 'लाजवाब ! क्या बेहतरीन जायका...... !" वाक्य का शेषांश अन्य पात्र की ादिरा की घूंट में घुलकर रह गया। इस पात्र को भी रिक्त होते देर न लगी। ादशाह की आंशिक तृप्तिजनित सहानुभूति व्यक्त हुई, "तुम भी पियो न ागम। वाकई लजीज है।"

बेगम की मदिराप्यास भी अनियंत्रित हो रही थी। बादशाह का आग्रह ारदान सिद्ध हुआ। पात्र की सम्पूर्ण मदिरा एक ही सांस में उदरस्थ करने के उपरान्त बेगम की प्रसन्नता कृत्रिम रोष के रूप में व्यक्त हुई, "करीमन ! तूने ःभी बताया क्यों नहीं कि तेरा शौहर इस फन में इस कदर माहिर है ? हुजूर ो ऐसे हुनरमन्दों की जुस्तजू में ही रहते हैं।"

गृहस्वामी ने अवसर को अनुकूल समझ अपनी स्थिति पर प्रकाश डाला। 'हुजूर की खिदमत में क्या शकल लेकर हाजिर होता। न जिस्म पर दुरुस्त कपड़े हैं, न कोई सिफारिश। मुझ फटेहाल को वहां घुसने ही कौन देता।"

बादशाह ने सगर्व कहा, "शराब बनाने के फन में माहिर इन्सान मेरी हुकूमत में कभी फटेहाल नहीं रह सकता। जितनी दौलत की जरूरत हो, खजाने से ले आना।"

"कहां बेचारा खजाने तक दौड़-धूप करता फिरेगा। क्यों न इसे कोई छोट-मोटी जागीर बख्श दी जाय।"

"बहुत खूब बेगम ! क्या बात कही है । ऐसों को कम-से-कम जागीरदार तो होना ही चाहिए ।"

बेगम को अपनी योजना में आशातीत सफलता प्राप्त हुई थी । उन्होंने करीमन और उसके पति को सम्बोधित करके कहा, "कल शाही फरमान ले जाना आकर ।"

"जो हुक्म ।" कहकर गृहपति ने पात्र में दूसरी मदिरा भर निवेदन किया, "हुजूर, जरा इसका भी जायका मुलाहिजा फरमायें ।"

पात्र खालीकर बादशाह ने उमंगित हो कहा, "माशाअल्लाह ! तुम तो गुदड़ी में छिपे हुए लाल हो । दरअसल, हिन्दुस्तान में एक-से-एक बेशकीमत हीरे मौजूद हैं ।" गृहपति ने सिर झुकाकर कृतज्ञता व्यक्त की ।

पात्र-पर-पात्र खाली होने लगे । हर आगामी पात्र की मदिरा पूर्वपात्र की अपेक्षा दोनों को अधिक स्वादिष्ट प्रतीत हो रही थी । बादशाह अर्धशायित-सा पहले ही हो चुका था । मदिरा की अत्यधिक मात्रा ने उसे अशक्त बना दिया । बेगम भी तब तक पीती रही, जब तक वह मदिरा के वशीभूत हो बादशाह के बगल में लुढ़क नहीं गई ।

बेगम के लुढ़कते ही करीमन और उसके पति की दृष्टियाँ एकाकार हुई । दोनों की दृष्टियों में एक ही प्रश्न था, "अब ?"

कुछ सोच गृहपति लपका बाहर की ओर । बाहर गाड़ीवान गाड़ी में बैठा ऊँघ रहा था । गृहपति द्वारा हिलाये जाने पर उसकी आँखें खुली । वह हड़बड़ा कर नीचे कूद पड़ा ।

गाड़ीवान के चेहरे पर दृष्टि गड़ा गृहपति ने प्रश्न किया, "बादशाह सलामत और बेगमसाहबा को वापस नहीं ले जाओगे ?"

"कहाँ हैं ?" गाड़ीवान का स्वर भययुक्त था ।

"अन्दर शराब के नशे में बेसुध पड़े [illegible] ।"

'शराब' का नाम सुनते ही गाड़ीवान की तृष्णा सहसा जाग उठी । वह सूखे ओठों पर जीभ फेरते हुए बोला "खुदाकसम, दोपहर से हलक तर करने को भी

नहीं मिली है । अगर एक-दो चुल्लू इनायत········ ।"

गृहपति पहले ही घबड़ाया हुआ था । वह झंझट अपने सिर से शीघ्रातिशीघ्र टालना चाहता था । गाड़ीवान को बिना पिलाए आफत से शीघ्र मुक्त होने की सम्भावना न देख घर की ओर मुड़ते हुए बीच में ही उसने कहा, "आ भाई ।"

गाड़ीवान ने भी छक कर पी । डकार लेकर बादशाह की पीठ के नीचे हाथ डालते हुए वह बोला, "लगाइये हाथ ।"

दोनों ने मिलकर बेगम और बादशाह को गाड़ी में लादा । गाड़ीवान के अपने स्थान पर बैठते ही बैल परिचित मार्ग पर चल पड़े । ऊँचे-खाली मार्ग में गिरते-उठते गाड़ी के पहियों के साथ रास्ते भर गाड़ीवान झूमता रहा । बैलों ने सीधे गाड़ीखाने में जाकर दम ली । गाड़ीवान ने अभ्यास के अनुसार गाड़ी से उतर बैल खोले और सीधे लड़खड़ाते कदमों से घर की राह ली ।

सूर्योदय के पूर्व ही बेगम और बादशाह के लापता होने का समाचार शाही महल में आग की भांति फैल गया । कर्मचारीगण औत्सुक्यभाव परस्पर व्यक्त करते बेगम-बादशाह की इधर-उधर खोजबीन करने लगे । महल का एक-एक कोना छान डाला गया, मगर न बेगम मिलीं, न बादशाह । समाचार महल की सीमाओं में कब तक बंधा रहा सकता था । कुछ ही देर में प्रधानमंत्री जुल्फिकारखां तक खबर पहुंच गई । खां साहब सुनते ही कर्मचारियों पर बरस पड़े, "हरामखोरों । दौड़ो चारों ओर, फौरन पता लगाओ ।" अश्वारोही सैनिक चारों ओर दौड़ते दिखाई देने लगे । अश्वों की टापों की ध्वनि से नगर का वातावरण आतंकित हो उठा । जनसाधारण घटना से अवगत होते ही बादशाह और बेगम के विगतजीवन के आचरणों के आधार पर भिन्न-भिन्न प्रकार के अनुमान व्यक्त करने लगा । दौड़-धूप जारी थी । खाँ साहब रह-रह कर कुछ प्रमुख अधिकारियों पर, जो उनके सामने अपराधी की भाँति नतसिर उपस्थित थे, बरस रहे थे, डांट रहे थे, "सब-के-सब नमकहराम हो । बेगम और बादशाह तक पर नजर नहीं रख सकते । मुल्क की दुश्मनों से हिफाजत क्या खाक करोगे ।"

इसी बीच एक कर्मचारी ने हांफते हुए प्रवेश किया। आवश्यक शिष्टाचार का पालन कर उसने निवेदन किया, "सब्जी मण्डी के कुंजड़ों से सिर्फ इतनी इत्तिला मिली है कि कल शाम के वक्त बेगम और बादशाह सलामत की गाड़ी बाजार से गुजरी थी।"

'गाड़ी' शब्द सुनते ही खां साहब के मस्तिष्क में कौंधा प्रश्न सहसा व्यक्त हो गया, "और गाड़ीवान कहां है?"

सामने खड़े कर्मचारियों को जैसे सांप सूंघ गया हो, कोई कुछ न बोला। खां साहब को स्थिति से अवगत होते देर न लगी। वह गरजे, "जाओ, फौरन गाड़ीवान को जिन्दा या मुर्दा हाजिर करो लाकर।"

एक साथ कई कर्मचारी मुड़े ही थे कि खां साहब की आवाज सुन पुनः रुक गए, "मैं भी साथ चलता हूं।"

गाड़ीवान का निवासस्थान गाड़ीखाने के निकट ही था। उसे उसी समय पकड़ मंगाया गया। उसके सामने आते ही खां साहब का भीषण स्वर फूटा, "कल रात बेगम साहिबा और बादशाह सलामत को कहां छोड़ा?"

पहले तो वह खां साहब का प्रश्न सुनकर सन्न रह गया, पर कुछ ही क्षणों में उसने डरते-डरते अनुमान व्यक्त किया, "कहीं गाड़ी में ही तो······।"

"नामुमकिन, तमाम हिन्दुस्तान के मालिक गाड़ीखाने में। वहां वे हरगिज नहीं हो सकते।" बीच में ही खां साहब ने गरज कर अविश्वास प्रकट किया।

"गुस्ताखी माफ हो सरकार। अभी देखकर आता हूं।" खां साहब की अनुमति की बिना प्रतीक्षा किए ही गाड़ीवान गाड़ीखाने की ओर लपका।

खां साहब भी कर्मचारियों के साथ वहां खड़े न रह सके। गाड़ीखाने के अन्दर प्रवेश करते ही बादशाह गाड़ी में अंगड़ाई लेते हुए दिखाई दिए। खां साहब को अनेक कर्मचारियों के साथ कुछ अंतर पर खड़े, अपनी ओर निहारते देख, बादशाह के चेहरे पर स्वाभाविक मुस्कान बिखर गई। गले से मोतियों का हार उतारकर गाड़ीवान की ओर फेंकते हुए कहा, "आज रात ऐसी अच्छी नींद कभी नहीं आई।"

बादशाह का स्वर कान में पड़ते ही बेगम हड़बड़ा कर उठ बैठीं। अस्त-व्यस्त वस्त्रों को व्यवस्थित करने का उपक्रम करते हुए बेगम ने गर्दन सीधी की तो दृष्टि बादशाह की दृष्टि से जा टकराई। दोनों की दृष्टि में एक ही प्रश्न था, "कहिए, गाड़ीखाने की मेहमानगीरी कैसी रही ?"

०

बादशाह और बेगम के पीछे-पीछे अन्य कर्मचारियों के चले जाने के उपरान्त गाड़ीवान ने अपनी स्त्री की ओर देखा और मुस्करा दिया। पति को प्रसन्न देख वह भी अपना आन्तरिक उल्लास अव्यक्त न रख सकी। दृष्टि मिलते ही गाड़ीवान ने कहा, "देखी बादशाह सलामत की दरियादिली ?"

"मगर तुम तो कहा करते हो कि सरकार दूसरों की औरतों के साथ बेजा पेश आते हैं ?"

"बिल्कुल, इसे तो सभी कोई जानता है।"

"मगर, मेरे साथ तो बेजा पेश आये नहीं ?"

"इसे अपनी खुश किस्मती समझो कि सरकार के हाथों आकर भी बच गई।"

"मुझे तुम्हारी बातों पर विश्वास नहीं होता। मर्दों का काम ही होता है दूसरों को बदनाम करना। तुम्हारे कुछ किए-धरे तो होता नहीं। फिर दूसरों को बदनाम करने से ही क्यों चूका जाय।"

"तुम गलत समझ रही हो। जो होता है, वही कहता हूँ।"

"होता होगा जिनके साथ होता होगा। वे औरतें बुजदिल होती होंगी जो अपमानित होने पर भी खामोश रहती होंगी। मैं तो पूरी तरह से तैयार होकर आई थी।" चोली से कटार की नोक निकाल दिखाते हुए वह बोली "यह देखो।"

"अच्छा ! तो तुम कटार लेकर वजीरेआजम के सामने आई थीं ?"

"तो क्या हुआ। बुरी नजर से देखने वाले हर मर्द को मैं अपना दुश्मन समझती हूँ। वह वजीरेआजम हों, या बादशाह सलामत। मैं किसी भी मर्द के हाथों बेइज्जत होना कभी बरदाश्त नहीं कर सकती।"

पत्नी का साहसपूर्ण निर्णय सुन गाड़ीवान फूल उठा। उसने हाथ की माला पत्नी के गले में डालते हुए कहा, "तुम्हारी ये ही बातें तो मुझे तुम पर······।"

ज्योंही गाड़ीवान पत्नी को बाहों में भरने के लिए बढ़ा, त्योंही पत्नी ने सावधान किया, "बस-बस ! दूर ही रहिए। क्या याद नहीं रहा कि मैं यहाँ किस शकल में आई हूँ ?"

"अच्छा, तो क्या मुझे भी उन सरकारी आदमियों में समझ रखा है ?"

"क्यों, आप उनमें से क्यों नहीं हो सकते हैं ? जो सरेआम किसी औरत की इज्जत पर हमला करे, वह किस सरकारी आदमी से कम है; और फिर, आप भी तो सरकारी आदमी हैं।"

"लेकिन, याद रखना, मैं तुम्हारी कटार से डरने वाला नहीं।"

"हाँ, मेरी कटार से तुम क्यों डरने लगे। अभी तक तो डर के मारे इस तरह काँप रहे थे, जैसे गाय कसाई को देख कर काँपती है। अब कटार का सामना करने की हिम्मत कहाँ से आ गई ?"

"तुम्हारी हिम्मत देख कर"

"मतलब ?"

"जब तुम औरत होकर बादशाह सलामत तक से निपटने की हिम्मत रख सकती हो तो मैं मर्द होकर तुम्हारी कटार का सामना करने की हिम्मत क्यों नहीं जुटा सकता ?"

"मुझमें बादशाह सलामत के सामने जाने तक की हिम्मत कहाँ। वह तो तुम्हारा प्यार है जिसने दूसरे मर्द के सामने न झुकने की ताक़त दी है। किसी गैर मर्द के हाथों अपमानित होकर अपने प्रेम को कलंकित होते देखना मैं बरदाश्त नहीं कर सकती। औरत के पास यही तो एक अमानत है जिसकी हिफ़ाजत उसे जान देकर भी करनी चाहिए।"

पत्नी के मुँह से स्त्री-चरित्र-महात्म्य सुनकर गाड़ीवान का मन उसके प्रति सम्मान से भर गया। सद्यः प्रसूत भाव को प्रदर्शित करने के लिए वह आगे बढ़ा, परन्तु कुछ सोच रुक गया और बोला, "आओ घर चलें, अधिक देर यहाँ रुकना ठीक नहीं।"

पत्नी प्रतिवाद न कर सकी और बोली, "चलिए।" पति का अनुसरण करते हुए उसने कहा, "बादशाह और बेगम की आपस में खूब पटती है।"

"हमी लोगों की तरह।" गाड़ीवान ने बिना मुड़े आगे बढ़ते हुए पत्नी की बात का समर्थन किया।

"पर, तुम मुझे गाड़ी में बैठाकर घुमाने कभी नहीं ले चलते?"

"क्या तुम भी गाड़ी खाने की मेहमान बनना चाहती हो?" कहते-कहते गाड़ीवान हँस पड़ा।

गाड़ीवान की पत्नी भी पति की बात सुन कर बिना हँसे न रह सकी। दोनों ने एक साथ हँसते हुए घर में प्रवेश किया। अन्दर से द्वार बन्द होने की ध्वनि दोनों के सम्मिलित हास्य में तिरोहित हो गई।

O

शाही महल में जुहरा ने सबका ध्यान अपनी ओर आकर्षित कर लिया था। उसके प्रति आकर्षण के दो कारण थे—एक तो वह असाधारण सुन्दर होने के साथ साथ नृत्य विशारदा थी और दूसरी बात, जो विशेष महत्व रखती थी, वह थी उसके स्वभाव की माधुरिमा। वह चलती तो उसके अंग-अंग में भँवर पड़ जाती और बात करती तो सुनने वाले के कानों में शहनाई बज उठती। प्रत्येक उसके सान्निध्य के लिए लालायित रहता और बादशाह को तो तब तक नींद न आती जब तक जुहरा के नृत्य का आनन्द-लाभ न उठा

लेतें। जब कभी काफी रात हो जाती तो लालकुंअरि कह उठतीं, "अब काफी रात हो गई है जुहरा, यहीं सो जाओ न।"

जुहरा हँसकर टाल जाती, "हम लोगों की रात अपनी और दिन पराया होता है। रात में क्या देर क्या सवेर। और फिर, किसी की इन्तजारी का भी तो ख्याल रखना है।"

लालकुंअरि मुस्कराकर रह जाती और जुहरा कोनिस बजाकर कक्ष से बाहर हो जाती।

दिन भर तो वह शाही महल में चहकती रहती, पर रात में वह हर प्रलोभन को ठुकराकर, महल की सीमा से बाहर हो जाती। समय-असमय जब बादशाह को वह याद आती तो वह पूछ बैठते, "जुहरा नहीं दिखाई दे रही है?"

लालकुंअरि उसकी ढाल बन जाती, "अभी तो यहीं थी। आती ही होगी।"

और, जब जुहरा सामने पड़ती तो लालकुंअरि उसे डाँटे बिना न रहती, "तू अपनी आदत से बाज न आएगी। एक जगह तेरे पैर रुकते ही नहीं। न जाने कहाँ गायब रहती है। जब कभी वह तुझे याद करते हैं, मुझे कोई-न-कोई बहाना बनाना पड़ता है।"

"बस! आखिरी बार गुस्ताखी और माफ कर दीजिए।" नाटकीय ढंग से कान पकड़ वह आगे कहती, "अब, अगर, फिर कभी, आपकी बिना इजाजत कहीं जाऊँ तो यूँ सर कलम करवा दीजिएगा।"

और, वह सर कलम करने का ऐसा नाटकीय प्रदर्शन करती कि लालकुंअरि उस पर न्योछावर हो जाती और उसे अंक में भर कहती, "अरी जुहरा! तेरे ऊपर तो गुस्सा हुआ ही नहीं जा सकता। तेरी हर बात और हर अदा इतनी दिलकश होती है कि सारी नाराजगी काफूर हुए बिना नहीं रहती।"

"जहेनसीब बेगम साहबा।" जुहारा विद्युत गति से छिटक सौभाग्यशालिनी होने का भाव प्रदर्शन करती।

और बेगम लालकुंअरि उसकी इस अदा पर इतना रीझ जाती कि कृत्रिम

क्रोध प्रदर्शित कर बैठतीं, "तो तू अपनी शरारत से बाज नहीं आएगी ?"

"गुस्ताखी माफ हो, सरकार। कनीज से ऐसी क्या बेअदबी हो गई ?" जुहरा के सुदीर्घ नेत्र विस्फारित अवस्था धारण कर लेते।

"फिर वही गुस्ताखी।" जुहरा के कान पकड़ते हुए लालकुंअरि समझाती, "तू अपने को छोटी समझती है न ?"

तिरछी दृष्टि से देखते हुए जुहरा स्वीकृति सूचक सिर हिलाती।

"फिर दीदी क्यों नहीं कहती ?"

जुहरा के नेत्र सजल हो उठते। उसका कृतज्ञतापूर्ण स्वर फूटता, "दीदी, डरती हूँ, कहीं आपकी यह छूट मुझे गुस्ताख न बना दे।"

"मेरी जुहरा कभी गुस्ताख नहीं बन सकती।" बेगम जुहरा को साथ बैठा समझातीं, "अभी तू कम उम्र है। तुझे किसी के सहारे की जरूरत है। और मैं देखती हूँ कि तू बिना सहारे की दिन-रात डोला करती है। बे सहारा इन-सान से गलत कदम उठ जाना नामुमकिन नहीं। मुमकिन है, तू भी कभी किसी के बहकावे में आकर कोई गलत काम कर बैठे। मैं नहीं चाहती कि मेरी जुहरा कभी..........।" टपकते आँसुओं को देख लालकुंअरि उसकी ठोढ़ी को हाथ का सहारा दे, झुके नेत्रों पर दृष्टि गड़ा कहतीं, "अरी तू तो रोने लगी। अभी तेरा बचपन नहीं गया। कितनी मासूम...........।"

"अभी हाजिर हुई।" बीच में ही जुहरा कक्ष से भाग खड़ी होती और अपने कक्ष में जा जी भर रोने के पश्चात् सोचती, "कितनी नेकदिल हैं बेगम साहबा। कितना प्यार करती हैं मुझ पर उन्हें कितना यकीन है ! क्या ऐसे शख्स को धोखे में रखा जा सकता है ? क्या ऐसे के साथ गद्दारी की जा सकती है ? नहीं...... नहीं...... । कभी नहीं। मैं आज सब बता दूंगी। उनसे कुछ न छुपाऊँगी। साफ-साफ कह दूंगी कि खाँ साहब...... ।" तत्क्षण स्मृति के साथ-साथ चित्र साकार हो उठता और वह काँप उठती। उसे ऐसा प्रतीत होता कि खाँ साहब बोल रहे हैं, "तू जुहरा है। मत भूल कि मैंने ही तुझे मामूली कोठे से उठाकर शाही महल में पहुँचाया है। मेरी ही बदौलत आज तू बेगम और

बादशाह की मुँह लगी कनीज बनी हुई है। खबरदार जो कभी अपनी औकात भूली। मेरा गुस्सा तू जानती है। बादशाह भी न बचा सकेगा। बोटी-बोटी नुचवाकर रख दूँगा, अगर जरा भी मेरे इशारे के खिलाफ जाने की जुरअत की। बेगम को एक न एक दिन मेरी होना है—और यह काम तेरे ही जरिए होना है।" जुहरा के मुँह से चीख निकल पड़ती, "नहीं, नहीं, कभी नहीं, ऐसा कभी नहीं हो सकता। वह तुम्हारी कभी नहीं बन सकती।"

"कौन किसका कभी नहीं बन सकता ?" जुहरा को लौटता न देख लाल-कुँअरि उसके कक्ष की ओर जा निकलती और अन्तिम वाक्य कान में पड़ते ही पूछ बैठती, "अकेले मे किसे किसका बनने से रोक रही है ?"

"ओह ! बेगम साहबा !" तपाक से जुहरा उठ खड़ी होती।

"फिर वही बेगम साहबा।" जुहरा की शैय्या पर बैठते हुए लालकुँअरि अनुमान व्यक्त करती, "जरूर तेरे दिल में कोई-न-कोई राज छुपा है।"

"नहीं, दीदी ! आपसे कुछ भी छुपाने की क्या जरूरत।"

"फिर दूर-दूर भागने की कोशिश क्यों करती है ? क्या तुझे महल में रहना पसन्द नहीं ?"

"नहीं दीदी ! ऐसी बात नहीं, कुछ बचपन की आदत ही ऐसी है कि एक जगह ज्यादा देर मन नहीं लगता।"

"यह तेरी नहीं, तेरी उम्र का तकाजा है। अच्छा……अच्छा ! जहाँ जब जी चाहा करे, घूम-फिर आया कर।"

"नहीं दीदी अब आपको छोड़कर कहीं नहीं जाया करूँगी।"

एक बार जुहरा एक सप्ताह तक महल से बाहर न निकली। आठवें दिन उसका मन बेचैन हो उठा। आन्तरिक भय ने महल से पैर निकालने के लिए उसे बाध्य कर दिया। वह महल से बाहर निकली तो सीधे खाँ साहब के सामने जा खड़ी हुई। खाँ साहब, इतमीनान के साथ जुहरा को नीचे से ऊपर तक ध्यान से देख, "कहाँ रहीं सात दिन ?"

"शाहीमहल में।"

जेध प्रदर्शित कर बैठतीं, "तो तू अपनी शरारत से बाज नहीं आएगी ?"

"गुस्ताखी माफ हो, सरकार। कनीज से ऐसी क्या बेअदबी हो गई ?" जुहरा के सुदीर्घ नेत्र विस्फारित अवस्था धारण कर लेते।

"फिर वही गुस्ताखी।" जुहरा के कान पकड़ते हुए लालकुंअरि समझाती, 'तू अपने को छोटी समझती है न ?"

तिरछी दृष्टि से देखते हुए जुहरा स्वीकृति सूचक सिर हिलाती।

"फिर दीदी क्यों नहीं कहती ?"

जुहरा के नेत्र सजल हो उठते। उसका कृतज्ञतापूर्ण स्वर फूटता, "दीदी, डरती हूँ, कहीं आपकी यह छूट मुझे गुस्ताख न बना दे।"

"मेरी जुहरा कभी गुस्ताख नहीं बन सकती।" बेगम जुहरा को साथ बैठा समझातीं, "अभी तू कम उम्र है। तुझे किसी के सहारे की जरूरत है। और मैं देखती हूँ कि तू बिना सहारे की दिन-रात डोला करती है। बे सहारा इनसान से गलत कदम उठ जाना नामुमकिन नहीं। मुमकिन है, तू भी कभी किसी के बहकावे में आकर कोई गलत काम कर बैठे। मैं नहीं चाहती कि मेरी जुहरा कभी…………।" टपकते आँसुओं को देख लालकुंअरि उसकी ठोढ़ी को हाथ का सहारा दे, झुके नेत्रों पर दृष्टि गड़ा कहतीं, "अरी तू तो रोने लगी। अभी तेरा बचपन नहीं गया। कितनी मासूम…………।"

"अभी हाजिर हुई।" बीच में ही जुहरा कक्ष से भाग खड़ी होती और अपने कक्ष में जा जी भर रोने के पश्चात् सोचती, "कितनी नेकदिल हैं बेगम साहबा। कितना प्यार करती हैं मुझ पर उन्हें कितना यकीन है ! क्या ऐसे शख्स को धोखे में रखा जा सकता है ? क्या ऐसे के साथ गद्दारी की जा सकती है ? नहीं…… नहीं……। कभी नहीं। मैं आज सब बता दूँगी। उनसे कुछ न छुपाऊँगी। साफ-साफ कह दूँगी कि खाँ साहब……।" तत्क्षण स्मृति के साथ-साथ चित्र साकार हो उठता और वह काँप उठती। उसे ऐसा प्रतीत होता कि खाँ साहब बोल रहे हैं, "तू जुहरा है। मत भूल कि मैंने ही तुझे मामूली कोठे से उठाकर शाही महल में पहुँचाया है। मेरी ही बदौलत आज तू बेगम और

बादशाह की मुँह लगी कनीज बनी हुई है। खबरदार जो कभी अपनी औकात भूली। मेरा गुस्सा तू जानती है। बादशाह भी न बचा सकेगा। बोटी-बोटी नुचवाकर रख दूँगा, अगर जरा भी मेरे इशारे के खिलाफ जाने की जुरअत की। बेगम को एक न एक दिन मेरी होना है—और यह काम तेरे ही जरिए होना है।" जुहरा के मुँह से चीख निकल पड़ती, "नहीं, नहीं, कभी नहीं, ऐसा कभी नहीं हो सकता। वह तुम्हारी कभी नहीं बन सकती।"

"कौन किसका कभी नहीं बन सकता ?" जुहरा को लौटता न देख लाल-कुंअरि उसके कक्ष की ओर आ निकलतीं और अन्तिम वाक्य कान में पड़ते ही पूछ बैठतीं, "अकेले में किसे किसका बनने से रोक रही है ?"

"ओह। बेगम साहबा !" तपाक से जुहरा उठ खड़ी होती।

"फिर वही बेगम साहबा।" जुहरा की शैय्या पर बैठते हुए लालकुंअरि अनुमान व्यक्त करती, "जरूर तेरे दिल में कोई-न-कोई राज छुपा है।"

"नहीं, दीदी ! आपसे कुछ भी छुपाने की क्या जरूरत।"

"फिर दूर-दूर भागने की कोशिश क्यों करती है ? क्या तुझे महल में रहना पसन्द नहीं ?"

"नहीं दीदी ! ऐसी बात नहीं, कुछ बचपन की आदत ही ऐसी है कि एक जगह ज्यादा देर मन नहीं लगता।"

"यह तेरी नहीं, तेरी उम्र का तकाजा है। अच्छा······अच्छा ! जहाँ जब जी चाहा करे, घूम-फिर आया कर।"

"नहीं दीदी अब आपको छोड़कर कहीं नहीं जाया करूँगी।"

एक बार जुहरा एक सप्ताह तक महल से बाहर न निकली। आठवें दिन उसका मन बेचैन हो उठा। आन्तरिक भय ने महल से पैर निकालने के लिए उसे बाध्य कर दिया। वह महल से बाहर निकली तो सीधे खाँ साहब के सामने जा खड़ी हुई। खाँ साहब, इतमीनान के साथ जुहरा को नीचे से ऊपर तक ध्यान से देख, "कहाँ रहीं सात दिन ?"

"शाहीमहल में।"

"उसकी तो मुझे भी खबर है, मगर क्यों ?"

"आपके काम के लिए।"

"मगर, सातों रातें मुझसे दूर रहने का सबब ?"

"तबियत खराब थी।"

"झूँठ बोलती है।" खाँ साहब सहसा गरज उठे, "शाही महल में दिन-रात इधर-से-उधर उछलती-कूदती फिरती रहती है और मुझसे तबियत ख़राब होने का बहाना कर रही है। कान खोलकर सुन ले। मुझसे इस सल्तनत के क़िसी भी शख्स की कोई हरकत छुपी नहीं रह सकती। मेरी ताकत से तू अभी वाकिफ नहीं। तेरे दिल का हाल जानना मेरे बाएँ हाथ का खेल है। मैं तुझे सिर्फ एक सप्ताह का मौका और देता हूँ, अगर इस दरम्यान अपने काम में कामयाब न हुई तो तेरी खैर नहीं।"

जुहरा ने रंग बदला। निकट बैठ, चेहरे को मोहक बना, वह बोली, "हुजूर तो बिला वजह खफा हो रहे हैं। जरूर किसी ने हुजूर के कान भर रखे हैं।" तनिक तुनुक कर वह आगे बोली, "यहाँ तो हुजूर के लिए दिन-रात एक किए दे रही हूँ और हुजूर हैं कि······।" बीच में ही रुक जुहरा खाँ साहब के चेहरे पर प्रतिक्रिया भाव पढ़ने लगी।

खाँ साहब उसी धुन में बोले, "वह तो इतने दिन से देख रहा हूँ कि एक मामूली-सा काम तेरे किए नहीं हो पा रहा है।"

"हुजूर इसे मामूली काम समझते हैं ?"

"और नहीं तो बेगम साहबा का दिमाग फेरना कोई किला फतह करना है ?"

"क़िला फतह करना आसान है, मगर किसी वफादार औरत के दिल में गैर शख्स के लिए जगह पैदा करना निहायत मुश्किल काम है।"

"होगा, मुश्किल जिसके लिए होगा, मैं इसे हरगिज मुश्किल नहीं मानता।"

"फिर हुजूर ने इसे मेरे सुपुर्द क्यों किया ?"

"वह हिन्दुस्तान की मलकएमुअज्जमा हैं। किसी मामूली औरत की मानिन्द उनका कब्जे में आना मुमकिन नहीं। इसके लिये तुम जैसी किसी

होशियार औरत की ही जरूरत थी।"

"मैं कभी यकीन नहीं कर सकती कि कोई भी औरत आसानी से हुजूर के कब्जे में आई होगी। कब्जे में आना नामुमकिन नहीं है, मगर किसी औरत के दिल को ब जरिए ताकत तफ्ह करना कभी मुमकिन नहीं। और फिर, वह तो बेगम साहवा हैं। उनके दिल में हुजूर के लिए जगह.........।"

"हूँ; तो इसके माने हैं कि तुम हिम्मत हार बैठी?" बीच में ही जाँ साहब का गम्भीर स्वर फूटा।

"हुजूर ने यह कैसे समझ लिया?"

"तुम्हारी बातों से साफ जाहिर हो रहा है।"

"जीते जी जुहरा कभी हार मानने वाली नहीं।"

"फिर?"

"कामयाबी मिलेगी और जरूर मिलेगी, मगर वक्त लगेगा।"

"मगर, वक्त की भी एक हद होती है। कितना वक्त लगेगा?"

"हुजूर, वक्त की कभी हद नहीं होती, हद होती है, इन्सान के सब्र की। जल्दी ही बेसब्र हो उठना, आम इन्सान का खास्सा है। मगर, हुजूर तो फरिश्ता हैं। समुन्दर की मानिन्द मुस्तकिल मिजाज हुजूर भी अगर इतनी जल्द बेसब्र हो उठेंगे तो यह कनीज तो कहीं की न रहेगी। अभी चार दिन पहले की ही बात है—बातों-ही-बातों में मेरी जुबान पर हुजूर का नाम आ गया। बस, फिर क्या था। उनका खूबसूरत चेहरा जो तमतमाया तो अंगार बन कर रह गया और फिर मुँह से जो आग बरसी है, उसका बयान नामुमकिन है।" कान पकड़ते हुए जुहरा ने भय प्रदर्शित किया, "तोबा-तोबा! खुदा बचाए ऐसे गुस्से से। मैं तो डर के मारे कुछ लम्हों के लिए अपने सारे होशोहवास खो बैठी थी।"

"फिर, क्या हुआ?"

"फिर, वही हुआ जो होना था। कनीज ने उन्हें खुश करने के लिए चार दिन वह मशक्कत की कि मेरा दिल ही जानता है।"

"इसी यकीन पर तो तुम्हें यह काम सौंपा है। मगर निहायत होशियार रहने की जरूरत है। है बड़ी जालिम औरत। खड़े-खड़े कनीजों की खाल खिंचवा लेती है। दादी तक का सफाया कर दिया है। अगर उसकी हुस्न बेमिशाल है तो उसकी संगदिली का भी कोई जवाब नहीं।"

"हुजूर बेफिक्र रहें। किस वक्त क्या रंग दिखाना चाहिए—यह जुहरा खूब जानती।"

"मुझे तुम्हारी अक्लमन्दी पर शक नहीं, मगर उस औरत के मिजाज को जितना मैंने समझा और परखा है, शायद ही वह खुद वाकिफ हों। अब तुमसे क्या छुपाना है जुहरा। बेगम को अपना बनाना मेरी जिन्दगी की आखिरी तमन्ना है। लाहौर में पहली मरतबा जब मैंने देखा था, तभी से मैंने उसे खुश करने की हरचन्द कोशिश की है, मगर अभी तक कामयाब नहीं हो सका हूँ। सल्तनत की कोई भी तो ऐसी ऐशोइशरत नहीं है जो मुझे हासिल न हो। मेरे पास ताकत की कमी नहीं। एक इशारे पर किसी को भी जहन्नुम भेज सकता हूँ। बेताज का बादशाह बना रियाया पर हुकूमत करता हूँ। बेइन्तहा दौलत मेरे पास है। और अभी काफी दौलत हासिल होने की उम्मीद है।"

"कैसे ?"

"वह एक राज है जुहरा।

"हुजूर का राज कनीज का राज है। सर कलम हो जायेगा, मगर राज जुबान तक कभी न आने पायेगा।"

"ठीक कहती हो, मेरे सबसे बड़े राज से तो तुम वाकिफ हो ही, अब तुमसे क्या छुपाना। दरअसल, बात यह है कि आगरे के किले में बेशुमार दौलत गड़ी हुई है। मैं उसे खुदवा रहा हूँ। तीन हफ्ते से खुदाई चल रही है। उस खुदाई में काफी दौलत हासिल हो भी चुकी है। अभी और मिलने की उम्मीद है।"

"इस वक्त हुजूर का इकबाल बुलन्दी पर है। हुजूर जिसे छू देते हैं वही सोना बन जाता है, जिसे याद करते हैं, वही खिंचा चला आता है; और जिसकी तरफ हुजूर की निगाह उठ जाती है, वह अपने को भूल बैठता है। मगर, एक

बात समझ मे नही आई ?"

"वह क्या ?"

"दौलत की बाबत खुदाई करने वाले नहीं जान जायेंगे ?"

"जरूर, मगर उन्हें इसकी तमीज कभी नहीं हो सकेगी कि खुदाई से मिलने वाली दौलत शाही खजाने में जाती है या मेरे, और फिर, उन पर चौबीसों घण्टे पहरा रहता है। वह बाहर भी तो नही निकल पाते हैं। जरूरत की सारी चीजें अन्दर ही पहुँचा दी जाती हैं।"

"मगर, खुदाई खत्म होने के बाद तो वे लोग बाहर आयेंगे ही ?"

"खुदाई के लिए अन्दर जाने वाला बाहर कभी नहीं आने का।"

"क्या जिन्दगी भर वह अन्दर ही बना रहेगा ?"

"नहीं, जब तक काम तब तक जिन्दगी।"

"मतलब ?"

"इधर खुदाई खत्म, उधर वे खत्म।"

"ओफ ! कितनी मँहगी पड़ेगी यह खुदाई।"

"मँहगी क्यों ? इसमें हर एक को इतनी मजदूरी हासिल हो जायेगी जितनी जिन्दगी भर उसमें भी ज्यादा मशक्कत करते तो भी पैदा न कर पाते।"

"ऐसी आमदनी से क्या फायदा जिसके लिए जिन्दगी से हाथ धोना पड़े ?"

"फायदा क्यों नहीं। उनके बाल-बच्चे ऐश नहीं करेंगे ?"

"वाह ! हुजूर खूब फायदा सोच रहे हैं। एक की जिन्दगी पर दूसरे ऐश करें—यह भी कोई इन्साफ हुआ ?"

"ज्यादा-से-ज्यादा सवाब कमाना इनसान की जिन्दगी का मकसद है। इससे ज्यादा सवाब कमाने का और कौन-सा जरिया है कि दूसरों को सुख देखने के लिये अपनी जिन्दगी कुरबान करदे।"

"उसूली नुक्ते निगाह से तो यह बात ठीक हो सकती है, बशर्ते कि सभी इस पर अमल करें। इजाजत हो तो एक बात पूछूँ ?"

"हाँ, हाँ, पूछो। तुम्हारे लिये तो सात खून माफ हैं।"

"अगर इसी वसूल को हुजूर भी अमल में लायें तो.........।"

"तो क्या समझती हो कि मेरा कोई भी कदम इस वसूल के खिलाफ उठता है ? मैं रात-दिन रियाया की हिफाजत और अमन-चैन के बारे में ही सोचा करता हूँ।"

जुहरा मन-ही-मन सोचने लगी, "आप रियाया के अमनो-चैन के बारे में कितना सोचते हैं--मुझसे छुपा नहीं है। अपने मतलब के लिए दूसरों की हत्या करना कहाँ का इनसाफ है ? उन मजदूरों की जिन्दगी का खात्मा इसलिए कर दिया जायेगा कि वे इस राज को किसी से कह न सकें। ओफ ! इन्सान कितना मतलबी है। अपने जरा से मतलब के लिये दूसरों की जिन्दगी को कीड़ों-मकोड़ों की तरह मसल कर रख देता है और दूसरों को कुरबानी और खिदमत का सबक सिखाता है।" इसके आगे वह न सोच सकी। उसका मस्तिष्क भन्ना उठा। एक ही वाक्य 'जबतक काम तबतक जिन्दगी' बार-बार उसके मस्तिष्क में चक्कर काटने लगा। जुहरा का मौन खाँ साहब को असह्य हो उठा। वह पूछ बैठे, "क्या सोचने लगीं जुहरा ?"

"कुछ नहीं, जरा यूँही।" उठने का उपक्रम करते हुए, "अब इजाजत दीजिये। फिर, किसी वक्त, खिदमत में हाजिर होऊँगी।"

"ऐसी भी क्या बात हो गई कि एकदम चलने को तैयार हो गईं ?"

"यों ही कुछ तबियत घबड़ा रही है।"

"तबियत घबड़ा रही है ? अभी तो खुश नजर आ रही थीं। इतनी जल्दी क्या हो गया ?"

"कुछ नहीं, यूँही।"

"देखो जुहरा ! तुम कुछ छुपा रही हो। तुम्हारा चेहरा तुम्हारी घबड़ाहट का सुबूत है।"

"जी नहीं; जिस पर सरकार की नजरेइनायत हो उसे किसका डर।"

"पर, तुम्हारी काँपती आवाज तो और ही कुछ कह रही है।"

"क्या कह रही है ?"

"वही, जो तुम छुपाना चाहती हो।"

"पर, मैं कुछ भी तो हुजूर से नहीं छुपा रही हूँ।"

"फिर, तुम्हारी आँखें डरी-डरी सी क्यों हैं?"

"हुजूर से दिल की बात कभी छुपी नहीं रह सकती। वाकई, मुझे डर लग रहा है।"

"किससे?"

"सरकार से।"

"उससे डरने की कोई जरूरत नहीं। हाँ, बेगम से जरूर होशियार रहना है।"

"पर, हमारे सरकार तो आप हैं।"

"तुम्हें मुझसे डर लग रहा है?"

"जी हाँ, अब आप से डर लगने लगा है।"

"ऐसी क्या बात हो गई?"

"हुई तो अभी कुछ भी नहीं है, मगर होने में कोई शक भी नहीं है।"

"जरा मैं भी तो सुनूँ?"

"मजदूरों की जिन्दगी का खात्मा।"

"पर, उससे तुम्हारा क्या ताल्लुक?"

"यूँ तो उनसे मेरा कोई ताल्लुक नहीं, पर आपके उसूल के हिसाब से जब तक काम तब तक जिन्दगी। इस दायरे में तो मैं भी आ जाती हूँ।"

"पर, हर उसूल हर शख्स के लिए नहीं होता। वे लोग जिस चीज के हासिल होने में मददगार साबित हो रहे हैं, वह बेजान है। उसमें राज खोलने की ताकत कहाँ। राज खुलने की गुंजाइश तो सिर्फ मजदूरों के जरिए ही है, इसलिए उनका सफाया लाजमी है। तुम मेरी एक ऐसी ख्वाहिश के पूरे होने का जरिया हो जो मेरी जिन्दगी की आखिरी ख्वाहिश होगी। तुम्हारी अहमियत मेरी नजरों में बेगम से कम नहीं है।"

"कनीज तो जमीन का जर्रा है। हुजूर की नजरे इनायत के अलावा

कनीज को कुछ नहीं चाहिए। कभी-कभी सोचने लगती हूँ कहीं हुजूर की यह नजर वदल न जाय।"

'जुहरा, इन्सान की निगाह नहीं चीज वदलती है। जैसी चीज होती है वैसी ही निगाह वन जाती है। अगर चीज हमेशा एक-सा रहे तो इन्सान की निगाह कभी न वदले। मुझे यकीन है, जुहरा, तुम्हारी वफादारी में कभी फर्क न आएगा।"

"हुजूर के इस यकीन की हिफाजत मैं अपनी जान की कीमत पर भी करूँगी। अच्छा, अव मुझे जाने की इजाजत दीजिए। इस वक्त मुझे महल के अन्दर होना चाहिए था।"

"क्यों ?"

"आज वहाँ एक जश्न मनाया जाने वाला है। उसमें मेरी हाजिरी निहयत जरूरी है। ये ही तो कुछ ऐसे मौके होते हैं जव वेगम साहवा खूब खुश नजर आती हैं और फिर हुजूर तो समझते ही हैं कि काम वनाने.........।"

"जाओ, भाई, जाओ। जिस तरह भी हो, मेरी ख्वाहिश तो पूरी होनी ही चाहिए।"

"हुजूर का हुक्म सर आंखों पर। सरकार यकीन रखें, कनीज कुछ भी उठा न रखेगी।" जुहरा ने कक्ष से वाहर जाते-जाते अपना वाक्य पूरा किया।

O

जहाँदारशाह शासन की ओर से पूर्णतया उदासीन थे। उन्हें शासन संवन्धी किसी भी समस्या से कोई मतलव न था। मदिरा पान करना और आमोद-प्रमोदमय जीवन यापन करना उनकी दिनचर्य्या थी। खेलों में शतरंज उनका

प्रिय खेल था। पर शायद ही कभी उन्होंने पूरी बाजी खेली हो। प्रायः बाजी संगीत और नृत्य में परिणत हो जाती थी, अथवा मदिरा की अधिक मात्रा उन्हें वहीं लुढ़का देती थी। लालकुँअरि ने बादशाह की दिनचर्या के अनुकूल अपने को ढाल लिया था।

संध्या समय नृत्य-गायन की महफिल जमी थी। कार्यक्रम द्रुतगति से चल रहा था। इसी बीच जुहरा दौड़ती हुई कक्ष में प्रविष्ठ हुई और झुककर तीन बार सलाम करके बोली, "आलमपनाह! वजीरे आजम खिदमत में हाजिर होने की इजाजत चाहते हैं।"

"कौन! खाँ साहब?"

"जी, परवरदिगार।"

"कह दो, फिर, किसी वक्त आएँ।"

जुहरा आदाब बजाती हुई लौट गई। परन्तु, कुछ ही देर बाद वह पुनः कक्ष में घुसी। उसे देख लालकुँअरि ने प्रश्न किया, "क्या है जुहरा?"

"खाँ साहब इसी वक्त आलमपनाह का दीदार हासिल करना चाहते हैं।"

"जा, कह दे, बादशाह सलामत आराम फरमा रहे हैं।" लालकुँअरि झुँझला उठी।

"जो हुक्म।" कहती हुई जुहरा पीछे हटी और द्वार पार होने ही वाली थी कि खाँ शाहब को अपनी ओर आता देख वह एक ओर हट कर खड़ी हो गई।

"बिना इजाजत हुजूर की खिदमत में हाजिर होने की यह गुलाम माफी चाहता है।" इन शब्दों के साथ खाँ साहब ने प्रवेश किया।

"आइए-आइए, बैठिए, कोई बात नहीं। आप कोई गैर थोड़े ही हैं जिन्हें इजाजत की जरूरत हो।"

"यह तो हुजूर की मेहरबानी है। दरअसल कुछ मामलात ही ऐसे आ पड़े हैं जिनके मुतअल्लिक हुजूर के सलाह-मशविरे की खाकसार ने जरूरत समझी।"

बादशाह ने प्रश्न किया, "फरमाइये, क्या मसलात हैं?"

"हिन्दुओं में खिलाफत की आग भड़क रही है।"

"किस वजह से ?"

"वे अपने ऊपर लगाया गया जजिया कर माफ करवाना चाहते हैं।"

"तो माफ कर दो। इसमें ऐसी कौन-सी बड़ी बात हो गई जिसमें परेशान होने की जरूरत है।"

"फिर, सल्तनत का खर्च कैसे चलेगा ?"

"उसी तरह जैसे शहन्शाह अकबर और जहाँगीर वगैरह का चलता था। उन्होंने भी तो हिन्दुओं का जजिया कर माफ कर रखा था।"

"मगर उस वक्त शाहीखजाने में काफी दौलत थी।"

"अब कौन-सी कमी आ गई खजाने में, जो जजिया की जरूरत पड़ गई ?"

"इस वक्त खजाना बिल्कुल खाली पड़ा है। आमदनी के सभी जरिये रफ्ता-रफ्ता बन्द होते जारहे हैं। लगान की वसूली अब उतनी नहीं रह गई।"

"लगान की वसूली में क्यों कमी आ गई है ?"

"उस वक्त किसान खुशहाल थे। उनकी माली हालत बढ़िया थी। वक्त पर बारिश होती थी। फसल अच्छी पैदा होती थी। लिहाजा लगान भी खासा मिलता था।"

"यह सब तबदीली क्यों आ गई है ?"

"इस साल बारिश मौके पर हुई नहीं है। जिसकी वजह से खेत सूखे पड़े हैं। बेचारे किसानों को जितना लगान पड़ता है, उतना ही नहीं दे पा रहे हैं। अगर उन पर ज्यादा लगान देने के लिये सख्ती की जायगी तो वे अपने खेत छोड़ देंगे।"

"मैं इन पेचीदे मामलों में पड़कर अपना दिमाग नहीं खराब करना चाहता। आप, जो समझें करें। हाँ, एक बात का ख्याल रखना कि मेरी हुकूमत में रियाया को तकलीफ न हो और अगर उनको खुशहाल रखने में मेरी जाती दौलत की जरूरत हो तो आप खुशी से खर्च कर सकते हैं। और कुछ कहना है ?"

"सरहिन्द का सूबेदार हिन्दुओं को जबरन इस्लाम मजहब मंजूर करने के लिये मजबूर कर रहा है।"

"उसकी इतनी हिम्मत कि मेरे रहते वह हमारी रियाया को परेशान करे !"

"सिर्फ परेशान ही नही कर रहा है, बल्कि जो लोग इन्कार करते हैं उन्हें मौत के घाट उतार दिया जाता है।"

"तब तो वह काबिलेसजा है।"

"हाँ, हुजूर।"

"जाओ उसे फाँसी पर चढ़ा दो।" कुछ सोचकर बादशाह ने पूछा, "और कुछ ?"

"एक और खबर मिली है कि फर्रुखसियर सैय्यद भाइयों की मदद से दिल्ली पर चढ़ाई करने की कोशिश कर रहा है ?"

"यह फर्रुखसियर कौन है ?"

"हुजूर के छोटे भाई अजीमुश्शान का शाहजादा।"

"अच्छा तो उस नालायक की इतनी हिम्मत ! मैंने उसको बहुत दिन पहले जब छोटा था, तब देखा था। उस वक्त तो वह बहुत ही डरपोक था। अगर कोई उसके सामने बिल्ली का नाम भी ले देता था तो वह दुम दबाकर माँ के पास भाग जाता था। उसमें इतनी हिम्मत कब से आ गई कि वह दिल्ली सल्तनत पर चढ़ाई करने की बात सोचने लगा।"

"वह तो हुजूर अब भी वैसा ही बुजदिल मालूम देता है, मगर उसकी मदद के लिये सैय्यद भाई है। उन्ही लोगो ने उसे हमला करने के लिये भडकाया होगा।"

"किसी को उसे रोकने के लिये भेज दो। वह खुद-बखुद भाग जायगा।" कहकर बादशाह ने फुरसत समझी और पैर फैला कर मसनद के सहारे लेटने वाले ही थे कि खाँ साहब ने कहा, "और भी बहुत से राजा सल्तनत को हड़पने का ख्वाब देख रहे हैं।"]

"मुझे इन सब बातों में कोई दिलचस्पी नहीं। अब मैं आगे कुछ भी नहीं सुनना चाहता हूँ।"

"इनसे रियाया की तकलीफें बढ़ जायेंगी।"

"उनकी तकलीफों पर माँ बदौलत तवज्जो दे सकते हैं, पर मैं इन बादशाहों की तैयारियों के झंझटों में नहीं फँसना चाहता।"

"हुजूर ये तैयारियाँ ही तो रियाया की मुसीबतों का सबब बनती हैं। इन पर अगर गौर न फरमाया गया तो फिर तबाही और बरबादी की आँधी आ जायेगी।"

"जब आयेगी तब देखा जायगा। अभी से क्यों उसकी फिक्र करके जिन्दगी का सारा मजा किरकिरा करूँ। मैं अपनी जिन्दगी एक सिपाही की तरह लड़ने-भिड़ने में नहीं गुजारना चाहता। जब तमाम ऐश-आराम की सहूलियतें हासिल हैं तब मैं क्यों न उनका इस्तेमाल करूँ। मैं अपनी बाकी जिन्दगी अमन-चैन से गुजारना चाहता हूँ और मेरी दिली ख्वाहिश तो यह है कि यूनान की तरह यहाँ हिन्दुस्तान में भी रियाया की हुकूमत कायम हो जाय जिसमें वजीरे-आजम ही सब कुछ होता है। बादशाह की पूरी ताकत उसी में होती है और वह जनता का नुमाइन्दा होता है। सल्तनत की सारी जुम्मेदारी भी वजीरेआजम पर होती है। बादशाह तो सिर्फ रस्मअदायगी के लिए होता है।"

"हुजूर के ख्यालात दुरुस्त हैं। मैं इनकी कद्र करता हूँ, मगर, ये वक्त से बहुत आगे हैं। अभी हिन्दुस्तान में वह जमाना नहीं आ सका है जब रियाया के हाथ में हुकूमत हो। फिलहाल तो ऐसा होना हिन्दुस्तान में नामुमकिन है।"

"क्यों, नामुमकिन क्यों है ? बादशाह के चाहने पर क्या नहीं हो सकता। लीजिए, आज से मैं हुकूमत की बागडोर आपके हाँथ में सौंपता हूँ। आज से आप ही इन सियासी मामलों पर गौर फरमा लिया करिये। मेरे पास तक आने की जरूरत नहीं।"

"हुजूर का हुक्म सिर आँखों पर, फिर भी, इन कागजों पर दस्तखत तो कर ही दीजिये।" कुछ कागज आगे बढ़ाते हुये खाँ साहब ने कहा।

"मैं इस मुसीबत से भी छुट्टी पाना चाहता हूँ। आज से आप दस्तखत बेगम साहबा से ही करा लिया करें।"

खाँ साहब ने बिना कुछ कहे ही कागजों को लालकुँअरि के समक्ष उपस्थित कर दिये।

बेगम साहबा इस समय बिना कुछ कहे ही उन कागजों पर हस्ताक्षर करने लगी, क्योंकि वह नहीं चाहती थी कि वार्तालाप आगे बढ़े और खाँ साहब को वहाँ अधिक देर तक रुकने का अवसर प्राप्त हो। वह सिर नीचा किए हुये एक-एक कागज पर हस्ताक्षर करती जा रही थी और खाँ साहब हस्ताक्षर किये हुए कागज के स्थान पर अन्य कागज रखते जा रहे थे। इसके साथ-ही-साथ उनकी दृष्टि लालकुँअरि के मुख-मंडल पर जा-जाकर वापस आ रही थी। एक बार वह काफी देर तक देखते ही रह गए। उन्हें इस बात का ज्ञान ही न रहा कि सभी कागजों पर हस्ताक्षर किए जा चुके हैं। बेगम साहबा ने खाँ साहब को इस स्थिति में देख लिया और धीरे से बोली, 'हो गए दस्तखत सब कागजों पर।"

उनकी यह बात सुनकर वह सकपका गये, क्योंकि खाँ साहब की चोरी पकड़ ली गई थी। शीघ्र ही कागजों को दोनों हाथों से सम्हालते हुए वह बोले, "वाकई, दस्तखत तो आप इतनी जल्दी करती हैं कि मैं जान नहीं पाया कि आपने कब सब दस्तखत कर डाले।"

"जी हाँ।' बेगम साहबा ने घृणामिश्रित स्वर में कहा।

"अच्छा, तो अब मैं चलता हूँ।" कह कर खाँ साहब वहाँ से उठे और अभिवादन करके कक्ष से बाहर हो गए।

O

लगभग एक सप्ताह से नगर की सजावट बड़े घूम-धाम से की जा रही थी। सर्वत्र सजीवता दृष्टिगोचर हो रही थी। जन-जन में एक नव उल्लास छाया था। सम्पूर्ण नगर नई दुलहिन की तरह सजाया गया था। धन पानी की तरह बहाया जा रहा था। सभी लोग अपनी क्षमता से अधिक सजावट में व्यय करके अपनी औदार्य्य वृत्ति का परिचय देने का प्रयास कर रहे थे। किन्हीं-किन्हीं स्थानों पर तो आपस में स्पर्धा ने भी जन्म ग्रहण कर लिया था। अन्ततोगत्वा वह दिन आ ही गया जिसके लिए दिल्ली की जनता ने दिल्ली को सजाने में कोई कसर नहीं रख छोड़ी थी। उस दिन लालकुँअरि का जन्म दिन था। प्रातःकाल से ही महल तथा अन्य स्थानों में चहल-पहल थी। राजकीय कर्मचारी नवीन सज-धज और अदम्य उत्साह के साथ इधर-से-उधर बड़ी द्रुतगति से आ-जा रहे थे। सभी नम्रता की साक्षात् प्रतिमा बने हुए थे। पूछे गए प्रश्नों का उत्तर बड़ी शालीनता से दे रहे थे। इस आकस्मिक व्यवहार-परिवर्तन से लोग और भी अधिक प्रसन्न थे। इसके दो माँह पूर्व बादशाह का जन्मोत्सव मनाया गया था, लेकिन उसमें इतनी सजीवता और स्फूर्ति नहीं प्रतीत होती थी। इस जन्मोत्सव को मनाने के लिए विशेष कार्यक्रमों का आयोजन किया गया था। दूर-दूर के कला-विशारद अपनी कलाओं के प्रदर्शनार्थ दिल्ली नगर की शोभा अपने आगमन से बढ़ा रहे थे। कहीं-कहीं छोटी-मोटी कलाओं का प्रदर्शन कुछ दिन पूर्व से ही होने लगा था। जनता उन दिनों अपने कष्टों को भूल-सी गई थी और प्रसन्नता की लहरों के साथ बह रही थी।

जन्मोत्सव की खुशी में समस्त कैदी छोड़ दिए गये थे। उनके घरों मे विशेषरूप से आनन्द मनाया जा रहा था। बादशाह प्रातः काल से ही मुक्त हाथों से दानादि दे रहे थे। इस अवसर से सभी लोग लाभ उठा रहे थे लाभ उठाने वालों में वे लोग भी सम्मिलित थे जिनकी जायदादें बहादुरशाः

के समय में किसी कारणवश जब्त करली गई थीं। उन्हें उनकी जागीरें वापस मिल रही थी। उपाधि-वितरण के समय कुछ विशेष लोगों को नवीन उपाधियों से सम्मानित किया जा रहा था। कृपापात्र सरकारी कर्मचारियों की पदोन्नति भी की गई थी। शनैः शनैः दिन व्यतीत हो गया। संध्या ने रात्रि के आगमन की सूचना दी। सम्पूर्ण राजधानी प्रकाश से जगमगा उठी। इस आलोकमय वातावरण ने जन-हृदय के उल्लास को द्विगुणित कर दिया। रात्रि के लिए निर्धारित विशेष कार्यक्रम प्रारम्भ किये गये। दरबार की सजावट भी अद्वितीय थी। बादशाह अपने तख्तेताऊस पर आकर आसीन हुये। बादशाह के पार्श्व में पीछे की ओर बेगम साहबा के बैठने का स्थान था। उस स्थान पर अत्यन्त महीन पर्दा पड़ा हुआ था जो केवल परम्परा का निर्वाह मात्र था। उसका होना न होने के बराबर था। लालकुँअरि के आगमन का स्वागत दरबार के समस्त उपस्थित लोगो ने खड़े होकर किया। बेगम साहबा के आसन ग्रहण करने के पश्चात् सभी लोग पुन. अपने-अपने स्थानों पर बैठ गये। उत्सव का श्रीगणेश उपहारो की भेंट से हुआ। उपहार भेंट करने वालों में सर्व प्रथम खाँ साहब थे। खाँ साहब ने, एक सोने का थाल, जो कि हीरे जवाहरातो से भरा हुआ था, बेगम साहबा को भेंटस्वरूप भेजा। थाल सामने पहुँचते ही लालकुँअरि की दृष्टि उसमें रखे हुए एक हार पर पड़ी जो अत्यन्त आकर्षक था। लालकुँअरि उसके उठाने का लोभ संवरण न कर सकी। उसकी सुन्दरता ने उन पर जादू का-सा असर डाला। उसे लेकर उन्होंने उसी समय अपने गले मे पहन लिया। खाँ साहब ने यह सब देख लिया। उन्हें अपनी योजना मे आशातीत सफलता प्राप्त हुई थी। वह इतनी आशा नही करते थे कि उनके उपहार को इतना सम्मान मिलेगा। इसके पश्चात् अन्य लोगो ने भी उपहार भेंट किये।

इसके पश्चात् सगीत का कार्यक्रम प्रारम्भ हुआ। दूर-दूर के संगीताचार्य वहाँ उस समय उपस्थित थे। सभी अपनी-अपनी कला-प्रदर्शन के लिये प्रस्तुत थे। लालकुँअरि के तीनों गुरुभाई नियामत खाँ, नामदार खाँ और खानजादा

में चकाचौंध उत्पन्न कर रही थी। उस समय वही दर्शकों के आकर्षण का केन्द्र थी। बेगम साहबा के पीछे खुर्शीद भी उपस्थित थी। उन्होंने खुर्शीद से कहा, 'अरे, यह तो जुहरा है।"

"हाँ सरकार, मुझे भी जुहरा ही मालूम हो रही है।"

सर्व प्रथम जुहरा ने, बादशाह के पास आकर, झुक कर सलाम किया। झुकने के समय उसके गले में पड़ा हुआ हार नीचे की ओर लटक आया जिसके सौन्दर्य को स्पष्टरूप से देखा जा सकता। उस हार पर लालकुअरि की दृष्टि पड़ी। उसकी ओर देखने के पश्चात् अपने गले में पड़े हार की ओर देखा और पुनः जुहरा के हार को देखा। यह सब एक ही क्षण में हो गया। सदेह का कोई स्थान नहीं रह गया। अपने समान ही जुहरा के गले में हार देख लालकुँअरि के बदन में आग लग गई। उनका चेहरा गुस्से से लाल हो गया। हार को उतार कर हाथ में ले लिया और मन में आया कि अभी इसके टुकड़े-टुकड़े करके फेंक दें, लेकिन उपयुक्त अवसर न समझ कर वह उसे हाथ में ही पकड़े रहीं। शाहे साहब लालकुअरि की इस क्रिया को नहीं देख सके, क्योंकि उनका ध्यान जुहरा की ओर चला गया था।

जुहरा के संकेत पर वाद्ययन्त्र बज उठे। जुहरा का नृत्य प्रारम्भ हुआ। वह एक स्थान से दूसरे स्थान की ओर लहर की भाँति बढ़ती और पुनः वापस लौट आती। दर्शकों की साँस भीतर-की-भीतर और बाहर-की-बाहर रुकी हुई थी। सभी अपलक दृष्टि से नृत्य देख रहे थे। सभी अपने को भूले हुए थे। जुहरा भी अपनी नृत्यकला के सर्वोत्कृष्ट रूप का प्रदर्शन कर रही थी। बीच-बीच में बादशाह के मुँह से 'वाह' 'खूब' इत्यादि शब्द निकल पड़ते थे जो जुहरा के शरीर में बिजली भर रहे थे। नृत्य की अवस्था अपनी चरम सीमा पर थी। वह नृत्य करते-करते सहसा फर्श पर मुँह के बल गिरी। उसको गिरा हुआ देख कर सभी लोग अपने स्थानों से उचक पड़े। बादशाह भी गद्दी से उचके और इसके पूर्व कि उनके मुँह से कोई शब्द निकले एक अत्यन्त सुरीली आलाप कान में पड़ी। ज्यों-ज्यों आलाप की ध्वनि तीव्रतर होती जा रही थी,

यों-त्यों जुहरा का शरीर भी उठता जा रहा था। आलाप गाने में परिवर्तित हो गया और उठना अंग-संचालन में। अब गाना और नृत्य दोनों साथ-साथ चलने लगे। गीत का भाव नृत्य द्वारा व्यक्त किया जा रहा था। दर्शक मन्त्र-मुग्ध थे। सभी इस आश्चर्य में डूबे हुये थे कि कल तक मण्डी में बैठने वाली कुँजड़िन भी इतना अच्छा नाच-गा सकती है। बादशाह ने भी जुहरा का कभी इतना सुन्दर नृत्य नहीं देखा था। खाँ साहब तो उसके कला-प्रदर्शन पर न्योछावर हुये जा रहे थे। थोड़े समय पश्चात् नृत्य और गान एक साथ ही समाप्त हुआ। चारों ओर से प्रसंशासूचक शब्द आने लगे। जुहरा झुक-झुक कर उन लोगों का शुक्रिया अदा कर रही थी। बादशाह ने अपने गले से माला उतार कर उसकी ओर फेंकते हुए कहा, "यह रहा तुम्हारा इनाम। आज की बाजी तुम्हारे हाथ रही।"

जुहरा ने माला हाथ में ही रोक ली और झुक कर शुक्रिया अदा किया। उसके पश्चात् वह वहाँ से ज्योंही चलने को हुई त्योंही खुर्शीद ने पास आकर कहा, "तुम्हें बेगम साहबा इसी वक्त याद फरमा रही हैं।"

खुर्शीद की बात सुनकर जुहरा उसके साथ हो ली। उसका हर्षोल्लपित सौन्दर्य बरबस दर्शकों के नेत्रों को उसी की ओर देखने के लिए बाध्य कर रहा था। दोनों लालकुँअरि के पास पहुँचीं। लालकुँअरि ने जुहरा का हाथ पकड़ कर अपने पास ही बैठा लिया। जुहरा अपने को इस सम्मान की अधिकारिणी नहीं समझती थी, इसलिए उसका सिर ऊपर नहीं उठ रहा था। उसकी ठोढ़ी में हाथ लगाकर ऊपर उठाते हुये बेगम साहबा ने कहा, "आज तो तुमने कमाल कर दिया। अभी तक क्यों नहीं बताया कि तुम इतना अच्छा नाचना और गाना जानती है ?"

"मैं तो कुछ भी नहीं जानती। आप सिर्फ मुझे खुश करने के लिए मेरी तारीफ कर रही हैं।"

"मैं क्या, तेरी तारीफ तो हर देखने वाले की जबान पर है। और बदा-शाह सलामत ने भी तो गले का हार देकर यह साबित कर दिया कि तेरा नाच

और गाना आज की महफिल में सबसे अच्छा रहा।"

"यह तो उनकी मेहरबानी है, वरना मैं मण्डी में साग-सब्जी बेचने वाली कुंजड़िन भला नाचना-गाना क्या जानूँ।"

"तो क्या तू अभी अपने को कुंजड़िन ही समझती है ?"

"और नहीं तो क्या मैं कोई बेगम बन गई हूँ।"

"बेगम नहीं बन पाई तो क्या हुआ, लेकिन तू किसी बेगम से कम तो है नहीं।"

"आप तो मजाक कर रही हैं।"

"इसमें मजाक की कौन-सी बात है। आज नहीं तो कल तो बेगम बन ही जाओगी।"

"यह आप क्या फरमा रही हैं ?"

"मैं जो कुछ कह रही हूँ, ठीक कह रही हूँ।"

"मेरी समझ में आपकी बातें नहीं आ रही हैं।"

"ऐसी बातें समझकर भी यही कहा जाता है कि समझ में नहीं आ रही हैं। कल जब बेगम बन जायेगी तब जो कुछ बाकी रह गया है वह भी समझ में आ जायगा।"

"किसकी बेगम बन जाऊँगी ?"

"जिसने यह हार दिया है।" जुहरा के गले में पड़े हार को हाथ लगाते हुये लालकुंअरि ने कहा।

"आप भी कमाल कर रही हैं। मैं भला, खाँ साहब की बेगम बन सकती हूँ ?"

"तो क्या यह हार तुम्हें खाँ साहब ने दिया है ?"

"हाँ, उन्हीं का दिया हुआ है।"

जिस बात को वह जुहरा से स्वयं पूछना चाहती थी, उस बात को जुहरा ने बिना पूछे ही बता ही दिया। यह जानकर कि जुहरा को यह हार खाँ साहब ने ही दिया है, उनकी क्रोधाग्नि भभक उठी। फिर सोचकर कि जुहरा

का इसमें क्या दोष, जुहरा से कुछ भी न कहा और खुर्शीद से खाँ साहब को बुला लाने को कहा। खुर्शीद ने आज्ञा का तत्क्षण पालन किया और कुछ क्षणोपरान्त खाँ साहब को साथ लिये हुये बेगम साहब के समक्ष आ उपस्थित हुई। खाँ साहब को सामने आया देख लालकुँअरि ने रूखे स्वर में पूछा, "जुहरा के पास यह हार आपका दिया हुआ है ?"

जुहरा के गले में हार को देखकर उन्हें बड़ा आश्चर्य हुआ। उन्होंने तो उसकी कल्पना भी न की थी कि जुहरा उस हार को पहन कर जशन में सम्मिलित होगी। इस समय वह चाहकर भी अस्वीकार न कर सके और मजबूर होकर कहना ही पड़ा, "हाँ, मेरा ही दिया हुआ है।" कहकर उन्होंने सिर झुका लिया।

खाँ साहब के उत्तर को सुनकर लालकुँअरि ने व्यंग्यपूर्ण ढंग से खाँ साहब को सम्बोधित करते हुये कहा, "वाह, आपने बेगम साहबा की खूब इज्जत की ! मेरी इज्जत एक कुँजड़िन की इज्जत से भी गयी बीती हो गई ? जैसे हार को जुहरा पहले पा चुकी है वैसा ही हार मुझे बाद में तोहफे की शकल में दिया गया। मुझे नहीं चाहिये आपका तोहफा। ले जाइये इसे।" गुस्से में हार को फेंक लालकुँअरि उठकर अन्दर की ओर चल दीं। हार पूरी ताकत से फेंका गया था, इसलिये काफी दूर जा गिरा और उसका एक-एक मोती बिखर गया। कुछ समय पूर्व जिस हार को लालकुँअरि के गले में देखकर खाँ साहब अपनी सफलता पर फूले नहीं समा रहे थे, उसी हार को इस विकृत अवस्था में देखकर उनके हृदय में असीम वेदना हुई। जिस हार को कार्य की सफलता का साधन वह समझ बैठे थे, उसी हार ने उनकी समस्त आशाओं पर पानी फेर दिया। उन्होंने एक उड़ती हुई दृष्टि सिर नीचा किये बैठी जुहरा पर डाली और बाहर निकल आये। खाँ साहब के चले जाने के बाद जुहरा ने अपने को अकेला पाया। उसका शरीर भय से काँप रहा था। मृत्यु उसकी आँखों के सामने नाच रही थी। गले में पड़े हुये हार को मृत्यु का फंदा समझकर उसने उतार कर उसी स्थान पर डाल दिया और वहाँ से चल दी।

O

लालकुँअरि सीधे अपने शयनकक्ष में जाकर पलग पर लेट गईं और नेत्र बन्द कर लिये। अपमान की असहिष्णुता ने प्रतिशोध की भावना को जन्म दिया। उनका मस्तिष्क इस समय खाँ साहब से अपमान का बदला लेने की बात सोच रहा था। एक के बाद दूसरा विचार आता, लेकिन कोई भी टिक नहीं पा रहा था, क्योंकि प्रतिशोध किसी साधारण व्यक्ति से नहीं लेना था। कोई भी उपाय समझ में नहीं आ रहा था। किसी से सलाह लेने की कामना हुई। आँख खोलकर देखा तो आस-पास कोई भी नहीं दिखाई दिया। उन्होंने पुनः नेत्र बन्द कर लिये। ज्यों-ज्यों समय व्यतीत होता जा रहा था त्यों-त्यों प्रतिशोध की भावना भी मन्द होती जा रही थी। जब व्यक्ति को सोचने का अवसर मिल जाता है तो वह सभी परिस्थितियों पर विचार करता है और प्रतिशोध की भावना क्षीण हो जाती है। क्रोध जब प्रतिशोध की भावना से पोषित होता है, तब अनिष्टकारी होता है और जब व्यक्ति को असमर्थ पाता है तब रुदन में परिणत हो जाता है। यही अवस्था इस समय लालकुँअरि की थी। वह प्रतिशोध लेने में अपने को असमर्थ पा रही थी। उनके नेत्र गीले हो चले थे। आँसुओं का वेग बढ़ता जा रहा था। बीच-बीच में सिसकने की आवाज आने लगी थी। बादशाह ने नशे में झूमते हुये कमरे में प्रवेश किया। लालकुँअरि को पलग पर पड़ी देख कहा, "बेगम ! यह कोई लेटने का वक्त है ? चारों तरफ लोग खुशी से पागल हुये जा रहे हैं। आओ उठो, चल कर रोशनी देखें। आज रियाया ने दिल खोलकर रोशनी की है।"

लालकुँअरि का मौन भंग न हुआ।

"ज्यादा नजाकत अच्छी नहीं होती। आओ चलें।" अपने हाथ में पकड

कर लालकुँअरि को घुमाते हुये वादशाह ने कहा।

इसकी अपेक्षा कि लालकुँअरि कुछ उत्तर दें या उठें, वह जोर से रो पड़ीं। उनके धैर्य का बाँध टूट गया। लालकुँअरि को अप्रत्याशित अवस्था में पाकर वादशाह ने साश्चर्य पूछा, "तुम रो क्यों रही हो? क्या वात हो गई? किसी ने कुछ कह दिया?"

लालकुँअरि पूर्ववत् रोती रहीं।

"कुछ वताओगी भी या रोती रहोगी?" पलंग पर वैठते हुये वादशाह ने पूछा।

"खाँ साहव ने आज मेरी वेइज्जती की है।" अपने अश्रुपूरित नेत्रों को खोलते हुये लालकुँअरि ने कहा।

"क्या कहा! खाँ साहव ने तुम्हारी वेइज्जती की है?"

"हाँ।"

"कव?"

"जशन के वक्त।"

"मगर जशन के वक्त तो वह मेरे नजदीक थे?"

"आपके पास रहने से क्या होता है। मेरी वेइज्जती तो उन्होंने तोहफे के जरिये की है।"

"वाह! तोहफा भी कहीं वेइज्जती करने के लिये दिया जाता है?"

"मगर उनके तोहफे का मतलव यही था।"

"मगर, सुनूँ भी तो कि उनके तोहफे से तुम्हारी वेइज्जती कैसे हो गई?"

"उन्होंने जो तोहफा मेरे पास भेजा था, उसमें एक खूवसूरत हार था। मैंने उसे लेकर फौरन गले में डाल लिया। कुछ देर वाद वैसा ही हार पहिन कर जुहरा जशन में शामिल हुई। जशन के वाद मैंने जुहरा को वुला कर पूछा तो उसका भी हार खाँ साहव का ही दिया हुआ था और खाँ साहव ने खुद इस वात को मंजूर भी कर लिया है।"

"वस! इतनी-सी वात?"

"हाँ।"

घबराहट बढ़ती जा रही थी। वह जानती थी कि रात के समय तो उसके घर कोई आयेगा नहीं, क्योंकि किसी को भी उसका मकान नहीं मालूम है, फिर भी वह इतनी सतर्क थी कि किसी भी प्रकार के शब्द होने पर वह खाँ साहब के या लालकुँअरि के किसी आदमी का आगमन ही समझ बैठती थी। उस समय एक क्षण के लिए साँस भीतर-की-भीतर और बाहर-की-बाहर रह जाती थी। खाँ साहब और लालकुँअरि दोनों ऐसे शक्तिशाली पाट थे जिनके बीच में पड़ कर पिस जाने के अतिरिक्त अन्य मार्ग न था।

जा रही है ?"

"मतलव ?"

"आज खुशी की रात यों ही गुजरी जा रही है ।"

"ओह, समझ गई ।" कह कर उन्होंने वगल में रखी हुई सुराही उठाई और कटोरे में मदिरा उड़ेलकर वादशाह को पिलाने लगीं । वीच-वीच में विशेष आग्रह किये जाने पर स्वयं भी चखती जा रही थीं । वादशाह कटोरे-पर-कटोरे चढ़ा रहे थे । रात के साथ-साथ मदिरा की मादकता भी गहरी होती गई । दोनों उसी गहराई में डूवते चले गए ।

O

उस रात जुहरा खाँ साहव के महल की ओर नहीं गई । काफी दिन वाद उसे अपना वही पुराना घर याद आया जिसमें उसने अपने अच्छे-वुरे सभी प्रकार के दिन काटे थे । घर साधारण था । उस घर में एक वुढ़िया और एक नौकर के अतिरिक्त कोई न था । वह वुढ़िया जुहरा को अपनी संतान की भाँति मानती थी । उसकी स्थिति सामान्य थी । उस घर का वाह्य भाग तो अच्छा नहीं था, परन्तु भीतरी हिस्सा वुरा भी न था । सभी मिलाकर उसमें छै या सात कमरे थे । दूसरी मंजिल में केवल एक कमरा वना हुआ था जिसमें वह वृद्धा कभी-कभी ही जाती थी । जुहरा का वह निजी कमरा था । उसी कक्ष में चारपाई पर जुहरा लेटी हुई अपने भविष्य पर विचार कर रही थी । रात्रि आधी से भी अधिक व्यतीत हो चुकी थी, परन्तु जुहरा को नींद कहाँ थी । वह तो अपने किये हुये कार्य का विश्लेषण कर रही थी । वुद्धि मन को सभी प्रकार से सांत्वना देने का प्रयास कर रही थी, परन्तु तलवार गरदन पर रखी हुई-सी प्रतीत हो रही थी । ज्यों-ज्यों समय व्यतीत होता जा रहा था, त्यों-त्यों उसकी

घबराहट बढ़ती जा रही थी । वह जानती थी कि रात के समय तो उसके घर कोई आयेगा नहीं, क्योंकि किसी को भी उसका मकान नहीं मालूम है, फिर भी वह इतनी सतर्क थी कि किसी भी प्रकार के शब्द होने पर वह खाँ साहब के या लालकुँअरि के किसी आदमी का आगमन ही समझ बैठती थी । उस समय एक क्षण के लिए साँस भीतर-की-भीतर और बाहर-की-बाहर रह जाती थी । खाँ साहब और लालकुँअरि दोनों ऐसे शक्तिशाली पाट थे जिनके बीच में पड़ कर पिस जाने के अतिरिक्त अन्य मार्ग न था ।

जुहरा के नेत्र बन्द थे । कमरे में पूर्ण अन्धकार था । सभी द्वार बन्द थे । केवल एक खिड़की खुली थी जिससे कुछ हवा आ रही थी । इसी के साथ चन्द्रमा का कुछ-कुछ प्रकाश भी आ रहा था । इतना होने पर भी वह हार जुहरा की दृष्टि से हट नहीं रहा था । वह लगातार इतनी देर से उसकी दृष्टि के सामने वैसा ही चमक रहा था । जिस हार को उसने दर्शकों को अपने सौन्दर्य से प्रभावित करने के लिए पहना था, वही हार उसकी मृत्यु का कारण बन बैठा था । वह हार वास्तव में जुहरा की हार थी । जब ज्यादा परेशानी बढ़ती तो वह उठकर उसी चारपाई पर बैठ जाती, परन्तु कुछ क्षणों के पश्चात् वह पुनः लेट जाती । किसी भी अवस्था में उसकी विचारश्रृंखला टूट नहीं पा रही थी । प्रातःकाल होने में कुछ ही समय शेष था कि जुहरा की आँख लग गई ।

प्रातःकाल हुआ । सूर्य काफी तेजी से चमकने लगा था । द्वार पर खट-खट की ध्वनि हुई । रमजू प्रातःकाल से ही कार्य में अधिक व्यस्त था । उसे अपनी मालकिन के आने की खुशी थी । उनके स्वागत में वह साफ-सफाई की चीजें [illegible] करने का उपक्रम कर रहा था, इसीलिए दरवाजे से आवाज आने पर भी उसने उसकी उपेक्षा की, परन्तु उपेक्षा करने से भी काम चलता नहीं । [illegible] बड़बड़ाता हुआ वह उठा और जाकर दरवाजा खोला तो सामने एक [illegible] [illegible] फटे-पुराने वस्त्रों में एक भिखमंगा दिखाई पड़ा । उसकी ओर [illegible]

देखते हुये रमजू ने पूछा, "तुम्हीं दरवाजा इतनी देर से खटखटा रहे थे ?"

"हाँ मैं ही था।" उस भिखमंगे ने उत्तर दिया।

"सुवह-सुवह किसी को परेशान करते शर्म नहीं आती तुम्हें ?"

"इसमें परेशान करने की क्या वात है ?"

"क्यों नहीं, यह काम-काज का वक्त होता है। किसे इस वक्त फुरसत रहती है कि तुम्हें निकल कर भीख दे।"

"मगर, मैं भीख माँगने नहीं आया हूँ।"

"फिर किसलिए आये हो ?"

"सुना है, जुहरा वीवी इसी मकान में रहती हैं। उन्हीं से मिलने आया हूँ।"

"क्या कहा, तुम और मेरी मालकिन से मिलने आये हो ?"

"हाँ।" कह कर भिखारी ने सिर हिला दिया।

"तुम से वह नहीं मिलेंगी।"

"क्यों ?"

"तुम जानते नहीं हो कि वह इन्सान से नहीं, दौलत से वात करती हैं। अगर कुछ दौलत पास में हो तो कोशिश करूँ ?"

इन दोनों की वार्तालाप की ध्वनि जुहरा के कानों में पड़ रही थी। वह जग गई थी, परन्तु अव भी वह चारपाई पर ही लेटी हुई थी। रमजू के अन्तिम वाक्य को सुनकर उससे न रहा गया। वह उठ कर वाहर आई और नीचे की ओर झाँक कर पूछा, "कौन है रमजू ? किससे वेकार की वातें कर रहा है ?"

"किसी से नहीं, यों ही एक भिखमंगा आपसे मिलना चाहता है।"

"तो, ले आ न उसे ऊपर।" कह कर जुहरा पुनः अपनी चारपाई पर वैठ गई और उस आगन्तुक की प्रतीक्षा करने लगी। कुछ ही क्षणों में रमजू उसको अपने साथ ले आया। उसकी ओर देखते ही जुहरा के होश फाख्ता हो गये और सहसा मुँह से निकल पड़ा, "हुजूर आप !"

"हाँ, जुहरा। मैंने सोचा कि तुम तो आओगी नहीं। काफी देर तक तुम्हार इन्तजार करता रहा। फिर सोचा खुद ही क्यों न चल कर मिल लूँ।"

"मगर, हुजूर ने बिलावजह इतनी जहमत गवारा की। मैं तो खुद ही हुजूर की खिदमत में हाजिर होने की बात सोच रही थी।"

"कल से तो तुम्हारा दर्जा बादशाह सलामत की निगाह में ऊँचा हो गया है।" चारपाई पर बैठते हुये खाँ साहब ने कहा।

"हुजूर भी हँसी उड़ा रहे हैं। कल रात से मेरी क्या हालत है, इसका अन्दाजा हुजूर नहीं लगा सकते।"

"अन्दाजा लगाने की जरूरत भी नहीं है। तुम्हें सामने देखकर कोई भी समझ सकता है कि तुम कितनी खुश रही हो।"

"मैं खुश रही हूँ ?"

"और नहीं तो क्या नाराज रही हो ?"

"मेरी बड़ी बुरी हालत रही। जरा भी राहत नहीं मिली।"

"वह तो तुम्हारी पोशाक बता रही है।"

"ओफ ! इनकी ओर तो मेरा ख्याल ही नहीं गया कि इन्हें उतारना भी है।" वस्त्रों पर एक उड़ती हुयी दृष्टि डालते हुये जुहरा ने कहा।

"वह हार कहाँ गया जिसे मैंने तुम्हें दिया था ?"

"वह···वह···तो···मैं···।"

"डरो नहीं; डरो नहीं। कल के वाकिया में तुम्हारी कोई गलती नहीं थी।"

"यह आप क्या कह रहे हैं हुजूर ?"

"मैं दुरुस्त कह रहा हूँ। उसमें तुम्हारी कोई गलती नहीं है।"

"फिर किसकी है ?"

"मेरी।"

"आप की गलती ?"

"हाँ, उसमें मेरी ही गलती है। यह सब मेरी ही [illegible]

"यह आप क्या कह रहे हैं ! मुझे वह हार [illegible] होना चाहिए था।"

"होना क्यों नहीं चाहिये था। मैंने ही तो [illegible]

बाजी किसी और के हाथ न लगने पावे। अगर तुम पहन कर गईं तो इसमें तुम्हारी क्या गलती। मुझे वह दूसरा हार तोहफे में नहीं देना चाहिए था।"

"हुजूर कनीज की गल्ती को अपनी गल्ती मानकर मुझे शर्मिंदा कर रहे हैं।"

"नहीं, असलियत यही है, जुहरा।"

"बड़े लोगों में यही तो खसूसियत होती है कि नेकी करते जाते हैं और यह कभी भी मंजूर नहीं करते कि वे नेकी कर रहे हैं।"

"यही तो तुम्हारा बात करने का तरीका है जिसने बादशाह और बेगम-साहबा को अपने कब्जे में कर रखा है।"

"अब ऐसा न कहिये सरकार। वक्त बहुत बदल गया है। वे तो मेरी जिन्दगी के चन्द खुशी के दिन थे जिनमें मैं अपने को भूल गयी थी। अब फिर वापस अपनी असली हालत में आ गई हूँ।"

"मतलब ?"

"बेगमसाहबा हद से ज्यादा नाराज होंगी।"

"यह तो मैंने कल ही समझ लिया था कि वह बहुत ज्यादा नाराज हैं, पर उन्हें तो मेरे ऊपर नाराज होना चाहिये।"

"आप पर क्यों नाराज होंगी ?"

"इसलिए कि उनकी बेइज्जती मेरे जरिये हुई है।"

"मगर सबब तो मैं हूँ।"

"मैं इस बात को मंजूर नहीं कर सकता।"

"आप के न मंजूर करने से तो कुछ हो नहीं सकता। जब बेगमसाहबा के दिमाग में यह बात आ जाय तब ना।"

"मुझे उनकी अक्लमन्दी पर पूरा यकीन है। वह कभी भी गलत नहीं सोच सकतीं।"

"गुस्से में इनसान का दिमाग ठीक काम नहीं करता। वह कभी-कभी उल्टी बात भी सोच जाता है। अगर कहीं उन्होंने ऐसा ही सोचा जैसा मैं कह

रही हूँ, तो मेरी खैर नहीं।"

"जब ऐसी कोई बात होगी, तब देखा जायगा। उसकी फिक्र अभी से क्यों कर रही हो?"

"मगर उसको भूल भी कैसे सकती हूँ?"

"यह तो मैं भी जानता हूँ कि उसका भूलना मुश्किल है, मगर अब यह बताओ कि वहाँ कब जा रही हो?"

"मेरी तो वहाँ जाने की हिम्मत ही नहीं पड़ती है?"

"क्यों?"

"वहाँ जाना खतरे से खाली नहीं है।"

"मगर न जाने से भी तो काम नहीं चलेगा। अगर वह वाकई नाराज हैं तो यहाँ रहने पर भी तो नहीं बच सकती हो।"

"हुजूर कह रहे हैं तो जाना ही पड़ेगा। आप अगर एक बार मुझे मौत के मुँह में जाने का हुक्म देंगे तो भी खुशी से तैयार हो जाऊँगी।"

"फिर, तुम यह भी समझ लो कि जहाँ तक मेरा बस चलेगा, तुम्हारा कोई बाल भी बाँका न कर सकेगा।"

"यह तो हुजूर की नजरेइनायत है।"

"नहीं जुहरा, तुम्हारी वफादारी ने मुझे जीत लिया है। मैं तुम्हारे लिये कुछ भी कर सकता हूँ।"

दोनों की वार्तालाप चल ही रही थी कि इसी बीच रमजू ने आकर किसी स्त्री के आगमन की सूचना दी। सुनते ही दोनों तत्काल समझ गये कि महल से ही कोई आया होगा। जुहरा ने घबराहट के स्वर में कहा, "उसे वहीं बैठाओ। मैं अभी आती हूँ।"

खाँ साहब को वहीं छोड़ और बाहर से दरवाजा बन्द करके जुहरा नीचे आई तो सामने खुर्शीद को बैठे हुए देखकर पूछा, "कहो खुर्शीद, कैसे आई

"आपको बेगमसाहबा ने इसी वक्त बुलाया है।"

"खैरियत तो है?"

"हाँ, कोई खास वात तो नहीं है।"

"फिर भी, कुछ तो मालूम ही होगा कि किस वजह से वुलाया है ?"

"यह तो मुझे वताया नहीं, फिर भी, मेरा अन्दाजा है कि शायद कल वाली वात के लिये ही याद फरमाया होगा।"

"यही मेरा भी ख्याल है। खैर, तुम यहीं रुको। मैं कपड़े वदल कर अभी आती हूँ।"

"कपड़े वदलने का वक्त नहीं है। उन्होंने मुझसे कहा था जिस हालत में हों, उसी हालत में साथ ले आना।"

"फिर भी कपड़े वदलना निहायत जरूरी है। देख नहीं रही हो कि कल के कपड़े अभी तक नहीं उतारे हैं।"

"जाइए, मगर जल्दी लौटियेगा।"

"अभी आई।" कहकर जुहरा फौरन ऊपर चढ़ गई।

कमरे में जाकर उसने खाँ साहव से कहा, "खुर्शीद मुझे वुलाने आई है।"

"साथ में और कोई आया है ?"

"नहीं, शायद अकेली ही आई है।"

"फिर खैरियत है।"

"क्यों ?"

"अगर कोई खतरे की वात होती तो वह अकेली न आती। उसके सा कुछ सिपाही जरूर आते।"

"खुदा करे, आपकी वात सही निकले। अच्छा, अव मैं जाती हूँ, वरना व यहाँ ही आ जायेगी।" पैरों की आहट सुनते हुये "लो, शायद वह आ रही है। मैं चली।" कहकर जुहरा नीचे जाने के लिये आगे वढ़ी तो खुर्श को ऊपर आते हुये देखा। खुर्शीद भी जुहरा को नीचे ही आता हुआ देखकर व

रुक गई और दोनों साथ ही उतर गईं। बाहर आकर दोनों गाड़ी में बैठीं और महल की ओर चल दीं।



गाड़ी तीव्रगति से राजमार्ग पर दौड़ रही थी। जुहरा विचारों में खोई हुई थी। गाड़ी हिलने के कारण उसका शरीर तो हिल रहा था, परन्तु विचारधारा तनिक भी न भंग हो पा रही थी। खासबाजार में सर्वत्र चहल-पहल थी। कौतूहल-वश खुर्शीद तो पर्दा हटाकर बाहर का दृश्य देख लेती थी, परन्तु जुहरा सिर नीचा किये हुये मौन थी। गाड़ी बढ़ती जा रही थी। कोलाहल पीछे छूट रहा था। कुछ देर पश्चात् महल आ गया। गाड़ी रुक गई। खुर्शीद उतर पड़ी और जुहरा से भी उतरने का संकेत किया। वह भी नीचे उतरी। उतरते ही वह एक बार काँप उठी। जाने की इच्छा न रखते हुये भी वह आगे बढ़ने लगी। एक-एक पग आगे बढ़ना उसके लिये दूभर था। उसको ऐसा अनुभव हो रहा था कि वह किसी शेर के मुंह मे जा रही है। खुर्शीद आगे बढ रही थी। कुछ दूर निकल जाने पर उसने पीछे मुड़कर देखा तो जुहरा धीरे-धीरे आती दिखाई दी। फ़ासला काफी हो गया था। जुहरा तेज चलने का प्रयास करने पर भी नही चल पा रही थी। खुर्शीद ने खड़े होकर प्रतीक्षा की। जुहरा के पास आ जाने पर पूछा, "आज क्या हो गया है तुम्हें? गाड़ी मे भी कोई बात नही की और यहाँ भी इतने धीरे चल रही हो जैसे ससुराल जा रही हो।"

"इतना तेज तो चल रही हूँ।"

"इसे तेज चलना कहते हैं तो तुम्हारे उस फुदकने को क्या कहते हैं? आज तो तुम्हें रोज से भी ज्यादा तेज चलकर बेगमसाहबा के सामने पहुँचना चाहिये।"

"क्यों?"

"आज तो पाँचों ऊँगली घी में हैं। तुम्हारी ही तो किस्मत है।"

"क्या बके जा रही हो ? मेरी समझ में कुछ नहीं आ रहा है।"

"अरे, जिसको बेगमसाहबा सुबह-सुबह याद फरमाती हैं उसकी तकदीर खुल जाती है।"

"मगर, मुझे तो खतरा नजर आ रहा है।"

"किस बात में ?"

"बेगमसाहबा के सामने जाने में।"

जुहरा की बात सुनकर खुर्शीद खिलखिलाकर हँस पड़ी। उसका मुक्तहास्य महल के प्रशान्त वातावरण में गूँज उठा। उसने हँसी को रोकते हुये कहा, "कैसी उल्टी बात कह रही हो ? ऐसा भी कभी हुआ है या आज ही होगा।"

"मुझे तो अपना कटा हुआ सिर खौलते हुये तेल की कढ़ाई में गिरता नजर आ रहा है।"

"फिर, आज तुम्हारा दिमाग फिर गया है, मगर जरा होश से उनके साथ बातचीत करना, जिन्दगी भर ऐश करोगी।"

खुर्शीद की बात का जुहरा कुछ भी उत्तर न दे सकी। लालकुँअरि का कक्ष पास आ गया था। जुहरा के आगमन की सूचना देने के लिये खुर्शीद शीघ्रता से आगे बढ़ी और लालकुँअरि से जाकर कहा, "जुहरा आ गई हैं।"

"कहाँ है ?"

"बाहर खड़ी हैं।"

"क्यों, बाहर क्यों खड़ी है ?"

"वह अपके पास आने में डर रही है।"

"डर रही है ?" अनजान बनते हुये बेगमसाहबा ने कहा, "मगर क्यों ?"

"यह तो मुझे नहीं मालूम।"

"जाओ, जल्दी से उसे यहाँ ले आओ।"

खुर्शीद लालकुँअरि की आज्ञा सुनकर चली गई और शीघ्र ही जुहरा को को साथ लेकर आ उपस्थित हुई। जुहरा हाथ बाँधे खड़ी थी। उसका शरीर

थर-थर-थर-थर काँप रहा था। पेशानी पर पसीने की बूँदें झलकने लगी थी। उसे खड़े-खड़े आँखों के सामने अँधेरा मालूम होने लगा। वह एकाएक जोर से हिली और धड़ाम से वहीं फ़र्श पर गिर पड़ी। लालकुँअरि ने तत्क्षण उसे उठवाया और अपने ही पलंग पर लिटाने का आदेश दिया। मुंह पर पानी के छींटे दिये गए। जुहरा ने आँखें खोल दीं। लालकुँअरि ने पूछा, "क्या हो गया है तुझे ?"

जुहरा आँखें खोले चारों ओर देख रही थी। कदाचित स्थान पहचानने का प्रयास कर रही थी, परन्तु मुँह से बोल नहीं निकल पा रहा था। उसके चेहरे की ओर देखते हुए लालकुँअरि ने कहा, "बोलती क्यों नहीं है ?"

जुहरा ने इस बार भी कोई उत्तर न दिया। उसने अपनी पूरी शक्ति एकत्र की और उठकर लालकुँअरि के पैरों पर गिर पड़ी और अपनी नाक रगड़ते हुए कहा, "मुझे माफ कर दीजिए। मुझे माफ कर दीजिये।"

लालकुँअरि ने झुककर जुहरा को उठाने का प्रयास किया, परन्तु सफलता नहीं मिली, क्योंकि वह पैरों को इतनी मजबूती से पकड़े थी कि उठाना तो दूर रहा उसका हिलना भी कठिन था। दो-तीन बार जब प्रयास करने पर भी लालकुँअरि उसे न उठा सकी, तब वह स्वयं नीचे झुक गई और उसकी पीठ पर हाथ फेरते हुये पूछा, "किस बात की माफी माँगती है ?"

"पहले माफ कर दीजिये।" उसी अवस्था में जुहरा ने कहा।

"मगर जब तक यह न मालूम हो कि तू किस गल्ती की माफी माँगती है तब तक कैसे माफ किया जाय ?"

"नहीं, नहीं, मेरी बहुत बड़ी गल्ती है। आप पहले माफ कर दीजिए।"

"अच्छ भाई, माफ कर दिया। आ, अब, उठ आ।"

जुहरा धीरे से उठ कर वहीं फ़र्श पर बैठ गई। लालकुँअरि ने पलंग बैठते हुए कहा, "तू बड़ी गुस्ताख हो गई है। जिस बात की जिद् पकड़ती उसे जब तक मनवा नहीं लेती तब तक न खुद दम लेती है और न दूसरे दम लेने देती है।"

"अगर मुझसे फिर कोई गुस्ताखी हो गई हो तो उसकी भी माफी माँगती हूँ।" झुक कर जुहरा ने कहा।

"अच्छा-अच्छा माँग चुकी माफी। क्या करेगी इतनी माफी जमा करके?"

"इसके लिये गरीबों के पास बहुत जगह होती है।"

"तो तू गरीब कब से बन गई?"

"मैं रईस ही कब थी?"

"आज तू कैसी बातें कर रही है। मैंने तुझे बुलाया था कुछ जरूरी बातें करने के लिये और मैं देख रही हूँ कि तू तो आज एक दम ही बदल गई है। अच्छा आ, मेरे साथ आकर बैठ।"

"आपकी बराबरी मैं भला कैसे कर सकती हूँ?"

"यह तो मैं जानती हूँ कि तू मेरा कहना नहीं मानेगी। तू तो वही करेगी जो तेरी तबियत में आयगा।" तनिक रोष प्रकट करते हुये, "अच्छा अब मेरे पास आकर बैठती है या नहीं?"

जुहरा ने अब ज्यादा विरोध करना उचित न समझा और धीरे से उठकर पलंग के एक किनारे पर बैठ गई।

"ठीक से क्यों नहीं बैठती?" जुहरा को पकड़कर ठीक से बैठाते हुये लालकुँअरि ने कहा।

"आप मुझे जरूरत से ज्यादा इज्जत दे रही हैं। मुझे डर लग रहा है कि कहीं मैं इसकी आदी न हो जाऊँ और आपकी शान के खिलाफ कुछ न कर बैठूँ।"

"उसकी परवाह तू मत कर। जिसे बादशाह सलामत से इज्जत मिलती हो वह तुझसे इज्जत पाने की भूखी नहीं है?"

"कनीज भला आपकी क्या इज्जत कर सकती है, फिर भी, डरती हूँ कहीं कल की तरह आइन्दा फिर गुस्ताखी न हो जाय।"

"कल तूने कोई गुस्ताखी तो की नहीं थी।"

"क्या कहा! मैंने कल कोई गुस्ताखी नहीं की थी?"

"क्या गुस्ताखी की थी?"

"कल की बात को आप मेरी गुस्ताखी नहीं समझती हैं ?"

"नहीं तो, अगर कोई काम किसी से अनजान में हो जाय तो उसमें उसकी गुस्ताखी ढूँढना और अपनी बेइज्जती समझना सरासर नादानी है।"

"तो क्या आप कल की बात से मुझसे नाराज नहीं हैं ?"

"नहीं तो, भला ऐसे शख्स से भी कहीं नाराज हुआ जाता है जो कल के जशन की जान रही हो।"

"तो क्या, वाकई, आप मुझसे नाराज नहीं हैं ?"

"अभी तो नहीं थी, मगर शायद अब हो जाऊँगी।"

"मैं तो कल से डर के मारे मरी जा रही थी।"

"वैसे तो मैं कल ही तुझे बुलवाना चाहती थी······।"

"किस लिए ?" बीच में ही बात काटते हुये जुहरा ने पूछा।

"इसके लिये।" पास में रखा हुआ हार जुहरा के गले में डालते हुये लाल-कुँअरि ने कहा।

"अरे रे रे रे यह आपने क्या किया ? इसे फौरन मेरी नजरों से दूर कर दीजिए। मुझे इससे डर लग रहा है।" जुहरा ने हार उतारने की चेष्टा की।

"इससे डरने की क्या बात ! यह हार तो बेजान है। यह कर ही क्या सकता है। डर तो तुम्हें मुझसे था, सो वह दूर हो गया।" लालकुँअरि ने हाथ पकड़ कहा।

"अच्छा हो कि आप इसे उतार लेने दीजिए।"

"जब कल खाँ साहब ने इसे पहनाया होगा तब यह बात नहीं कही होगी।"

"आप तो मजाक कर रही हैं।"

"अगर मैं मजाक कर रही हूँ तो हकीकत क्या है ? जरा मैं भी तो सुनूँ कि कोई मर्द किसी औरत को इतना खूबसूरत हार किसलिए देता है ?"

जुहरा के कपोलों पर लज्जाजनित लालिमा दौड़ गई थी।

"अगर खाँ साहब के साथ तुम्हारा कुछ ताल्लुक नहीं है तो उन्होंने यह हार तुम्हें क्यों दिया ?"

लालकुँअरि की बात सुनकर जुहरा के मन में आया कि बता दे कि किस कार्य में आंशिक सफलता प्राप्त करने के पुरस्कारस्वरूप यह हार मिला है, परन्तु यह सोचकर कि फिर कार्य भी बताना पड़ेगा। और यदि इन्हें हमारे षड्यन्त्र का पता चल गया तो फिर खैर नहीं और यदि न बताऊँगी तो व्यर्थ के संबंध की कल्पना किये ले रही हैं। वह बड़े असमंजस में पड़ी हुई थी। इस संकटमय परिस्थिति से निकलने का उसे मार्ग नहीं दिखाई दे रहा था। जब लालकुँअरि को जुहरा से उत्तर न मिला तो वह पुनः बोलीं, "तुम्हारी खामोशी इस बात का सुबूत है कि तुम खाँ साहब से मोहब्बत करती हो। मगर एक बात तो बता ?"

"फरमाइए।"

"तूने आजतक मुझे यह सब बताया क्यों नहीं ? मुझसे छिपाने की क्या जरूरत थी ?"

"कहाँ छिपा सकी ? आपको तो मालूम हो ही गया।"

"तो क्या तेरे बताने से मालूम हुआ है ?"

"फिर किसने बताया आपको ?"

"बादशाह सलामत ने।"

"तो क्या यह बात आलमपनाह भी जानते हैं ?"

"उन्होंने तो यह बात बताकर कल रात में मेरा गुस्सा ठंढा किया था, वरना मैं तो तेरे ऊपर सख्त नाराज थी।"

"क्या बताया था आपको परवरदिगार ने ?"

"यही कि तू और खाँ साहब दोनों एक दूसरे से मोहब्बत करते हैं।"

"तब तो मुझे यहाँ का आना-जाना बन्द कर देना चाहिए।"

"क्यों ?"

"बादशाह सलामत न जाने क्या-क्या मेरे बारे में सोचते होंगे।"

"वह तो तेरे ऊपर बहुत खुश हैं। तेरे नाच और गाने ने कल उन्हें इतना खुश कर दिया था कि वह मेरे पास तुझे शाबाशी देने आये थे, मगर तू यहाँ थी कहाँ। उन्होंने तेरे बारे में जानना चाहा था, लेकिन मैं तो गुस्से में जल

रही थी, बता ही कैसे सकती थी, और फिर, मुझे भी तो नहीं मालूम था कि तू गई कहाँ थी।"

"तो क्या उन्हें मेरा नाच-गाना इतना पसन्द आया था ?"

"यह भी कोई पूछने की बात है। अगर उन्हें पसन्द न आया होता तो तुझे पहला इनाम कैसे मिला होता ?"

"मैं तो सोच रही थी कि शायद आप की वजह से ही मिल गया हो।"

"हाँ, तू तो मुझे हमेशा गलत समझती ही रहेगी।"

"यकीन मुझे इसलिए नहीं हो रहा है कि मेरा वह नाच-गाना इतना अच्छा नहीं था जिसके लिए मुझे इनाम मिले।"

"तो क्या तू इससे भी अच्छा नाच सकती है ?"

"क्यों नहीं।"

"तब तो मैं जरूर देखूँगी तेरा नाच। कल मैं तेरा नाच अच्छी तरह नहीं देख सकी।"

"क्यों ?"

"जिस वक्त तू नाचने के लिए दरबार में आई थी, मुझे तेरे गले में हार दिखाई पड़ गया। इसे देख कर मैंने अपने गले में पड़े हुए हार को देखा। दोनों एक से थे। मुझे इसमें अपनी तौहीन नजर आई। मैं यही इन्तजार करती रही कि कब तेरा गाना खत्म हो और मैं तुझे बुला कर बात करूँ। लिहाजा मैं कल तेरे नाच और गाने का मजा न ले सकी।"

"तब तो आपको खुश करने के लिए मैं जरूर नाचूँगी।"

"मगर, जब तू इतना अच्छा नाचना-गाना जानती थी तो कुँजड़िन का पेशा क्यों अख्तियार किया था ?"

"इन्सान से उसका पेट सब कुछ करा लेता है।"

"तो क्या तू इस नाच-गाने से कमा कर अपना पेट नहीं भर पाती थी ?"

"पहले तो भर लेती थी, मगर जब से दिल्ली आई तब से भूखों मरने तक की नौबत आ गई थी।"

"तो तू यहाँ की रहने वाली नहीं है ?"

"हरगिज नहीं, न मैं यहाँ की रहने वाली हूँ और न सब्जी बेचना मेरा पेशा ही है।"

"वह तो मैं उस दिन मण्डी में ही समझ गई थी कि तेरा पेशा सब्जी बेचना नहीं है, मगर तू रहने वाली कहाँ की है ?"

"आगरे की। मैं यहाँ आने से पहले आगरे में रहा करती थी। किसी तरह वहाँ नाच-गाकर पेट भर लेती थी।"

"फिर यहाँ कैसे आई ?"

"वहाँ सुनने में आया था कि बादशाह सलामत नाच-गाने के बहुत शौकीन हैं। जो उन्हें इससे खुश कर लेता है, उसे बहुत-सा इनाम मिलता है। इसी लालच से मैं भी चली आई थी। काफी दिनों तक बादशाह सलामत से मुलाकात करने का जरिया ढूँढ़ती रही, मगर कोई भी जरिया न मिला। जो कुछ पास में था वह भी धीरे-धीरे खत्म हो गया। आखिरकार मजबूर होकर मुझे एक दिन मण्डी में सब्जी लेकर बैठना पड़ा और उसी से खाने भर को मिलने लगा। मैंने भी मेहनत से काम किया। दुकानदारी चमक गई। दूसरे कुँजड़े जलने लगे। वह मुझे भगाना चाहते थे। वही फरियाद लेकर बादशाह सलामत की खिदमत में हाजिर हुई थी। इसके आगे का हाल आप खुद जानती हैं।"

"तो यह कहो कि खानदानी पेशा नाच-गाना है। कुँजड़िन तो कुछ दिन के लिए बनी थी।"

"खानदानी पेशा नाचना-गाना नहीं है। इसे तो सिर्फ मैं ही करती हूँ।"

"तो और लोग क्या करते हैं ?"

"और मेरा अब इस दुनियाँ में कोई नहीं है। सिर्फ एक बहिन थी, मगर उसका भी पता नहीं कि वह कहाँ है और किस हालत में है।"

"क्यों, तुम्हें अपनी बहिन के बारे में भी पता नहीं है ?"

"नहीं, वह बचपन में ही गायब हो गई थी। तब से उसका कुछ भी पता नहीं है।"

ज्यों-ज्यों जुहरा उत्तर देती जा रही थी त्यों-त्यों तालकुँअरि की उत्सुकता बढ़ती जा रही थी। अपनी उत्सुकता को छिपाते हुए उन्होंने पूछा, "मगर यह तो बताया ही नहीं कि तू इस पेशे में आई कैसे ?"

"यह बड़ा दर्दनाक किस्सा है। क्या करियेगा सुनकर ?"

"नहीं, मुझे ऐसे लोगों से खास हमदर्दी है। जरूर सुनाओ।"

जुहरा ने जब यह समझ लिया कि सुनाना ही पड़ेगा तो उसने कहना प्रारम्भ किया, "काफी दिन पहले की बात है। मैं बहुत छोटी थी। मेरे वालिद गुजर चुके थे। सिर्फ मैं, मेरी माँ और बड़ी बहिन ही रह गई थीं। मेरा एक निजी मकान था जो वालिद की बीमारी में गिरवी रखा जा चुका था। फिर भी, हम लोग रहते उसी मकान में थे। कुछ किराया भी मिल जाता था, जिससे हम लोगों की रोटी किसी तरह चल रही थी। गरीबी बहुत थी। एक-एक दिन बड़ी मुश्किल से गुजर रहा था। वालिद के न रहने से माँ बहुत कमजोर हो गई थी। कमजोर इंसान का शरीर तमाम बीमारियों का घर होता है। माँ की हालत दिन-पर-दिन गिरती चली गई। एक दिन ऐसा हुआ कि लाली माँ के लिए दवा लेने बाजार गई।"

"लाली ! कौन लाली ?"

"मेरी बड़ी बहिन का नाम लाली थी। शाम तक जब वह वापस न आई तब हमारे पड़ोस के दो-एक लोगों ने मुझे साथ लेकर ढूँढ़ना शुरू किया। मगर वह मिली नहीं।" आँसू पोंछते हुए "कुछ दिन बाद वे पड़ोसी भी कहीं चले गये। उनके जाने के बाद कुछ-कुछ पता चला कि उन्हीं लोगों ने लाली को गायब किया था। लाली मुझसे कहीं ज्यादा खूबसूरत थी। फिर उम्र भी तो बढ़ रही थी। शायद उन लोगों की निगाह की वह शिकार हो गई थी। लाली के चले जाने से माँ को काफी सदमा पहुँचा। एक दिन वह भी लाली का नाम लेती हुई मुझे इस दुनियाँ में अकेली छोड़ कर चली गईं।"

जुहरा के आँसू काफी तेजी से बह रहे थे। वह उन्हें जितना ही रोकने का प्रयास करती वे उतनी ही वेग से बाहर निकल रहे थे। जुहरा के सिर पर

लालकुँअरि ने सांत्वना का हाथ रखते हुए कहा, "घबड़ाओ नहीं, तुम्हें तुम्हारी वहिन जरूर मिलेगी।"

"कहाँ मिलेगी ? कैसे मिलेगी ? कब मिलेगी !" सिर ऊपर उठाकर लालकुँअरि की ओर देखते हुए जुहरा ने पूछा।

"मिलेगी, जल्दी ही मिलेगी।" अपने आँसू छिपाते हुए लालकुँअरि ने कहा।

"मुझे तो कोई उम्मीद नहीं है। जिसे गायब हुए इतना जमाना गुजर गया, वह भला अब क्या मिलेगी।"

"नहीं, नाउम्मीद नहीं होना चाहिए। एक दिन तुम्हें वह जरूर मिलेंगी।"

"उनकी तलाश में मैं कई शहरों में गई, मगर कुछ भी पता नहीं चला। इसी शहर में इतने दिनों से हूँ, मगर मिलने के लिए कोई आसार नजर नहीं आ रहे हैं।"

"मेरे ऊपर यकीन करो। मैं उन्हें तुमसे जरूर मिलवा दूँगी।"

"तब तो आप उन्हें जानती होंगी। बताइये, जल्दी बताइये, कहाँ हैं वह ? आपकी बड़ी मेहरबानी होगी।" जुहरा ने लालकुँअरि के झुककर पैर पकड़ने की चेष्टा की।

"सब्र से काम लो। वक्त आने पर मालूम हो जायेगा।"

"रहम कीजिए। मैं मिलने के लिए बेताब हो रही हूँ।"

"तुम्हारा इसी में भला है कि तुम अभी उनसे न मिलो।"

"उसकी आप फिक्र न करिये। मैं बरबाद होकर भी एक बार उनसे मिलना चाहती हूँ।"

"ज्यादा जिद् अच्छी नहीं होती। आगे अपना किस्सा सुनाओ।"

जुहरा समझ गई कि लालकुँअरि ऐसे बताने की नहीं, अतएव उसने पुनः कहना प्रारम्भ किया, "एक साहब, जो अपने को हम लोगों का रिश्तेदार कहा करते थे, माँ के मरने के बाद दो-तीन दिन तक वहीं रहे। मैंने उन्हीं को अपना हमदर्द समझ लिया था और धीरे-धीरे दिन गुजरने लगे थे। एक दिन उन्होंने

मुझसे अपने गाँव में चलकर रहने को कहा। उनके बहुत कुछ कहने-सुनने पर मैं राजी हो गई। शाम के वक्त घर में जो कुछ सामान था, वह उन्होंने सब बाँधा और मुझे लेकर शहर से बाहर की ओर चल दिए। शहर के बाहर हम लोग थोड़ी ही दूर गए होंगे कि उन्होंने मुझे एक पेड़ के नीचे बैठने को कहा। मैं वहीं बैठ गई। मेरे कान में सोने की बालियाँ थीं। उन्होंने मुझे फुसलाकर उन्हें भी उतार लिया और कुछ खाना लाने के लिए कहकर बाजार की ओर गए। वह जा रहे थे। मैं उन्हें जाते हुए तब तक देखती रही जब तक वह मुझे दिखाई दिये। इसके बाद वह ऐसे गायब हुए कि फिर वापस न आये। मैं काफी देर तक वहीं रोती रही। जब काफी देर हो गई तो मैं उसी रास्ते से वापस लौटने लगी। रात बढ़ती जा रही थी। मैं कभी दौड़ती कभी धीरे-धीरे चलती शहर आ गई। मुझे काफी भूख लगी हुई थी। मेरे आँसू नहीं थम रहे थे। मैं रोती-बिलखती अपने घर को तलाश कर रही थी कि एकाएक एक आदमी ने पास आकर मेरे सिर पर हाथ फेरा और पूछने लगा, "तुम कहाँ जा रही हो, बेटी ?"

"अपने घर।" मैंने कहा।

"कहाँ है तुम्हारा घर ? चलो मैं पहुँचा दूँ।"

"उसने मेरे जवाब पाने से पहिले ही मुझे अपनी गोद में उठा लिया और कँधे से लगा लिया। मुझे भी राहत मिली। मेरा रोना बन्द हो गया, लेकिन मेरी सिसकियाँ फिर भी चालू थी। कुछ दूर चलने के बाद उसने मुझे एक घर में उतारा। वहाँ एक मोटी-मोटी औरत सजधज कर बैठी हुई थी। मुझे देखकर वह खूब खुश हुई। मुझे पुचकारकर अपने पास आने को कहा, लेकिन मुझे उससे डर लग रहा था। मैं उसके पास नहीं गई। उस आदमी के कहने पर उस औरत ने मुझे खाना खिलाया, मेरे कपड़े बदले और कुछ छिपा कर उस आदमी को दिया। उसके बाद उस आदमी की शक्ल मैंने आज तक नहीं देखी। मैं खा-पीकर सो गई। कई दिन तक मेरा मन वहाँ नहीं लगा। लेकिन धीरे-धीरे मेरा मन वहाँ लगने लगा। उसने मुझे नाचने और गाने की तालीम भी देनी शुरू कर दी। मुझे वह बहुत अच्छा लगा। मैं भी सब कुछ भूलकर

नाच-गाना सीखने लगी। मुझे वहाँ सब तरह की सहूलियतें थीं। किसी चीज की कमी न थी। मैं धीरे-धीरे बढ़ने लगी। उम्रके साथ-साथ मेरी खूबसूरती भी दिन दूनी रात चौगुनी बढ़ने लगी। वहाँ रोजाना शाम को महफिल जमती। उसके यहाँ कई नाचने-गाने वाली थीं। वे रोजाना उस महफिल की रौनक बढ़ाया करती थीं। मुझे भी वह औरत उस महफिल में लेकर बैठती थी। मैं वहाँ की रवैया देखा करती। लोग आते थे। थोड़ी देर में अपनी जेबें खाली करके चले जाते थे। उनमें से कोई-कोई रुक भी जाता था, जिसकी खातिर-दारी खासतौर से की जाती थी। एक दिन उसने मुझे भी महफिल में नाचने को कहा। मैंने पहले तो बहुत नाहीं-नूँहीं की, लेकिन उसकी डाँट ने मुझे तैयार कर ही लिया। वह मेरी जिन्दगी का पहला मौका था जब मैं मर्दों के सामने नाची थी। मुझे तो नहीं मालूम हुआ कि लोगों को मेरा नाच-गाना पसन्द आया या नहीं, लेकिन उस औरत की आमदनी जरूर बढ़ गई थी, क्योंकि वह बहुत खुश नजर आ रही थी। वह खुश उसी दिन होती थी जिस दिन अच्छी-खासी रकम मिल जाती थी। मेरी भी खातिरदारी बढ़ गई थी। मेरी माँग बाहर से भी आने लगी थी, लेकिन वह मुझे बाहर नहीं जाने देती थी। मेरे चाहने वालों की संख्या की सीमा न थी। धीरे-धीरे शहर के बड़े-बड़े लोगों से मेरी मुलाकात बढ़ती गई। मुझे ऐसा मालूम होने लगा कि सभी आने वाले मुझे अपनी बनाना चाहते थे, लेकिन वह औरत किसी को भी हाथ नहीं रखने देती थी।"

लालकुँअरि बड़े मनोयोग से जुहरा की कथा सुन रही थी। दासियाँ आस-पास चक्कर लगाकर लौट जाती थीं। दिन काफी चढ़ आया था। सभी को आश्चर्य हो रहा था कि इतने दिन चढ़े तक लालकुँअरि ने कुछ भी नहीं खाया-पिया। जुहरा जैसे ही रुकती वैसे ही वह उससे आगे सुनाने को कहतीं। जुहरा भी उनका आग्रह न टाल पाती और सुनाना प्रारम्भ कर देती, "धीरे-धीरे दिन गुजरने लगे। एक दिन मेरे चाहने वालों में से एक शख्स ऐसे निकल आये जिनसे शायद मेरे बारे में सौदा किया गया था। उस दिन महफिल खत्म

होने के बाद वह मेरे पास आये और अलग कमरे में रात भर रहे। उन्होंने मुझसे शादी करनी चाही। मैं उनकी उस बात पर कई दिन तक सोचती रही। आखिरकार मैं तैयार हो गई। जिस दिन हम लोग वहाँ से भाग निकलने को थे, उसी दिन न जाने कैसे उस औरत को मालूम हो गया। उसने मुझसे सब बातें पूछीं। मैंने साफ-साफ उसे बता दिया। उसने मुझे बहुत सी ऊँची-नीची बातें समझाईं, लेकिन उन बातों का मुझ पर कोई असर नहीं पड़ा। मैंने समझ लिया था कि शादी करके रहने में ही भलाई है। उस दिन से मेरे ऊपर बड़ा पहरा लगा दिया गया। उसी दिन शाम के वक्त महफिल जमने के पहले ही मेरे चाहने वाले की और उस औरत से कुछ कहासुनी हो गई। वह तो पहले से ही जली-भुनी बैठी थी। उसने दो-एक बातें ऐसी कह दीं कि उन्हें कुछ गुस्सा आ गया और उनकी तलवार के एक ही हाथ में उस औरत का सिर जमीन पर लुढ़कने लगा। मैं छिपकर यह सब देख रही थी। मेरे मुँह से बड़ी जोर से चीख निकल पड़ी। वह आदमी उसके बाद वहाँ नहीं रुका। थोड़ी देर में ही सिपाही आ गए। मेरे अलावा उस मकान में और कोई नहीं रह गया था। सभी नौकरा-नियाँ भाग गई थीं। सिपाहियों ने मुझसे पूछ-ताछ करनी शुरू की। मुझे वे लोग परेशान करने लगे। मैं उनसे पिण्ड छुड़ाना चाहती थी। मेरे पास जो कुछ भी था, देकर उनसे पिंड छुड़ाया और सीधे शहर छोड़कर दिल्ली भाग आई। इसके बाद के किस्से से आप वाकिफ हैं।" जुहरा ने एक लम्बी साँस ली और शान्त हो गई।

लालकुँअरि को जुहरा की जीवन-गाथा सुनने के बाद एक प्रकार की शान्ति मिली और शेष शंका भी दूर हो गई। उन्हें पूरा विश्वास हो गया कि जुहरा उनकी ही छोटी बहिन है, लेकिन अभी वह इस बात को प्रगट नहीं करना चाहती थी, क्योंकि वह चाहती थी कि जुहरा खाँ साहब की बीवी बन जाये। अगर खाँ साहब को यह बात मालूम हो जायगी कि वह उनकी बड़ी बहिन हूँ तो फिर वह उससे शादी नहीं करेंगे। इसी भय से लालकुँअरि जुहरा से अपने को छिपा रही थी। अपने मनोभावों को दबा लालकुँअरि ने ऊपरी

सहानुभूति व्यक्त की, वाकई, "तुम्हारी जिन्दगी की दास्ताँ बड़ी दर्दनाक है। अब तुम्हारा इस दुनियाँ में कोई नहीं रह गया है। सिर्फ एक वहिन ही जिन्दा बची है। मैं जल्दी ही उनसे तुम्हें मिलाने की कोशिश करूँगी। अपने बहते हुये आँसुओं को पोछते हुये, "तुम हिम्मत से काम लो। जब तक तुम्हें तुम्हारी वहिन न मिल जाय तब तक इस महल को अपनी बहन का घर समझ कर यहीं रहो।" कह कर लालकुँअरि ने जुहरा को गले से लगा लिया।

"आप क्या कह रही हैं ? मैं भला यहां कैसे रह सकती हूँ ?"

"क्यों, यहाँ रहने में तुम्हें क्या परेशानी है ?"

"परेशानी तो कुछ भी नहीं है, लेकिन जरा मेरी घूमने की आदत है।" कहकर जुहरा ने सिर झुका लिया।

"ऐसा क्यों नहीं कहती कि खाँ साहब से मिले बिना चैन नहीं पड़ती।"

"ऐसी बात नहीं है। मुझे आजादी ज्यादा पसन्द है।"

"आजाद रहना तो मुझे भी पसन्द है। तुम्हें घूमते-फिरने की पूरी आजादी रहेगी। कभी-कभी मैं भी तुम्हारे साथ घूमने चला करूँगी। अच्छा साथ रहेगा।"

जुहरा ने बाहर की ओर देखते हुये आश्चर्य व्यक्त किया, "अरे ! यह तो दोपहर हो गई। आज मैंने आपका बहुत वक्त जाया किया। शाम को फिर आऊँगी।" कह कर जुहरा पलंग से उठी और जाने लगी। लालकुँअरि ने हाथ पकड़कर रोकते हुये कहा, "तू अभी नहीं जा सकती। आज तुझे मेरे साथ खाना पड़ेगा।"

दोनों ने बैठकर एक साथ ही खाना खाया। खाना खाते समय दोनों एक दूसरे को देखती जातीं। देखकर मुस्करा देतीं। बीच-बीच में एक-आध बात भी हो जाती। खाने के पश्चात् संध्या समय आने का वायदा करके जुहरा चली गई।

O

जुल्फिकार खाँ अपने महल के एक कक्ष में बड़ी बेचैनी से चहल-कदमी कर रहे थे। मस्तिष्क में विचारों की आँधी चल रही थी। एक विचार आता तो दूसरा आने के लिए मचल उठता और अपने अस्तित्व को प्रभावपूर्ण बनाने के लिए पूर्वविचार को समाप्त कर देता। इस प्रकार विचारों का आवागमन चल रहा था। परन्तु एक विचार बार-बार उनके मस्तिष्क से आकर टकराता था और वह था जुहरा का सौन्दर्य। जश्न में जब से खाँ साहब ने जुहरा को उसकी नृत्य-मुद्रा में देखा था तब से उसका सौन्दर्य उनकी दृष्टि में समाया हुआ था। जुहरा के यहाँ इस समय तक कई बार नौकर को उसको बुलाने के लिए भेजे जा चुके थे, लेकिन जुहरा का कहीं पता नहीं था। इस बात ने उन्हें और अधिक परेशान कर रखा था। यद्यपि वे जुहरा के लालकुँअरि के यहाँ जाने से परिचित थे, परन्तु वह अभी तक वापस नहीं आई—इस बात ने उनके हृदय में किसी अनिष्टकारी शंका को जन्म दे दिया था। अन्त में उन्होंने अपना एक आदमी राजमहल की ओर भी भेजा और उसने जुहरा के वहीं होने की सूचना दी। इतनी सूचना से वह इस बात का पता न लगा सके कि लालकुँअरि ने जुहरा के साथ कैसा व्यवहार किया। समय के साथ उनकी व्यग्रता बढ़ती जा रही थी।

जुहरा महल से सीधे अपने घर की ओर चली। खाँ साहब से संध्या समय मिलने का विचार किया, लेकिन संध्या समय तो उसे पुन लालकुँअरि के पास आना था, इसलिए वह मुड़ी और सीधे खाँ साहब से मिलने के लिए चल दी। जुहरा की गाड़ी खाँ साहब के महल के सामने रुकी। गाड़ी से उतर कर वह ऊपर चढ़ती चली गई और खाँ साहब के कक्ष में जा पहुँची। खाँ साहब तकिए

के सहारे नेत्रों को वन्द किए थे। जुहरा ने द्वार पर खड़े हो खाँ साहव की स्थिति पर गम्भीरतापूर्वक विचार किया और तत्काल खाँ साहव की वास्तविक स्थिति की कल्पना कर ली। वह जोर से खाँसी। खाँ साहव का मौन भंग हो गया और जुहरा को देखकर माथा सिकोड़ते हुये उन्होंने पूछा, "तो तुम आ ही गई ?"

"क्यों, क्या हुजूर को शक था ?"

"वेशक ! मैं तो सोच रहा था कि अव महल से वापस नहीं लौटोगी।"

"मैं तो पहले ही लौट आती, मगर वेगम साहवा ने मुझे रोक लिया, इसीलिए देर हो गई।"

"उन्होंने किसलिए रोक लिया था ?"

"उन्होंने मेरी पुरानी जिन्दगी की कहानी जाननी चाही थी। मैं उन्हें सुनाती रही और वह वड़े गौर से सुनती रहीं। वीच-वीच में मेरे साथ वह भी रोने लगती थीं। जव मैं उनको रोता हुआ देख कर सुनाना वन्द कर देती तो वह फौरन मुझसे आगे सुनाने को कहतीं। आखिरकार उन्होंने मेरी वहिन से मुझको मिलाने का वायदा किया है।"

"क्या कहा ! तुम्हें तुम्हारी वहिन से मिलाने का उन्होंने वादा किया है ?" खाँ साहव सम्हल कर वैठ गए थे।

"हाँ, उन्होंने वादा किया है कि वह जरूर हमें उनसे मिला देंगी।"

खाँ साहव ने जुहरा की ओर ध्यान से देखा और फिर वेगम साहवा की मुद्रा की ओर ध्यान ले गये। दोनों के मिलान करने पर उन्हें विश्वास हो चला कि वेगम साहवा ही जुहरा की वड़ी वहिन हैं। अपनी धारणा को अधिक पुष्ट करने के उद्देश्य से उन्होंने पूछा, "तुम्हारे वहाँ पहुँचने पर उन्होंने तुम्हारे साथ-कैसा वर्ताव किया ?"

"वड़ी वहिन की तरह।"

जुहरा की इस वात को सुनकर खाँ साहव का विश्वास पुष्ट हो गया। लम्वी साँस लेते हुये उन्होंने कहा, "तुम्हारी मुलाकात तुम्हारी वड़ी वहिन से

मुमकिन है।"

"कैसे ?" पास खिसकते हुए उत्सुकतापूर्वक जुहरा ने पूछा।

"बेगम साहबा के जरिए।"

"आप की बातों से साफ जाहिर हो रहा है कि आप भी मेरी बहिन को जानते हैं।"

"मैं जानता तो नहीं, मगर बेगम साहबा अपने कौल की पक्की हैं; जो कुछ कहती हैं करके दिखा देती हैं।" बात को बदलकर खाँ साहब ने कहा।

"उनके कहने के तरीके से तो मुझे भी कुछ यकीन होता है कि वह कोशिश जरूर करेंगी; क्योंकि मेरे ऊपर वह काफी खुश हैं। मुझसे तो उन्होंने महल में ही रहने के लिए कहा था और वहाँ से आने ही नहीं दे रही थीं। मैं आप से मिलने के लिए जबर्दस्ती चली आई हूँ।"

जुहरा की बात सुनकर बेगमसाहबा का उसकी बहिन होने मे खाँ साहब को तनिक भी संदेह नहीं रहा, परन्तु किसी आशंका के भय से खाँ साहब ने इस रहस्य को गुप्त ही रखा। वह भलीभाँति जानते थे कि जुहरा के हाथ से निकल जाने पर उनके कार्य में सफलता मिलना असम्भव है। जुहरा से उन्होंने प्रश्न किया, "अच्छा, एक बात बता।"

"एक क्या हजार पूछिए, सरकार।"

"अगर, मैं तुम्हें महल में रहने से रोकूँ ?"

"बेगम साहबा नाराज होंगी और आप जानते हैं कि उन्हें नाराज करना कितना खतरनाक है।"

"उनके नाराज न होने का एक रास्ता है।"

"वह क्या ?"

"तुम मेरे साथ इसी महल में रहने लगो।"

"यह कैसे मुमकिन है ! बेगम साहबा क्या सोचेंगी ?"

"इसमें सोचने की क्या बात है। वह बादशाह सलामत के साथ नहीं रहती हैं ?"

"सरकार भी कैसी बातें कर रहे हैं। कहाँ वह और कहाँ मैं ! उनका दशाह सलामत के साथ रिश्ता ही कुछ और है।"

"वह रिश्ता मेरे और तुम्हारे बीच भी तो कायम हो सकता है।"

"सरकार !" जुहरा का स्वर आश्चर्य-सिक्त था। वह विस्फारित नेत्रों से ख़ाँ साहब को देखती हुई बोली, "मेरी जगह हुजूर के कदमों में है।"

"नहीं जुहरा, मैंने काफी दिन पहले ही तुम्हें अपनी बेगम बनाने का फैसला कर लिया था।"

"तब आपने जरूर बादशाह सलामत से इसकी बाबत जिक्र किया होगा।"

"नहीं तो; मेरी जुबान से इस बाबत कभी कुछ नहीं निकला। क्या वह कुछ फरमा रहे थे ?"

"जी हाँ, उन्हें आपके दिल का राज मालूम है।"

"तब तो बेगम साहबा भी जानती होंगी ?"

"जी हाँ, उन्हीं के जरिए मुझे मालूम हुआ है।"

"फिर तो किसी के कहने-सुनने की कोई गुंजाइश ही नहीं रह गई। आज से हम लोगों की नई जिन्दगी शुरू होगी।" कहते हुए ख़ाँ साहब ने शराब सुराही की ओर संकेत किया। जुहरा ने सुराही से गिलास में शराब उड़ेली और ख़ाँ साहब को पिलाई। बीच-बीच में ख़ाँ साहब के आग्रह करने पर वह भी चखने लगी। जुहरा के जीवन का यह प्रथम अवसर था जब उसने शराब को ओठों से लगाया था। शराब का दौर चल रहा था। ख़ाँ साहब अभ्यस्त थे। जुहरा पर मदिरा का प्रभाव होने लगा। वह अपने होशो-हवास खोती जा रही थी। उसके हाथ से गिलास छूट गया और जैसे ही वह आपे से बाहर होने लगी, ख़ाँ साहब ने उसे अपनी बाहों में थाम लिया।

०

राजगद्दी पर बैठने के उपरान्त जहाँदारशाह ने पहला कार्य यह किया कि खाँ साहब की सहायता से राजवंश के उन सभी लोगों को मौत के घाट उतरवा दिया जिनसे भविष्य में किसी भी प्रकार का संकट उत्पन्न हो सकता था। एक-एक खोज-खोज कर मारा गया। इस कार्य के पूर्ण होने के पश्चात् बादशाह लालकुँअरि के साथ मदिरा में खो गए। जिस समय अजीमुश्शान और जहाँदारशाह में युद्ध हो रहा था, उस समय अजीमुश्शान का लड़का फर्रुखसियर, जो बंगाल का सूबेदार था, अपनी फौज लेकर दिल्ली की ओर बढ़ा, परन्तु बीच में ही अपने पिता के हार जाने की सूचना पाकर वह उचित अवसर न समझ कर वापस लौट गया। उसे काफी दूरी तय करनी थी। अपने पिता को जहाँदारशाह के हाथों से न बचा सका, लेकिन यह दूरी उसके लिए वरदान सिद्ध हुई।

गद्दी पर बैठने के पश्चात् जहाँदारशाह को यह भी होश न रहा कि उसके राज्य में कितने सूबे हैं और किस सूबे का प्रबन्ध किसके हाथ में है। क्योंकि शासन की बागडोर उसने पूर्णतया खाँ साहब के हाथों में सौंप दी थी। वह अपने को शासनसम्बन्धी मामलों से निश्चित समझने लगे थे। खाँ साहब भी अपने अधिकार अधीनस्थ कर्मचारियों को सौंप निश्चिन्त हो गए थे। बादशाह की ही भाँति वह भी सुरा और सुन्दरी के साम्राज्य में विचरण करने लगे थे। दोनों में अन्तर केवल इतना रह गया था कि बादशाह केवल लालकुँअरि की ही उपासना में रत थे, जब कि खाँ साहब को नित नवीन सुन्दरियों की आवश्यकता बनी रहती थी।

"सरकार भी कैसी बातें कर रहे हैं। कहाँ वह और कहाँ मैं! उनका बादशाह सलामत के साथ रिश्ता ही कुछ और है।"

"वह रिश्ता मेरे और तुम्हारे बीच भी तो कायम हो सकता है।"

"सरकार!" जुहरा का स्वर आश्चर्य-सिक्त था। वह विस्फारित नेत्रों से खाँ साहब को देखती हुई बोली, "मेरी जगह हुजूर के कदमों में है।"

"नहीं जुहरा, मैंने काफी दिन पहले ही तुम्हें अपनी बेगम बनाने का फैसला कर लिया था।"

"तब आपने जरूर बादशाह सलामत से इसकी बाबत जिक्र किया होगा।"

"नहीं तो; मेरी जुबान से इस बाबत कभी कुछ नहीं निकला। क्या वह कुछ फरमा रहे थे?"

"जी हाँ, उन्हें आपके दिल का राज मालूम है।"

"तब तो बेगम साहबा भी जानती होंगी?"

"जी हाँ, उन्हीं के जरिए मुझे मालूम हुआ है।"

"फिर तो किसी के कहने-सुनने की कोई गुंजाइश ही नहीं रह गई। आज से हम लोगों की नई जिन्दगी शुरू होगी।" कहते हुए खाँ साहब ने शराब सुराही की ओर संकेत किया। जुहरा ने सुराही से गिलास में शराब उड़ेली और खाँ साहब को पिलाई। बीच-बीच में खाँ साहब के आग्रह करने पर वह भी चखने लगी। जुहरा के जीवन का यह प्रथम अवसर था जब उसने शराब को ओठों से लगाया था। शराब का दौर चल रहा था। खाँ साहब अभ्यस्त थे। जुहरा पर मदिरा का प्रभाव होने लगा। वह अपने होशो-हवास खोती जा रही थी। उसके हाथ से गिलास छूट गया और जैसे ही वह आपे से बाहर होने लगी, खाँ साहब ने उसे अपनी बाहों में थाम लिया।

"उसके लिये तनहाई ही जरूरत है।"

आसपास बैठे लोगों को हुसेनअली ने संकेत से बाहर जाने को कहा। सभी बाहर उठकर चले गए। एकान्त समझकर फर्रुखसियर ने कहा, "आपको इस बात की तो खबर मिल ही गई होगी कि दिल्ली की गद्दी जहाँदारशाह के कब्जे में है।"

"हाँ; सो तो है ही।"

"जहाँदारशाह मेरे वालिद को मार कर गद्दी पर बैठे हैं। मैं उनसे अपने वालिद का बदला लेना चाहता हूँ।"

"जरूर लीजिए और गुलाम को हुक्म दीजिये।"

"अगर बदला लेने की ताकत मुझमें होती तो कभी का ले लिया होता।"

"फरमाइए, मैं क्या खिदमत कर सकता हूँ ?"

'मुझे, तुम्हारे खिदमत की नहीं, मदद की जरूरत है।"

"मैं तो आपका गुलाम हूँ। हमारी पूरी ताकत आपके साथ है।"

"मुझे तुमसे यही उम्मीद थी, लेकिन एक बात है।"

"वह क्या ?"

"शाही फौजों का सामना करना हँसी-खेल नहीं है।"

"वह सब मैं समझता हूँ। आप उसकी परवाह न करिये। अभी आपने हमारी फौजी ताकत देखी ही कहाँ है।"

"फिर भी, हमें पूरी तैयारी कर लेनी चाहिये। दुश्मन को कभी कमजोर नहीं समझना चाहिये।"

"आपका कहना दुरुस्त है, लेकिन शाही फौज में वह ताकत नहीं रह गई है जो शहन्शाह बहादुरशाह के जमाने में थी।"

"क्यों, फौज तो वही है, फिर ताकत में क्या कमी आ गई ?"

"बादशाह शराब में डूबा रहता है। उसने सल्तनत का पूरा इन्तजाम जुल्फिकार खाँ के हाथ में छोड़ रखा है।"

"यह जुल्फिकार खाँ कौन है ?"

हुसेनअली ने फर्रुखसियर के प्रश्न से समझ लिया कि [उसे दिल्ली की स्थिति का तनिक भी ज्ञान नहीं है। फर्रुखसियर की अज्ञानता पर वह मन ही-मन प्रसन्न होकर कहने लगा, "वही तो वजीरेआजम है। पर है वह भी बादशाह की तरह ही शराब और औरत का गुलाम। दिल्ली में नाचने-गाने वालों की ही पूछ है। उन्हीं की सुनी जाती है। उन्हीं को तरक्की दी जाती है। दरबार के वफादार सरदार नाराज हैं। वे वहाँ की उस हालत से आजिज आ चुके हैं।"

"तब तो उनको अपनी तरफ मिलाने का अच्छा मौका है।"

"उसकी फिक्र आप न करें। वह काम मैंने शुरू कर दिया है।"

"तब तो आपने कमाल कर दिया। हम लोगों को अब जल्द-से-जल्द दिल्ली की ओर कूँच कर देना चाहिए।"

"इतनी जल्दी करने से काम बिगड़ जायगा। कूँच करने के पहले मैं अपने भाई सैयद अब्दुल्ला से, जो इलाहाबाद के सूबेदार हैं, इस बारे में बातचीत करना चाहता हूँ।"

"यह भी, आपने खूब कही। अगर उन्हें भी साथ में ले लें तो हमारी ताकत काफी बढ़ जायेगी, मगर उनसे मिलने में तो काफी वक्त लग जायेगा ?"

"उसकी फिक्र आप न करिये। मैं आज ही इलाहाबाद के लिए रवाना होता हूँ। आप तब तक यहीं आराम करिए।"

"अगर आप जरूरत समझें तो मैं भी साथ चलूँ ?"

"मेरे खयाल में तो आप के चलने की कोई जरूरत नहीं है। आप काफी दूर से चलकर तो अभी आये ही हैं। कुछ दिन तो आराम करने के लिए आपको चाहिए ही। अगर आप आज ही मेरे साथ फिर चल देंगे तो तबियत खराब होने का अन्देशा है।"

"बात तो आप ठीक ही कह रहे हैं। मैं थका भी काफी हूँ। आगे चलने की अब दम नहीं है।"

"इसीलिए तो मैं आप से आराम फरमाने के लिए कह रहा हूँ।"

"फिर, ठीक है। आप ही आइये, मगर उन्हें तैयार जरूर कर लीजियेगा।"

"वह सब मैं कर लूंगा। इसे आप मेरे ऊपर छोड़ दीजिये। मैं जाकर अभी आपके आराम का पूरा इन्तजाम किये देता हूँ।"

"शुक्रिया।"

हुसेन अली वहाँ से उठकर चले गये और फर्रुखसियर के आराम की पूरी व्यवस्था करके दोपहर के पश्चात् वह इलाहाबाद के लिये रवाना हो गये।

O

संध्या का आगमन हो चुका था। अंधकार सघन होता जा रहा था। नीरवता बढ़ती जा रही थी। बाजार की दुकानें बन्द होने लगी थी। सड़कों पर दो-चार आदमी इधर-से-उधर आ-जा रहे थे। जुहरा की गाड़ी महल की ओर बढ़ रही थी। कुछ समय पश्चात् गाड़ी रुकी। जुहरा नीचे उतरी और महल के अन्दर प्रविष्ठ हो गई। दीपक जल चुके थे। महल जगमग-जगमग हो रहा था। लालकुँअरि जुहरा की प्रतीक्षा कर ही रही थी। जुहरा को आने में देर हो गई थी। एक-आध बार तो वह खुर्शीद से जुहरा के विषय में पूछ भी चुकी थीं। जुहरा मन्थरगति से कुछ सोचती-विचारती चली आ रही थी। उसके कानों में घुँघरुओं की रुनझुन और संगीत का स्वर पड़ रहा था। वह वहाँ के वातावरण की काफी अभ्यस्त हो चुकी थी। अपने जीवन में इस आकस्मित परिवर्तन के कारणों पर विचार करती हुई वह लालकुँअरि के सामने आ उपस्थित हुई। उसे अपने सामने आया हुआ देख उन्होंने पूछा, "आज बड़ी देर कर दी तूने ?"

"हाँ, कुछ देर जरूर हो। गई माफी चाहती हूँ।"

"अब भी तू ऐसी बातें करती है। ऐसी बातें तो गैर लोग करते हैं। तू तो अब मेरी छोटी बहन है क्यों है न ?"

जुहरा नतमस्तक थी ।

"क्यों, जबाव क्यों नहीं देती है ?"

"अच्छा हो कि आप हमें यहाँ रहने के लिये मजबूर न करें ।"

"क्यों ? क्या खाँ साहब के महल से ज्यादा मुहब्बत हो गई है ?"

"जी नहीं ?"

"फिर, क्या बात है जो तुझे मेरे साथ रहने में परेशानी है ?"

"आपके साथ रहने में मुझे कोई परेशानी नहीं है, मगर ......।"

"हाँ, हाँ, कहो न । कहना क्या चाहती हो ? रुक क्यों गई ?"

"मुझे वह अपने साथ रहने के लिये मजबूर कर रहे हैं ।"

"तो यह कहो कि खाँ साहब का जादू तुम पर भी असर कर गया । मैं तो पहले ही समझ गई थी कि जो खाँ साहब के चंगुल में फँसा, उसका फिर निकल सकना नामुमकिन है ।"

"उनके चंगुल में फँसने की क्या बात है ?"

"खाँ साहब बहुत होशियार शिकारी हैं । तुम्हारी तरह न जाने कितनी उनकी मोहब्बत का शिकार हो चुकी [illegible]

"लेकिन, उन्होंने तो मुझसे व [illegible] वह मुझे [illegible]ी तरह रखेंगे जिस तरह आपको............।"

हो जाता है।"

"ऐसे रिश्तों में ऐसी ही बातें की जाती हैं।"

"मगर उनकी खिलाफत करना भी तो खतरे से खाली नही है।"

"खिलाफत करनी भी नही चाहिये। खाँ साहब से बेहतर अपना बनाने के लिए कौन शख्स हो सकता है। मगर जरा होशियारी से काम लेना।"

"होशियारी से काम लेने से आपका मतलब ?"

"मेरा मतलब है कि अपने को पूरी तरह से उनके हवाले न कर देना।"

"मगर, अब बाकी ही क्या रह गया है।" कह कर जुहरा रोने लगी। उसकी पीठ पर हाथ फेरते हुये बेगमसाहबा ने कहा "खैर कोई बात नही। रोती किसलिए है ? अगर कोई गड़बड़ी देखना तो मुझे बताना। मैं तुम्हारी मदद करूँगी।"

"आपका अहसान तो पहले से ही मेरे ऊपर काफी है। आप कब तक इस तरह मेरी मदद करती रहेंगी ?"

"जबतक जिन्दा हूँ।"

"आप तो सगी बहिन से भी ज्यादा हैं। इतना ख्याल तो सगी बहिन भी नहीं रख सकती है।"

"फिर क्या है, मुझे सगी बहिन से ज्यादा ही समझ लो।"

"आपके बर्ताव ने तो मुझे सगी बहिन को भूलने पर मजबूर कर दिया है।"

"अरे रे रे, कहीं ऐसा गजब न कर बैठना। बड़ी मुश्किल से तो तुम्हारी बहिन का पता लगवाया है।"

"तो क्या मेरी बहिन का पता लग गया ?"

"हाँ।"

"कहाँ है ? जल्दी दिखाइये।"

"क्या इसी वक्त देखना चाहती हो ?"

"हाँ, इसी वक्त देखना चाहती हूँ।"

"अभी तुम तो कह रही थी कि मेरे बर्ताव ने तुम्हें बहिन को भूलने के

लिये मजबूर कर दिया है। फिर इतनी जल्दी क्यों ?"

"खोई हुई चीज के मिलने में एक अजीब खुशी होती है। जिसके लिए मैं दर-दर की खाक छानती रही, अगर उन्हें आप दिखा दें तो मैं आपकी पूजा जिन्दगी भर करती रहूँगी।"

"फिर, आँखें बन्द करो।"

जुहरा ने नेत्र बन्द कर लिये। लालकुँअरि ने बगल में रखे हुये अपने तैल चित्र को उठाया और जुहरा के सामने रखते हुए कहा, "आँखें खोलो और देखो अपनी बहन को।"

"यह तो आपकी तस्वीर है।" चित्र की ओर एक क्षण तक ध्यानपूर्वक देखने के पश्चात् जुहरा ने कहा।

"हाँ, यह मेरी ही तस्वीर है और मैं ही तुम्हारी वह बदकिस्मत बहिन हूँ जिसके रहते तुम्हें इतनी ठोकरें खानी पड़ीं।"

"तो क्या आप ही वह लाली हैं जिनको माँ आखिरी दम तक पुकारती रही थीं ?"

"हाँ, मैं ही हूँ वह।"

यह सुनते ही जुहरा लालकुँअरि के गले से लिपट गई और आनन्दाश्रु दोनों के नेत्रों से प्रवाहित होने लगे। जुहरा विशेष खुश थी; क्योंकि वह कभी कल्पना भी नहीं कर सकती थी कि उसकी बहिन भी हिन्दुस्तान के बादशाह की बेगम हो सकती है। अपने प्रति लालकुँअरि का सम्पूर्ण व्यवहार उसकी आँखों के समक्ष चित्र की भाँति गुजर गया। कुछ क्षणोंपरान्त अलग होते हुए लालकुँअरि ने कहा, "मगर तेरा नाम जुहरा कैसे पड़ा ? तुझे तो हम लोग लल्ली कहकर पुकारते थे ?"

"यह एक बहुत बड़ा राज है।"

"क्या है, जरा सुनूँ तो ?"

"वह आपसे ताल्लुक रखता है। मैं उसे आपको बताना नहीं चाहती हूँ।"

"ऐसा भी कोई राज है जो अपनी बड़ी बहिन से छुपाना चाहती हो ?"

"उसके लिए मुझे खुद अफसोस है मगर खुदा का शुक्र है कि अभी तक कुछ भी नही हुआ है।"

"मैं भी तो जानूँ कि आखिरकार बात क्या है ?"

"जुहरा, नाम खाँ साहब का रखा हुआ है।"

"मगर तुम तो इसी नाम से मण्डी में भी मशहूर थीं ?"

"हाँ, कुँजड़िन बनने के पहिले ही यह नाम खाँ साहब ने रख दिया था।"

"तो खाँ साहब से तुम्हारा काफी पुराना ताल्लुक है ?"

"हाँ।"

"फिर, तुम्हें मण्डी में बैठने की क्या जरूरत पड़ गई थी ?"

"यही तो वह राज है जो मैं आपको बताना नहीं चाहती हूँ। यह स्वांग मुझे महल के अन्दर तक आने के लिये खाँ साहब के कहने पर भरना पड़ा था।"

"क्यों ?"

"ताकि आपके दिल मे खाँ साहब के लिए जगह बनाकर आपको उनके चंगुल में फँसा सकूँ।"

"उस बदमाश की इतनी हिम्मत ! उसने मुझे समझ क्या रखा है। मैं देख लूँगी अब उसे।"

लालकुँअरि का चेहरा गुस्से से लाल हो गया था। आँखों में खून उतर आया था। ओठ काँप रहे थे। सारा शरीर ही काँप रहा था। जुहरा भी डर के मारे काँप रही थी। उसका यह रूप उसने पहिली बार देखा था। लालकुँअरि ने गुस्से मे हाँफते हुये कहा, "तुमने मुझे अभी तक क्यो नही बताया था ? मैं तुम्हारा हद से ज्यादा यकीन करती थी। तुम्हारे कहने पर कहीं भी जा सकती थी। तुम्हारे जरिये मौका ढूँढकर वह कभी भी मेरी बेइज्जती कर सकता था। खैर, अब भी कुछ नही बिगड़ा है। अच्छा किया जो बता दिया। अब मुझे उससे और ज्यादा होशियार रहना पड़ेगा।"

जुहरा अत्यन्त भयभीत हो उठी थी। अपने अनिष्ट की आशंका ने उसके हृदय में घर कर लिया था। वह नीचे सिर झुकाये हुये बैठी थी। मुँह से कुछ

भी नहीं वोल पा रही थी। साँस जहाँ-की-तहाँ रुककर रह गई थी। लालकुँअरि ने उसकी मनोदशा को समझ उसकी ठोढ़ी में हाथ लगाकर ऊपर की ओर उठाते हुये कहा, "तेरी आँखों में आँसू ! तू रो रही है ?"

"मैं अहसान फरामोश हूँ। मैंने आपके साथ दगावाजी की है। मैंने वहुत वड़ा गुनाह किया है। मुझे सजा दीजिये।"

"यह तू क्या कह रही है ! इसमें तेरी क्या गलती है। तेरी जगह पर कोई भी होता वह भी वही करता जो तूने किया है, मगर मुझे अफसोस सिर्फ इस वात का है कि तुमने दौलत और ताकत की चकाचौंव में आकर अपने को उनके हवाले कर दिया।"

"हाँ, मुझसे गलती जरूर हुई, लेकिन अव क्या हो सकता है ?"

"अव तो तेरी भलाई इसी में है कि तू खाँ साहव को खुश रख और उन्हें यह न मालूम होने पावे कि मुझे यह राज मालूम हो गया है।"

"ऐसा न हो कि वादशाह सलामत कहीं कह दें।"

"उन्हें कैसे मालूम होगा ?"

"आपके जरिये।"

"तो क्या तुम मुझे इतना वेवकूफ समझती हो कि मैं अपने हाथों से अपनी छोटी वहिन की जिन्दगी वरवाद करूँगी। मैं उन्हें कभी न वताऊँगी। हाँ, अव तुम्हें जरा ज्यादा होशियार रहने की जरूरत है।"

"फिर जाने दीजिए। रात काफी हो गई है।" जुहरा ने वाहर की ओर देखते हुये कहा।

"अच्छा जाओ। अगर कोई खास वात हो तो मुझे इत्तला कर देना। मैं तुम्हारा आखिरी साँस तक साथ दूँगी।"

जुहरा का सारा भय जाता रहा। वह खुशी-खुशी वहाँ से उठकर चल दी। उसके पैर जमीन पर न पड़ रहे थे।

(

अच्छा खासा कमरा था। अत्यन्त बहुमूल्य वस्तुओं से सुसज्जित था। झ फानूस तथा दीपदान छत में लटक रहे थे। दरवाजों और खिड़कियों पर व मूल्य रेशमी वस्त्रों के पर्दे पड़े हुये थे। फर्श पर बेशकीमती कालीन बिछी हुई। कक्ष सुगन्धित वस्तुओं से सुवासित था। धीरे-धीरे बाहर से वायु आकर सुगन्धित वातावरण को और भी अधिक सुरभित बना रही थी। अब्दुल्ला हुसेनअली को साथ में लिये हुये कमरे में आये और मसनद के सहारे बैठते उन्होंने कहा, "मुझे ताज्जुब हो रहा है कि तुम अपने आने की इत्तला बि दिये कैसे आ गये ?"

"मसला ही ऐसा आ गया जिसमें आपकी सलाह जरूरी समझकर फौ चला आया।"

"कहो, क्या मसला है ?"

"इस वक्त दिल्ली के तख्त पर जहानशाह की जगह पर जहाँदारशाह हुये हैं।"

"यह तबदीली कब हो गई ?"

"आपको नहीं मालूम ?"

"नहीं तो ?"

"जहाँदारशाह ने जुल्फिकार खाँ की मदद से दिल्ली पर हमला कर दि और बादशाह को मारकर तख्त पर कब्जा कर लिया।"

"लेकिन, इसकी कोई भी खबर हमारे पास अभी तक नहीं आई।"

"खबर देने की फुरसत किसे है।"

"क्यों, क्या सियासी मामलात इतने अधिक हैं ?"

"आप भी कमाल की बात करते हैं। बादशाहत क्या सियासी मामलात की तवालत उठाने के लिये हासिल की है ?"

"फिर क्या ऐश करने के लिये बादशाहत हासिल की है ?"

"जी हाँ, वह तो यही कर रहे हैं।"

"मगर अपनी सल्तनत के बारे में खबर रखना भी तो निहायत जरूरी होता है।"

"ऐसी उम्मीद शहन्शाह अकबर और औरंगजेब के वारिसों से नहीं करनी चाहिये। सल्तनत का काम देखने की जिम्मेदारी आजकल वजीरेआजम पर होती है।"

"मगर वजीरेआजम ने भी तो शायद इस ओर कोई गौर नहीं किया है कौन है उनका वजीरेआजम ?"

"अरे, वही जुल्फिकार खाँ जिसकी मदद से दिल्ली का तख्त हासिल किया है। मगर वह बादशाह से भी एक कदम आगे है।"

"मतलब ?"

"ऐयाशी में उसने बादशाह को भी मात कर दिया है।"

"तब तो सल्तनत में बड़ी बदइन्जामी फैली होगी ?"

"होगी क्या, है। इसी मौके से फायदा उठाने के लिये तो मैं आपके पास आया हूँ।"

"ओह यह तो मैं पूछना ही भूल गया। हाँ, अब बताओ करना क्या है ?"

"अजीमुश्शान के शहजादे फर्रूखसियर को तो आप जानते ही होंगे ?"

"हाँ, हाँ, उनसे तो मैं बाखूबी वाकिफ हूँ।"

"इस वक्त वह मेरे ही यहाँ ठहरे हुये हैं।"

"किसलिये ?"

"वह अपने अब्बाजान का बदला लेना चाहते हैं।"

"लेकिन, उन्हें तो शाही फौजों का सामना करना पड़ेगा।"

"इसीलिए तो वह मेरे पास आये हैं। दिल्ली पर हमला करने में अपनी

मदद चाहते हैं।"

"मगर इस मदद के बदले में हमें क्या मिलेगा ?"

"जो चाहोगे।"

"मतलब ?"

"वह भी तो अपने वालिद की ही तरह हैं। हमेशा अपने कब्जे में ही रहेंगे।"

"तब तो मौका अच्छा है ! इससे जरूर फायदा उठाना चाहिये, लेकिन इसके लिये तैयारी काफी जोरदार करनी पड़ेगी।"

"उसकी आप फिक्र न करिए। यह काम तो मैं कर लूँगा। कुछ फौज उनके पास है ही। हमारी और आपकी फौजें मिलकर एक अच्छी खासी फौज तैयार हो जायेगी। और फिर, नाचने-गाने वालों के लिए ज्यादा फौज की जरूरत भी नहीं पड़ेगी।"

"क्या शाही फौज भी नाचने-गाने लगी है ?"

"फौज तो नहीं नाचती-गाती है, मगर उसमें डूबी जरूर रहती है।"

"फिर भी, दुश्मन दुश्मन है। उसे अभी भी कमजोर नहीं समझना चाहिए। कुछ नई फौज तो तैयार करनी ही पड़ेगी।"

"कुछ तो करनी ही पड़ेगी और उसके लिये जल्दी भी करनी चाहिये; क्योंकि देर करने से फँसा हुआ शिकार हाथ से निकल जा सकता है।"

"इसमें अब कुछ सोचने की जरूरत ही नहीं है। फौरन ही काम शुरू कर कर देना चाहिये।

"फिर आप यहाँ पर तैयार रहियेगा। मैं उनकी फौज को [illegible] फौरन ही वहाँ से रवाना हो जाऊँगा।"

"मैं आज ही से लड़ाई का रिवाज शुरू करवा दूँगा।"

"और, मैं अभी ही यहाँ से रवाना हो जाना चाहता हूँ।"

"लेकिन, अब तो शाम का वक्त होना चाहता है। [illegible] करो। कल सुबह होते ही चले जाना।"

"अब तो आराम दिल्ली के [illegible] के बाद [illegible]

में काफी मंजिल तय हो जायेगी ।"

"रास्ता वड़ा खतरनाक है। रात में सफर करना ख़तरे से खाली नहीं होता ।"

"इसकी फिक्र मुझे नहीं है। जो दूसरों के लिये खुद खतरा वनने जा रहा है उसको किसी भी तरह के खतरे से डरना नहीं चाहिए और आप तो जानते ही हैं कि मैं अक्सर रात में ही सफर करता हूँ ।"

"समझाना मेरा फर्ज है, आगे तुम्हारी मर्जी ।"

"आपकी सलाह तो हमेशा मेरी भलाई के लिये ही होती है, मगर अब रात को सोकर जाया करने का वक्त नहीं है ।"

"अगर आज ही जाना चाहते हो तो फिर वक्त जाया न करो और फौर रवाना हो जाओ ।"

"यह लीजिये, मैं चला, मगर आप तैयारी में ढिलाई न करियेगा ।" उ हुये हुसेन अली ने कहा । दोनों वाहर आये । हुसेन अली अपने घोड़े पर सव हुये और अनुचरों के साथ चल पड़े ।

दादी की मृत्यु के वाद लालकुँअरि का शाही महल में निर्द्वन्द्व साम्रा गया था । वह जो चाहती थीं, वही होता था । उनकी आज्ञा के विरु भी शव्द वोलने का किसी में साहस न था । उनकी हर अभिला होती थी । उन्हें अपने जीवन से पूर्ण सन्तोष था । उनकी उपलब्धियाँ से भी परे थीं । वादशाह पूर्णतया उनके वश में थे ।

एक दिन वादशाह अपने दोनों शहजादों के साथ वैठे हँस-हँसकर कर रहे थे । तीनों के मुक्त अट्टहास ने निकटस्थ कक्ष में उपस्थित ला का ध्यान आकृष्ट किया । वह अट्टहास के कारण से अवगत होने संवरण न कर सकीं । उनके कक्ष में प्रवेश करते ही दोनों शाहजादे

उठकर चल दिए। बेगम खड़ी देखती रहीं। उनके जाने के पश्चात् बेगम भी कक्ष छोड़ने को हुई तो बादशाह ने रोका, "कहाँ चलीं बेगम ?"

"कहीं नहीं, जरा यूँ ही……।"

"इधर, कई दिनों से तुम कुछ मायूस-सी नजर आ रही हो। क्या बात है ?"

"कुछ नहीं।"

"इधर पास आकर तो बैठो।"

"आपके पास बैठने वालों की क्या कमी है।"

"ओह।" गम्भीरता को हास्य में परिणत करते हुए बादशाह ने कहा, "तो नाराजगी का सबब अब समझ में आया।" उठकर बेगम को पकड़ निकट बैठाते हुए बादशाह ने समझाया, "बेगम ! अब तुमसे कुछ छिपा नहीं है। जब से दादी का इन्तकाल हुआ है, दोनों शाहजादे बेलगाम हो गए हैं। इनकी खोज-खबर लेने वाला कोई नहीं रहा। न मालूम ये कैसी जिन्दगी जी रहे हैं। कई दिनों से सोच रहा था, जरा दरियाफ्त करूँ, क्योंकि हमारे बाद इन्हें ही तो यह हुकूमत सम्हालनी है।"

"क्यों नहीं !" दीर्घ निःश्वास छोड़ बेगम उठने को हुई।

उठने का उपक्रम करती बेगम को पकड़ बैठे रहने का आग्रह करते हुए बादशाह ने कहा, "तुम शायद इसे दूसरी नजर से देख रही हो। मगर किसी गलतफहमी का शिकार होना कभी अच्छा नहीं होता।"

"हुजूर यकीन रखें, मैं किसी किस्म की गलतफहमी का शिकार नहीं। पर, कभी-कभी मेरा भी दिल चाहता है कि कोई अपना होता और आपकी ही तरह बैठ कर बातें कर सकती।" लालकुँअरि का स्वर वेदनासिक्त हो गया था।

बादशाह ने स्त्रीहृदय की अतृप्त अभिलाषाजन्य वेदना को अनुभव किया। उन्होंने समवेदना व्यक्त की, "बेगम ! यह सब तो खुदा की देन है। जिसकी तकदीर में जो होता है, वही मिल पाता है।"

"आप दुरुस्त फरमा रहे हैं। तकदीर के आगे किसी की नहीं चलती। जो हासिल हो गया, वही क्या कम है।"

"इतनी जल्दी मायूस होने का सबव समझ में नहीं आता। अल्लाह चाहेगा तो तुम्हारी यह ख्वाहिश भी जल्द-से-जल्द पूरी होगी।"

"क्यों न हम लोग शेख नसीरुद्दीन अवधी की कब्र तक चलें। कल जुहरा बता रही थी कि वहाँ मुँह मांगी मुराद मिलती है।"

"मुझे क्या उज्र हो सकता है। जरूर चलो।"

"मगर एक बात वह बड़ी अजीब बता रही थी।"

"वह क्या ?"

"कब्र के पास एक तालाब है। उसमें औरत-मर्द को साथ-साथ चालीस हफ्ते तक नंगे नहाना पड़ता है, तभी औलाद का मुँह देखने को नसीब होता है।"

"तब तो, और भी, मजा रहेगा। कुछ वक्त इस तरह भी कट जायेगा।"

"वैसे मैं आपको कभी भी इतनी जहमत उठाने को मजबूर न करती, अगर एक भी कोशिश कारगर साबित हो गई होती।"

"ओह ! तो बेगम ने कुछ उठा नहीं रक्खा है। क्या-क्या किया है, जरा मैं भी तो सुनूँ।"

"कुछ नहीं, औरत जात कर ही क्या सकती है। जिसने जो कहा, सुन लिया; अगर बात समझ में आ गई तो कहीं किसी कब्र पर दुआ माँगने चली गई तो कभी किसी हकीम की कोई दवा खा ली। मगर सब बेकार साबित हुआ।"

"नहीं, बेगम ! पता नहीं कब कौन दवा या दुआ काम कर जाय। कोशिश तो करनी ही चाहिए। शेख की कब्र पर कब चलना है ?"

"इतवार को जाना बेहतर समझा जाता है। वैसे जब आपकी मर्जी हो।"

"इतवार तो आज ही है। नेक काम में देर क्यों ? क्यों न अभी चल जाय ?"

"सब आपकी मेहरबानी है।" गतिमान गाड़ी में हिलती बेगम की मुस्कान बिखर गई।

"मेरी मेहरबानी नहीं, बेगम ! इसमें कशिश ही कुछ ऐसी है कि जो भी इसका एक बार मजा चखता है, वह हमेशा-हमेशा के लिए इसका गुलाम बन जाता है।"

"फिर भी लोग इसकी बुराई करते नहीं थकते ! लोगों का कहना है कि जहाँ शैतान खुद नहीं पहुँच पाता, वहाँ शराब को भेज देता है।"

"तब तो इसकी ताकत का अन्दाजा आसानी से लगाया जा सकता है। शैतान बहिश्त को छोड़ सब जगह पहुँचने की ताकत रखता है। और मेरा तो ऐसा यकीन है कि इसमें इतनी ताकत है कि यह बहिश्त को मयख्वार के पास खींच लाती है।"

"मगर इसने इनसानियत को नुकसान भी तो इतना पहुँचाया है जितना जंग, भुखमरी और महामारी तीनों ने मिलकर नहीं किया है।"

"यह तो सब, बेगम, कहने की बातें हैं। शराब ने नुकसान नहीं बल्कि आपसी दुश्मनी को भूलने में मदद की है। मेरे ख्याल से शराब को छूत की बीमारी समझ दूर भागने वाले मजहबी दीवानों ने इनसानियत को जितना तबाह और बरबाद किया है उतना किसी ने नहीं। तुमने भी शायद सुन रखा हो, दुनियाँ में जितनी भी बड़ी जंगें हुई हैं वे सब किसी-न-किसी मजहबी बात को लेकर हुई हैं। और फिर, सबसे बड़ी बात तो यह है कि लाख बुराई इसमें साबित करने वाले इसके उरूज में किसी तरह की कमी आज तक नहीं ला सके। वक्त के साथ-साथ इसका असर बढ़ता जा रहा है। किसी भी कौम की तवारीख में ऐसा वक्त नहीं बताया जा सकता जबकि शराब का चलन न रहा हो, पर हर कौम की जिन्दगी के एक खास वक्त पर उँगली रखी जा सकती है, जब मजहब का कोई नाम न जानता था। मजहब बहुरूपिया है। यह हजार शक्लों वाला है, गिर-गिटान की तरह इसने मौका देखते ही रंग बदला है, जब कि शराब हमेशा अपनी असली हालत में रही है। इसने कभी किसी के ऊपर

कोई जुल्म नहीं ढाया; कभी किसी को अपनी कौम में मिलाने की जबरन कोशिश नहीं की; इसने कभी किसी की नींव पर अपनी दीवाल खड़ी करने की हिमाकत नहीं की। इसने सदा मुहब्बत से एक साथ उठना-बैठना सिखाया है। इनसान में फर्क पैदाकर कभी जंग की सूरत नहीं पैदा की। इसने इनसानी-मुल्की और मजहबी भेद-भावों को भुला सब को बुरे वक्त में एक-दूसरे की मदद करने का सबक सिखाया है।" गाड़ी के रुकने का आभास पाते ही बादशाह ने जिज्ञासा व्यक्त की, "गाड़ी क्यों रोक दी?"

"हुजूर चिराग दिल्ली यही है।" गाड़ीवान ने नीचे खड़े हो उत्तर दिया।

बेगम ने गाड़ी से नीचे कदम रखते हुये कहा, "वाह! हम लोग इतनी दूर निकल आये। दूरी मालूम ही न हो सकी।"

"अब यकीन हुआ कि दुःखदर्द के अहसास को मिटाने की इसमें कितनी जबर्दस्त ताकत है।" बादशाह ने मजार की ओर पैर बढ़ाते हुये कहा, "यहाँ तो अच्छी-खासी भीड़ नजर आ रही है।"

बादशाह ने देखा कि भीड़ से एक मौलवी आगे बढ़े। अभिवादन करते हुये वह तेजी से बादशाह के निकट आये। बादशाह ने मुस्करा कर पूछा, "तालाब नहीं दिखाई दे रहा है?"

"इस मजार के पीछे है आलमपनाह।" मौलवी ने मार्ग-निर्देशन का भाव प्रकट करते हुये उत्तर दिया।

तालाब के निकट जाकर ध्यान से देख, बादशाह ने अपनी धारणा व्यक्त की, "यह तो बहुत गन्दा है। क्या कभी इसकी सफाई नहीं होती?"

"हुजूर के अलावा किसकी मजाल है जो इतने बड़े तालाब की सफाई करवा सके।"

"क्या मेरे पहले आने वाले सभी बादशाहों ने इसी हालत में नहाया है?"

"जी नहीं; मेरी याददाश्त में तो कोई ऐसा हुक्मरा हुआ नहीं जिसे औलाद न हो। यहाँ तो वही आता है जो औलाद हासिल होने से नाउम्मीद हो उठता है।"

"क्या यह यकीन है कि इसमें नहाने वाले की मुराद पूरी हो जाती है ?"

"हुजूर, दिन-पर-दिन वढ़ती, हर इतवार की भीड़ इस वात का खुद-ब-खुद सुवूत है। ऐसा एक भी किस्सा सुनने में नहीं आया जिसने अकीदे के साथ इसमें नहाया हो और उसे औलाद न हासिल हुई हो।"

"अरे ! एकाएक सारी भीड़ कहाँ गायव हो गई ?"

"सव हटा दी गई है। हुजूर को इसमें नहाना जो है। मैं भी यहाँ से हटा जाता हूँ। मगर ख्याल रखियेगा कि नहाते वक्त वदन पर एक भी कपड़ा नहीं होना चाहिए। मैं हुजूर के नहाने के वाद आ जाऊँगा।" मौलवी एक ओर को चल दिये।

वादशाह ने लालकुँअरि की ओर देखा। वह मुंह में दुपट्टा लगाये मुस्करा रही थीं। वादशाह के चेहरे पर भी मुस्कान विखर गई। लालकुँअरि ने मोहक भावभंगिमा धारण कर कहा, 'चलिये, उतारिये कपड़े। सोच क्या रहे हैं ?"

"सोच रहा हूँ वेगम कि औलाद के लिए माँ-वाप को क्या-क्या नहीं करना पड़ता है।"

"औलाद के लिए क्यों, इन्सान जो कुछ भी करता है, अपनी खुशी के लिए करता है। औलाद हासिल होने में भी एक खुशी होती है, उसी के पाने के लिए वह सव करने के लिए तैयार हो जाता है जो किसी सजा से भी ज्यादा तकलीफदेह होता है।" वादशाह को सीढ़ियाँ उतरते देख वेगम ने सावधान किया, "सम्हाल कर उतारिएगा, फिसलन काफी मालूम दे रही है।"

"तुम तो साथ हो वेगम। एक साथ फिसलने में भी मजा आयेगा।"

"आप तैरना जानते हैं। आपको मजा आ सकता है, मगर मैं तो डूवे विना नहीं रह सकती।"

"तो फिर, आओ, आज तैरना सिखा हूँ।"

"फिर कभी सिखाइएगा। इसमें सिर्फ डुवकी लगाई जाती है, तैरा नहीं जाता।"

"फिर, यह फिसलने के लिए जगह क्यों वनी है ? जरूर लड़के इसमें

फिसल-फिसल कर नहाते होंगे। मैं भी जरा एक बार फिसलकर देखूँ।" बादशाह बेगम को घुटनों तक पानी में छोड़ बाहर निकल आये और निर्वस्त्र कुछ अन्तर पर फिसलने वाली जगह पर गये और फिसलते हुए गहरे पानी में कूद पड़े। बेगम पहले तो सहमीं, पर तैर कर निकट आते हुए बादशाह को देख वह हँसे बिना न रह सकीं।

"बड़ा लुत्फ आया, बेगम। एक बार तुम भी फिसल कर देखो।"

"न बाबा! आप ही फिसलिए। मुझे तो यहाँ भी डर लग रहा है।"

"अच्छा, एक बार और फिसल लूँ।" पानी से बाहर निकल बादशाह पुनः उसी स्थान पर जाकर फिसलते हुए पानी में जा कूदे। तैर कर किनारे आये। बेगम ने पानी से बाहर निकल वस्त्र पहनने प्रारम्भ कर दिये थे। बादशाह ने साश्चर्य प्रश्न किया, "अरे! बस? नहा चुकीं?"

"जी हाँ, आप भी कपड़े पहनिये। मौलवी साहब आते ही होंगे।"

पानी से बाहर निकल देह को वस्त्र से पोंछते हुए बादशाह ने कहा, "बेगम! उसी दिन-सा आज भी मजा आ गया। गाड़ीखाने में सोने से इस तालाब में नहाने में लुत्फ नहीं आया।"

बादशाह ने वस्त्र पहन पगड़ी सर पर रखी ही थी कि मौलवी साहब हाँफते हुए एक ओर से आते दिखाई दिये। निकट आने पर उन्होंने अभिवादन किया, "किसी किस्म की तकलीफ तो नहीं हुई हुजूर को?"

"नहीं मौलवी साहब, बड़ा मजा आया। पानी उतना गदा नहीं है, जितना नज़र आता है।"

"जी हाँ।" हाथ में पकड़े फूल आगे बढ़ा मौलवी ने कहा, "लीजिये और मजार पर चढ़ाइए चलकर।"

बादशाह ने दोनों हाथों में और बेगम ने दुपट्टे में फूल ले लिए। मौलवी के निर्देशानुसार दोनों ने मजार पर फूल चढ़ाते हुए मन-ही-मन अपनी अभिलाषा व्यक्त की। मौलवी ने आश्वासन व्यक्त किया, "पीर साहब आपकी मुराद जरूर पूरी करेंगे।"

बादशाह ने गले से हार उतार मौलवी की ओर बढ़ा दिया। मौलवी ने हार थाम सिर झुका दिया। इस बीच काफी भीड़ एकत्र हो गई थी। कर्मचारी थाल लिए कुछ अन्तर पर खड़े थे। लालकुँअरि के संकेत पर कर्मचारी निकट आये। लालकुँअरि ने थालों में से असर्फियाँ लुटानी प्रारम्भ कीं। लूटने वाले लूट रहे थे, पृथ्वी पर गिरी हुई असर्फियाँ बीन रहे थे, एक दूसरे को धक्का दे रहे थे, गिर रहे थे, गिर-गिरकर उठ रहे थे। लालकुँअरि असर्फियाँ बिखेरते गाड़ी की ओर बढ़ रही थीं। अंतिम थाल को बादशाह ने एक साथ हवा में उछाल दिया। असर्फियों की एक साथ वर्षा हो गई।

दोनों एक साथ गाड़ी में जा बैठे। गाड़ी चल दी। लालकुँअरि की दृष्टि मजार पर टिकी थी और तब तक वह एकटक निहारती रहीं जब तक कि मजार दृष्टि से ओझल नहीं हो गई।

O

हुसेनअली असाधारण योद्धा था। युद्ध उसकी प्रिय क्रीड़ा थी। युद्ध के अतिरिक्त समय काटना उसके लिये कठिन हो जाता था। वर्तमान शासक जहाँदार शाह के विरुद्ध फर्रुखसियर से आक्रमण में सहायता का आमन्त्रण पा वह उमंगित हो उठा। जोश से भुजायें फड़क उठीं। वह अपने बड़े भाई से प्रस्तुत रहने का आश्वासन पा सीधे फर्रुखसियर के सामने आ खड़ा हुआ। फर्रुखसियर के ओठों से मदिरापात्र लगा हुआ था। पात्र बिना हटाये ही फर्रुखसियर ने प्रश्न किया, "अभी तक आप गये नहीं ?"

"लौट कर आ रहा हूँ।" हुसेनअली ने स्थान ग्रहण करते हुए कहा।

"कहाँ से ?"

"इलाहाबाद से।"

"नामुमकिन ! इतनी जल्दी इलाहाबाद जाकर कोई नहीं वापस आ सकता।"

"मगर, हुसैन अली वक्त की रफ्तार से तेज चलता है। भाई साहब हम लोगों को तैयार मिलेंगे। सिपाहियों की भर्ती का मुआयना तो आपने किया ही होगा ?"

"उसकी क्या जरूरत। जिन्हें भर्ती का काम आप सौंप गये थे, वे कर रहे होंगे।"

"फिर भी आपको मुआयना तो कर ही लेना चाहिए था।"

"आपने ऐशो आराम का इतना इन्तजाम कर रखा है कि किले से बाहर पैर रखने की फुरसत ही नहीं मिली।"

"खैर कोई बात नहीं। मैं अभी देखता हूँ जाकर।" हुसैन अली ने उठते हुए कहा।

"आपके भाई साहब के पास भी तो फौज होगी ?" फर्रुखसियर ने प्रश्न किया।

"हाँ, मगर शाही ताकत को शिकस्त देने के लिए नाकाफी होगी।"

"हम तीनों की फौज मिलकर भी शाही ताकत का मुकाबिला न कर सकेगी ?"

"हमें शाही ताकत का मुकाबिला नहीं करना है, बल्कि उसे शिकस्त देना है। फतहयाबी हासिल करने के लिए जितनी भी ताकत काफी नहीं कही जा सकती।"

"सिपाहियों की भर्ती में तो काफी वक्त जाया होगा ?"

"आप बेफिक्र रहिए। हुसैन अली जिस काम को हाथ में लेता है, उसके पास नाकामयाबी कभी फटकने नहीं पाती। और फिर जंग तो मेरा महबूब मशगला है।"

"फिर भी, जितनी जल्दी हो, सके बेहतर है। पन्द्रह-बीस रोज में तो ये कूच कर ही देंगे ?"

"पन्द्रह-बीस रोज में ! आप भी क्या फरमा रहे हैं ? इतने दिनों में तो आ
दिल्ली की गद्दी पर होंगे ।"

"वाकई ?" फर्रुखसियर उचक पड़े ।

"शायद आपको हुसेन की तलवार पर यकीन नहीं ।" तलवार म्यान
बाहर निकाल हुसेन अली ने उसे दृष्टि के सम्मुख कर सम्बोधित किया, "सु
रही है ? तुझे बीस दिनों के अन्दर दिल्ली की बादशाहत हासिल करनी है
इस इम्तहान में कामयाब होने पर ही तुझे म्यान में आराम हासिल हो सकेगी
चल, वक्त जाया होने पर तू शिकायत करेगी ।" हुसेन अली नंगी तलवार लि
कक्ष से बाहर हो गया ।

फर्रुखसियर ने गावतकिए का पुनः सहारा लेते हुये कहा, "अजीबो गरी
शख्स है । तलवार के अलावा इसे किसी चीज का शौक ही नहीं ।"

तीन दिन के अन्दर हुसेन अली ने काफी सिपाही भर्ती कर लिये । उ
प्रशिक्षित करने में दिन-रात एक कर दिया गया । बिहार में युद्ध का वातावर
छा गया । जिधर दृष्टि जाती प्रशिक्षण प्राप्त करते सैनिक दृष्टिगोचर हो
चमचमाते अस्त्र-शस्त्रों से दृष्टि चकाचौंध हो उठती ; धरती विदीर्ण करते अ
गतिमान नजर आते ।

चौथे दिन प्रातः हुसेन अली ने कक्ष में प्रविष्ठ हो कहा, "चलिए, फौ
का मुआयना कर लीजिये चलकर ।"

"अभी तो सूरज भी नहीं निकल पाया है । सिपाहियों को तैयार होने
लिए वक्त तो दीजिए ।"

"पूरी फौज तैयार खड़ी है । सिर्फ आपकी देर है ।"

"मतलब ?"

"इसी वक्त कूंच करना है ।"

"इन तीन दिनों में क्या तैयारी हो सकी होगी ?"

"हाथ कंगन को आरसी क्या । खुद देख लीजिए न चलकर ।"

"चलो भाई ।" फर्रुखसियर ने उठते हुए कहा, "चलना ही पड़ेगा ।"

सम्पूर्ण फौज को भलीभाँति देखने के पश्चात् फर्रुखसियर ने आश्चर्य प्र
किया, "वाकई कमाल कर दिखाया। इतने कम वक्त में इतनी बड़ी तैयारी
भाई, इन्सान के बस की बात तो है नहीं।"

अपनी प्रशंसा सुनकर हुसेनअली फूला न समाया। जोश में आकर उसने कहा
"अभी आपने क्या कमाल देखा है। मेरा कमाल तो मैदानेजंग में देखिएगा।"

"उसका अन्दाज तो मैं इस फौज की तैयारी को देखकर ही लगा रहा हूँ
वाकई, मुझे पूरी उम्मीद हो गई है कि हमें फतेह जरूर हासिल होगी।"

"अब भी क्या शक है आपको ?"

"नहीं, अब शक की कोई गुन्जाइश नहीं है। मेरा दिल कह रहा है कि
अब जरूर अपने वालिद का बदला लूँगा और दिल्ली के तख्त को हासिल
करूँगा। और तुम ... ... मेरे वजीरेआजम बनोगे।"

"यह आप क्या फरमा रहे हैं ? अपने बड़े भाई के रहते मैं भला कैसे वजी
आजम हो सकता हूँ ?"

"क्यों नहीं। उन्होंने किया ही क्या है जो उन्हें वजीरेआजम बनाया जाय ?"

"आपको नहीं मालूम, वह इलाहाबाद में एक बड़ी फौज तैयार कर रहे हैं।"

"तुम्हारी ही तरह ?"

"मेरी तरह नहीं, मुझसे भी शानदार।"

"तब तो दोनों भाई काबिलेतारीफ हो। शायद तुम दोनों भाई किसी काम
को बिना एक दूसरे की सलाह किये, नहीं करते हो ?"

"जी हाँ, हम लोग, बिना एक दूसरे की सलाह किये, कोई काम नहीं [illegible]

"यह तो बहुत अच्छा है। भाइयों में ऐसी ही मोहब्बत होनी [illegible]
अफसोस है कि हमारे मुगल खानदान में ऐसा कभी नहीं हुआ [illegible]
ने दूसरे भाई की मदद नहीं की, वरना आज मुगल [illegible]
कमजोर न हुई होती।"

"आप इसकी परवाह क्यों करते हैं। [illegible]

"मुझे आपसे यही उम्मीद है। [illegible]

सगा समझना चाहिये। इस वक्त आपने जो काम दिखाया है, वह क्या कोई सगा भाई करता ?"

"यह आप क्या कह रहे हैं ? हम तो आप के गुलाम हैं। आपका दिया खाते हैं। आप के लिए तो हमारी जान तक हाजिर है।"

"वफादारी इसी को कहते हैं।"

"फिर, कूँच का डंका वजवाया जाये ?"

"मुझे कोई कमी तो नजर आती नहीं। मेरी समझ में वक्त जाया करने से कोई फायदा भी नहीं। आप वजवाइए कूँच का डंका।"

"जो हुक्म।" हुसेन अली ने तलवार उठा डंका वजाने का संकेत किया।

डंका वजते ही सेना गतिमान हो उठी। हुसेन अली का अश्व सबसे आगे फर्रुखसियर के अश्व की वाईं ओर था।

O

जहाँदारशाह के साथ-साथ खाँ साहव का भी भाग्योदय हुआ था। शक्ति-सम्पत्ति की उन्हें कोई कमी न थी। उनके महल में शराव का दरिया वहा करत था। एक-से-एक वढ़-चढ़कर सुन्दरियाँ उनकी अंकशायिनी वनने की प्रतीक्ष किया करती थीं, परन्तु लालकुँअरि पर उनकी एक भी चाल न चल पा रहं थी। उनका हर दाँव खाली जा रहा था। जुहरा की वातों पर उन्हें विश्वार तो होता, परन्तु इच्छापूर्ति न होते देख वह झुँझला उठते, जुहरा के सारे आश्वा सन पर पानी फिर जाता। उस दिन उनकी झुँझलाहट चरम सीमा का स्पः कर रही थी, "कहाँ है जुहरा ? फौरन पेश करो लाकर।"

खाँ साहव का आदेश पाते ही अनेक कर्मचारी एक साथ उड़ चले। प्रतीक्ष करना उनके स्वभाव के विरुद्ध था। मदिरा-पान का अभ्यास इस सीमा त

बढ़ गया था कि वर्तमान अवस्था को विस्मरण करने में तनिक भी वह समर्थ सिद्ध नहीं हो पा रही थी। दो-चार पेग चढ़ाने के उपरान्त खाँ साहब का धर्य्य पुनः फूटा, "शाही महल में होगी। जिस किसी की भी खिदमत में हो, पकड़ कर ले आओ।"

"पकड़ कर लाने की जरूरत नहीं, कनीज खुद-ब-खुद हुजूर की खिदमत में आदाब बजा लाती है।" दृष्टि उठा, जुहरा को अभिवादन की मुद्रा में देख खाँ साहब ने तीव्र स्वर में प्रश्न किया, "आज दिन भर के बाद सूरत दिखाई दे रही है। कहाँ रहीं ?"

जुहरा ने खाँ साहब को देखकर तत्क्षण समझ लिया कि उनका पारा गरम है। आगे बढ़कर पास बैठते हुये जुहरा ने कहा, "बेगम साहबा के पास।"

"यह सुनते-सुनते तो मैं तंग आ गया हूँ। आज कल तुम दिन-दिनभर गायब रहती हो। आखिरकार, वहाँ जाने से कुछ मसलब तो हल होता दिखाई नहीं देता।"

"ऐसा आप कैसे कह रहे हैं ? इधर वह काफी गमगीन रहती हैं। उनका दिल बहलाना निहायत जरूरी है।"

"कभी गमगीन हैं, कभी बीमार हैं, कभी नाराज हैं और कभी खुश हैं, यह सुनते-सुनते मैं ऊब गया हूँ। कभी इन बहानों का खात्मा होगा या नहीं ?"

"तो क्या हुजूर इन्हें बहाने समझते हैं ?"

मुझे तो बहाने के अलावा और कुछ नहीं मालूम पड़ते। मैं इतने दिनों से बेवकूफ बन रहा हूँ। अब और नहीं बन सकता। मुझे ताज्जुब हो रहा है कि जानबूझ कर मैं क्यों बेवकूफ बन रहा हूँ।"

"यह हुजूर का वहम है। कोई भी जान-बूझकर बेवकूफ नहीं बनना चाहता और फिर आप······।"

"खैर, अब मैं तुम्हारी इन बातों में और ज्यादा नहीं आ सकता। आज मैं आखिरी फैसला करना चाहता हूँ।"

"हुजूर काफी खफा मालूम होते हैं, जरा सुनाने का तो मौका दिया होता

कि आज क्या करके आई हूँ ।"

"जो रोज करके आती हो वही आज भी करके आई होगी ।"

"फिर भी, पूछिये तो कि मैंने आज आपके लिये क्या किया है ।"

"अच्छा सुनाओ ।" जरा रुक कर खाँ साहब ने कहा ।

"एक वात के लिये वेगम साहवा को तैयार कर आई हूँ ।"

"किस वात के लिये ?"

"अगर उसमें पूरी कामयावी मिल गई तो फिर वह आपके कब्जे में होंगी ।"

"मगर, यह तो सुनूँ कि वात क्या है ?" खाँ साहव ने झुँझलाकर कहा ।

"जशन मनाया जायगा ।"

"कहाँ ?"

"आपके यहाँ ।"

"किसलिये ?"

"यह तो अभी तक मैं नहीं सोच पाई हूँ । कुछ भी कह कर जशन मनाया जा सकता है ।"

"मगर उस जशन से वेगम साहवा का क्या ताल्लुक होगा ?"

"वह उसमें शरीक होंगी ।"

"तो उसमें शरीक होने से वह मेरे कब्जे में आ जायेंगी ?"

"जशन रात में मनाया जायगा । वह अकेली आयेंगी······।"

"नामुमकिन, वह कभी अकेली कहीं नहीं जा सकतीं ।"

"जो दूसरों के लिये नामुमकिन है वह मेरे लिये उनकी वावत मुमकिन है ।"

"अच्छा, फिर क्या होगा ?"

"थोड़ी रात गुजर जाने पर उन्हें खूब शराव पिलाऊँगी । जव वह काफी नशे में होंगी तव कमरे में वह होंगी और आप होंगे ।"

"लेकिन, सुवह क्या होगा जव उनका नशा उतरेगा ?"

"उन्हें होश ही कहाँ रहेगा कि क्या हुआ है ।"

"मगर मैं उन्हें एक रात के लिये अपने कब्जे में थोड़े ही चाहता हूँ ।"

"एक बार तो आने दीजिये कब्जे में। फिर धीरे-धीरे मैं सब ठीक कर दूँगी।"

"तरकीब तो कुछ-कुछ ठीक मालूम देती है, मगर खतरे से खाली नहीं।"

"इतने बड़े काम में कुछ तो खतरा होता ही है। अगर खतरे से आप इतना डरते हैं तो फिर बेगमसाहबा का ख्याल ही छोड़ दीजिये।"

"मैं अपने लिए नहीं तुम्हारे लिए खतरा सोचता हूँ, अगर उनकी निगाह पलट गई तो फिर अपनी खैर न समझो। अभी कुछ दिन पहले एक ऐसा वाकिया हुआ है जिसे जो सुनता है वही दाँतों तले उँगुली दबा लेता है।"

"क्या हुआ था ?"

"बेगमसाहबा ने, यह देखने के लिए कि नाव किस तरह डूबती है, आदमियों से भरी एक नाव डुबवा दी थी।"

"यह तो वाकई में ताज्जुब करने वाली बात है। कोई और ऐसी भी हो सकती है, मैं तो सोच भी नहीं सकती।"

"उनके लिए सभी कुछ सोचा जा सकता है। कोई नही जान पाता कि वह किस वक्त क्या करने वाली हैं। यहाँ तक कि बादशाह सलामत भी नही जान पाते कि वह उन्हे कहाँ लिए जा रही हैं और उनसे क्या करवाना चाहती हैं।"

"मगर, मुझे तो वह निहायत सीधी मालूम होती हैं। मेरे साथ उन्होंने आज तक कभी ऐसा सुलूक नहीं किया जिसकी बाबत मुझसे दो-चार दिन पहिले बात न की हो।"

"यह तुम्हारी खुशकिस्मती है कि वह तुम्हारे ऊपर इतना यकीन करती हैं, वरना वह अपनी बात किसी पर भी जाहिर नहीं करती।"

"तभी तो कहती हूँ कि जबान भनाने भर की देर है। बस फिर···।"

"इसी तरह मेरे कब्जे में होंगी।" जुहरा को पकड़ कर अपने बाहुपाश में करते हुये खाँ साहब ने कहा। उनके मुँह से ये शब्द निकल ही पाये थे कि किसी ने द्वार खटखटाया। खट-खट ने उनका ध्यान आकर्षित किया। जब अन्दर से कोई उत्तर न मिला तो पुनः खट-खट की ध्वनि आई। इस बार खाँ

साहब को बोलना ही पड़ा, "कौन है ? अन्दर चले आओ।"

आगन्तुक ने अन्दर प्रवेश किया। खाँ साहब ने उसे देखकर पूछा, "कहो शेरसिंह इस वक्त कैसे ?"

"हुजूर, बड़ा गजब हो गया है।"

"क्या हो गया ?"

"अभी-अभी खबर मिली है कि शहन्शाह जहानशाह का शाहजादा फर्रुख-सियर दिल्ली की तरफ बढ़ता चला आ रहा है।"

"साथ में फौज भी है ?"

"जी हाँ, अच्छी खासी फौज है। और यह भी सुनने में आया है कि उनके साथ सैयद भाई भी हैं।"

"हूँ ! मालूम होता है कि गेहूँ के साथ घुन भी पिसना चाहते हैं। मैंने सोचा था कि जो लोग आराम की जिन्दगी बसर कर रहे हैं, उन्हें रकार में क्यों परेशान किया जाय, मगर अब ऐसा मालूम पड़ता है कि दिन खराब आये हैं।"

"जी हाँ, मरते वक्त चीटी के पैर जम आते हैं।"

"मेरा भी यही ख्याल है, मगर, मैंने कभी सोचा तक नहीं था कि फर्रुख-सियर भी आस्तीन का साँप साबित हो सकता है, वरना जिस वक्त सभी लोगों का सफाया कराया गया था, उसी वक्त उसे भी मौत के घाट उतार दिया गया होता।"

"खैर, अब भी कुछ नहीं बिगड़ा है। जल्दी से कुछ इन्तजाम कर दीजिए।"

"मैं भी यही सोच रहा हूँ।" कुछ रुककर, "फर्रुखसियर को हमले के लिए तैयार देखकर मुझे एक खतरा और नजर आ रहा है।"

"वह क्या है ?"

"अजीजुद्दीन।"

"यह अजीजुद्दीन कौन है ?"

"कमाल कर दिया तुमने। अजीजुद्दीन को नहीं जानते हो ?"

"नाम तो सुना है, मगर कुछ ख्याल नहीं आ रहा है।"

"बादशाह सलामत का बड़ा शाहजादा।"

"जी, मगर वह तो कैदखाने में पड़ा है?"

"हाँ, है तो कैदखाने में ही, मगर शाहजादों के लिए कैदखाना कोई बड़ी चीज नहीं। कैदखाना उनके लिए आजाद रहने से बेहतर रहता है। उसके अन्दर उन्हें अपनी जिन्दगी का खतरा नहीं रहता है।"

"कहिये तो इस खतरे को दूर करने का ऐसा रास्ता बताऊँ कि साँप भी मर जाय और लाठी भी न टूटे।"

"कहो, कहो, मैं तो हर मामले में तुम्हारी सलाह लिया करता हूँ।"

"फिर, फर्रुखसियर को रोकने के लिए अजीमुद्दीन को ही भेज दीजिये।"

"खूब, कमाल है! वाकई, खुदा ने तुम्हें आला दिमाग दिया है।"

"आप भी हुजूर गुलाम को शरमिन्दा कर रहे हैं। आप ही का तो शागिर्द हूँ।"

"शागिर्द आगे निकल गया है।"

"ऐसी बात नहीं है, हुजूर। आजकल मैं देखता हूँ कि आपको इधर गौर फरमाने की फुरसत ही नहीं मिलती है।"

"तुम्हारा ख्याल दुरुस्त है। इधर कुछ दिनों से मैं सियासी मामलों पर गौर नहीं कर पा रहा हूँ।" खाँ साहब ने मुस्कराते हुए कहा।

"अच्छा, फिर इजाजत दीजिए। मैंने बेवक्त आकर.........।"

"नहीं नहीं, ऐसी कोई बात नहीं है। यह तो अहम खबर थी। इससे मुझ वाकिफ होना निहायत जरूरी था।"

"यह तो हुजूर की मेहरबानी की निगाह है वरना मेरी जगह और कोई होता तो.........।"

"अच्छा, अच्छा, जाओ। एक फौज की टुकड़ी तैयार करो। मैं अभी अजीमुद्दीन को कैदखाने से निकालने के लिए जाता हूँ।"

"जो हुक्म।" कहकर शेरसिंह ने सिर झुका कर अभिवादन किया और कमरे के बाहर हो गया।

O

अजीजुद्दीन कैदखाने से वाहर निकाला गया। उसकी वढ़ी दाढ़ी साफ गई। नहलाया-धुलाया गया। साफ वस्त्र पहनने के वाद अपनी कमर में लवार वँधते देख अजीजुद्दीन ने पूछा, "यह किस लिए ?"

"आपको शाही फौज की रहनुमाई करनी है।"

"दुश्मन कौन है ?"

"फर्रुखसियर।"

"फर्रुखसियर ! यह किस मुल्क का वादशाह है ?"

"आप इन्हें नहीं पहचानते ? फर्रुखसियर आपके भाई जान हैं।"

"भाई जान और वह भी मुगल खानदान में !" जोर से हँसते हुए, "शायद तुम्हें मालूम नहीं कि मुगल खानदान में शाहजादे मैदाने जंग के अलावा कभी एक दूसरे से मुलाकात नहीं करते।"

"वह वक्त भी आ गया है, हुजूर।" सिर पर पगड़ी वाँधते हुए कर्मचारी वोला, "खूब डटकर मुलाकात होगी।"

"क्या दुश्मन की फौज का अन्दाजा लग गया है ?"

"जी हाँ, फर्रुखसियर के साथ सैय्यद भाई भी हैं। सुना है—छोटे भाई हुसेन अली को तलवार चलाने में काफी महारत हासिल है। मगर, हमारे सरकार को सामने देखते ही दुम दवाकर भागता नजर आयेगा।"

"माँ वदौलत भागते दुश्मन पर कभी हाथ नहीं उठाते। मेरा ख्याल है कि दुश्मन के पास खवर भेजवा दी जाय कि मैं मैदाने जंग में तशरीफ ला रहा हूँ। वह खुद-व-खुद भागता नजर आयेगा। मैदाने जंग तक आने-जाने की जहमत उठाने से वच जाऊँगा।"

"मगर, खाँ साहब के हुक्म के मुताबिक तो.........।"

"हाँ, हाँ, वह तो है ही। खाँ साहब का जो हुक्म है, वही होना चाहिए।" बीच में ही उसके मन में समाया खाँ साहब का आतंक प्रकट हो गया।

"फिर, चलिए हुजूर; खाँ साहब से आखिरी हुक्म हासिल कर लिया जाय।"

तैयारी में बड़ा वक्त जाया किया।" खाँ साहब ने तत्क्षण कक्ष में प्रविष्ठ हो सुसज्जित शाहजादे को आपाद मस्तक देखते हुए कहा, "तैयार फौज कूँच के लिए न जाने कब से बेताब हो रही है।" शाहजादे की आँखों में दृष्टि गड़ा "वाह ! शाहजादे साहब ने क्या बारीक सुरमा लगाया है। मैदाने जंग में इसकी बारीकी जरूर रंग लायेगी।"

"हुजूर, गुस्ताखी माफ हो, हमारे सरकार हर चीज का ख्याल रखते हैं। तैयारी में कहीं कोई कसर नहीं रहनी चाहिए।"

"अच्छा ! अच्छा !! हो गई तैयारी। शाहजादे साहब को सीधे हौदे में बैठालो जाकर।"

"बस हुजूर, चन्द लमहों की बात और है। सिर्फ पान आजाने दीजिए। अभी............।"

"पान तो ये रखे हैं।" पान की ओर संकेत कर खाँ साहब बीच में ही बोल उठे।

"हुजूर, गुस्ताखी माफ हो। हमारे सरकार के खास पानों की बात ही कुछ और है। उन्हें खाने के बाद ओठों पर जो रंग चढ़ता है, बस देखते ही बनता है, हुजूर। लीजिए वह आ भी गए।"

पान मुँह में रखने के पश्चात् खाँ साहब की ओर भी दो पान बढ़ा शाहजादे ने कहा, "आप भी शौक फरमाइए।"

"ये पान आपको ही मुबारक हों। दूसरा इन्हें खाते ही चक्कर खाकर गिरे बिना न रहेगा।"

"वाकई, हुजूर एक दिन मैंने एक पान मुँह में रखा ही था कि वह चक्कर

या, हुजूर, कि दिन में तारे नजर आ गए।"

"अब किस बात की देर है ?" खाँ साहब ने तत्परता व्यक्त की।

"हमारे सरकार और देर ! नामुमकिन। तशरीफ ले चलें।" मुँहलगे मंचारी ने प्रस्थान-भाव व्यक्त किया।

खाँ साहब अजीजुद्दीन को साथ ले प्रस्थानार्थ प्रस्तुत खड़ी फौज के निकट हुँचे। सवारी के लिए हाथी पहिले से ही सजा खड़ा था। अजीजुद्दीन के हौदे वैठते ही कूँच का डंका बज गया। सम्पूर्ण फौज गतिमान हो उठी।

O

अजीजुद्दीन के नेतृत्व में शाही सेना की टुकड़ी को रवाना कर खाँ साहब ने च की साँस ली और पूर्ववत् प्रवहमान जीवन-धारा में अवगाह न करने गे। हाँ, जुहरा अन्य दिनों की अपेक्षा अधिक सतर्क और व्यस्त दिखाई दे ही थी। दिन भर में वह खाँ साहब की दृष्टि के सामने से अनेक बार आती-जाती, परन्तु इतनी क्षिप्रगति से कि खाँ साहब उसे टोकते-टोकते रह जाते, और यदि उनका कोई प्रश्न जुहरा के कर्ण-कुहरों से जा टकराता तो जुहरा 'अभी हाजिर हुई' कहती हुई व्यस्तता का भाव प्रदर्शितकर गायब हो जाती। तीन दिन तक तो खाँ साहब धैर्य धारण किए जुहरा की गतिविधि का निरीक्षण करते रहे, चौथे दिन उनके धैर्य का बाँध टूट गया। जुहरा के सामने से गुजरते ही वह भड़क उठे, "जुहरा !"

जुहरा के कदम जहाँ-के-तहाँ रुक गए। साँस भीतर-की-भीतर, बाहर-की-बाहर।

"इधर आओ।" खाँ साहब का स्वर कठोर था।

जुहरा के पैर बोझ बन चुके थे। उन्हें आगे बढ़ाना कठिन हो रहा था,

फिर भी, कुछ अन्तर पर जाकर वह खड़ी हो गई। खाँ साहब ने उसके चेहरे पर दृष्टि गड़ा आदेश दिया, "जुहरा मेरी ओर देखो।"

जुहरा ने सम्पूर्ण साहस बटोर दृष्टि उठाई। दृष्टि मिलते ही खाँ साहब ने प्रश्न किया, "जश्न का एलान अभी तक क्यों नहीं किया गया?"

"जश्न की माकूल तैयारियाँ अभी नहीं हो पाई हैं।"

"क्या कसर रह गई है?"

"बेगम साहबा की मनपसंद कुछ खास चीजें मँगवाई गई हैं, उन्हीं के आने की देर है।"

"जुहरा! कान खोल कर सुन लो। इन्तजार के लिये ज्यादा वक्त मेरे पास नहीं है। मैं तुम्हें जश्न के एलान के लिए दो दिन की मुहलत और देता हूँ। इस दरम्यान बाकी तैयारी पूरी हो जानी चाहिये।"

"हुजूर ने तो जरूरत से ज्यादा वक्त देने की इनायत फरमाई है। मुमकिन है, वक्त की मियाद से पहले ही जश्न का एलान कर दिया जाय। सिर्फ बाहर गये हुये लोगों के वापस आने का इन्तजार है।" जुहरा ने अपने स्वर को अत्यधिक संगीतमय बनाते हुये आगे कहा, "अगर इजाजत हो तो जरा सजावट पर एक नजर डाल लूँ जाकर?"

"जाओ, मगर भूलना मत कि वक्त को गुजरते देर नहीं लगती।"

"हुजूर का हुक्म सिर-आँखों पर।" सिर झुकाकर फर्शी सलाम करती हुई जुहरा कक्षद्वार को पार कर बाहर हो गई। उसकी जान-में-जान आई। दीर्घ निःश्वास से वह कुछ क्षणों के लिए गतिहीन-सी हो गई। इधर-उधर दृष्टि दौड़ाई। महल के कर्मचारी इधर-से-उधर आ-जा रहे थे। सभी अपने-अपने कार्यों में व्यस्त थे। प्रत्येक अनुशासनबद्ध दृष्टिगत हो रहा था। जुहरा की ओर किसी ने भी दृष्टि न उठाई। जुहरा किंकर्तव्य विमूढ़-सी हो रही थी। उसका मस्तिष्क कुछ भी न सोच पा रहा था। इस अवस्था में वह कितनी देर खड़ी रही, उसे स्वयं इसका भान न हो पाया। उसकी वह मोहविष्ठावस्था तब भंग हुई जब उसके कर्ण-कुहरों में सुपरिचित स्वर ने प्रवेश किया, "सरकार

इतनी देर से खामोश खड़ी क्या सोच रही हैं ?"

"ओह गुलशन ! चौंक कर जुहरा अपने को संयत करती हुई बोली, "आ गई तू ? एकाएक कहाँ गायब हो गई थी ?"

"अरे ! इतनी जल्दी आप भूल गईं ? आपही ने तो शाही महल तक भेजा था ।"

"हाँ-हाँ, मगर किसलिये भेजा था तुझे ?" स्मृति पर बल डाल जुहरा ने जिज्ञासा प्रकट की, "खैर कोई बात नहीं । हाँ, बेगम साहबा तो याद नहीं फरमा रही थीं ?"

"आज आप को हो क्या गया है ? तबियत तो ठीक है आपकी ?"

"हाँ-हाँ ।" इधर-उधर सशंकित दृष्टि से देख जुहरा ने गुलशन के हाथों को अपने दोनों में पकड़ व्यग्रस्वर में पूछा, "बोल, जल्दी बोल, मेरी तलाश तो नहीं करवा रही थीं ?"

"आप इस कदर बदहवास क्यों हो रही हैं ? खैरियत तो है ?"

"नहीं-नहीं, ऐसी बात नहीं है, गुलशन । दरअशल-दरअसल...... । खैर, जाने दे । तू यहाँ का ख्याल रखना । अगर कोई खास बात नजर आये तो मुझे फौरन इत्तला करना ।" अपने को गुलशन से दूर करते हुये जुहरा ने आदेश दुहराया, "किसी गफलत में मत पड़ जाना । मेरी एक-एक बात का ख्याल रखना । शायद मुझे............ ।" जुहरा कहते-कहते रुक गई, परन्तु पैर उसे तेजी से बाहर की ओर घसीटे लिये जा रहे थे ।

O

युद्धस्थल से आई सूचना से अवगत होते ही खाँ साहब बौखला उठे । उनसे बैठा न रहा गया । वह उठे और सीधे शाही महल की ओर चल दिये । शाही-

महल में प्रवेश कर वह बिना इधर-उधर देखे कक्ष विशेष की ओर तेजी से बढ़ते चले जा रहे थे कि बीच में ही बादशाह ने टोका, "खाँ साहब !"

बादशाह का सुपरिचित स्वर कानों में पड़ते ही खाँ साहब गतिहीन हो गये और व्यग्रता छिपा उन्होंने उनका अभिवादन किया और बोले, "हुजूर का ही दीदार हासिल करने जा रहा था।"

"खैरियत तो······?"

"जी हाँ, मैदाने जंग से अभी-अभी खबर मिली है कि शाहजादे साहब दुश्मनों से मिल गये।"

"अजीज दुश्मनों से मिल गया ?" बादशाह का स्वर अविश्वास भरा था।

"जी हाँ, बिना एक कतरा खून बहाये ही शाहजादे साहब ने अपने को दुश्मनों के हवाले कर दिया।"

"मगर, क्यों ? उसने ऐसा क्यों किया ?"

"उनका यह फैसला मेरी भी समझ में नहीं आ रहा है।"

"कहीं दुश्मन की कोई चाल तो नहीं है ?"

"जी नहीं, खबर लाने वाले पर कतई शक नहीं किया जा सकता।"

"खैर, आप खुद मैदानेजंग तक जाइए और दुश्मन को मार भगा असलियत से मुझे वाकिफ कराइये आकर।"

"जो हुक्म।" आज्ञा शिरोधार्य करने का भाव प्रदर्शित करते हुये खाँ साहब ने आगे कहा, "मुमकिन है, दुश्मन से टक्कर लेनी पड़े। किसी भी वक्त किसी किस्म की खबर हुजूर तक पहुँच सकती है। बेहतर होगा, हुजूर भी हर हालत का सामना करने के लिए तैयार रहें।"

"आज, खाँ साहब की जुबान से, यह नामुमकिन बात कैसे सुनने को मिल रही है ?"

"वक्त-वक्त की बात होती है, हुजूर। वक्त हर मुमकिन को नामुमकिन में और नामुमकिन को मुमकिन में बदलने की ताकत रखता है। हुजूर, सैयद भाइयोंकी ताकत से वाकिफ नहीं हैं। हुसैन अली की तलवार के सामने आज

तक कोई भी नहीं टिक सका है। फर्रुखसियर को तो मैं भुनगे के बराबर भी नहीं समझता हूँ, मगर सैयद भाइयों की मदद ने मुझे भी सब कुछ सोचने पर मजबूर कर दिया है।"

"जब आपकी यह हालत यहाँ है, तो अजीज की मैदानेजंग में क्या हुई होगी। ऐसे ताकतवर दुश्मन के सामने उसकी क्या हस्ती। हालात ने ही शायद उसे वैसा करने के लिए मजबूर कर दिया होगा।"

"फिर भी दुश्मन को आगे बढ़ने से तो रोका ही जा सकता था।"

"कहाँ तक आगे बढ़ आये हैं?"

"खबर मिली है कि आगरे तक उनकी फौजें बढ़ आई हैं।"

"और हम लोग हाथ-पर-हाथ धरे बैठे हैं!"

"किया भी क्या जा सकता है?"

"क्यों?"

"शाही फौज के जरिये उन्हें खदेड़ा नहीं जा सकता। शाही फौज में अब इतनी दम नहीं रही।"

"क्यों, क्या उनकी ताकत बहुत ज्यादा है?"

"जी नहीं, शाही फौज में सिपाहियों की तादात आधी से भी कम हो गई है।"

"मगर, क्यों?" बादशाह का स्वर झुंझलाहट भरा था।

"वक्त पर तनख्वाह न मिलने के सबब।"

"मगर, तनख्वाह सिपाहियों की क्यों नहीं दी गई?"

"शाही खजाना खाली है, हुजूर।"

"ताज्जुब है! शाही खजाना कैसे खाली हो गया?"

"गुस्ताखी माफ हो आमदनी के सारे जरिये तो हुजूर ने बन्द कर रखे हैं।"

"मतलब?"

"हुजूर के रहम दिल ने हिन्दुओं से वसूल किया जाने वाला जजिया कर

न्द करवा दिया है । हुजूर के हुक्म के मुताबिक किसानों पर लगान वसूली : वक्त, सख्ती नहीं की जाती है । जो आसानी से वसूल हो जाता है, उसी से कसी तरह सल्तनत की गाड़ी घसिट रही है।"

"तब तो गजब हो गया । वक्त कम है । नई फौज भी तैयार नहीं की जा सकती । ऐसी सूरत में होगा क्या—कुछ सोचा आपने ?"

"हुजूर, दिमाग परेशान है । कुछ समझ में नहीं आता कि बिना दौलत कैया क्या जा सकता है ।"

उपस्थित संकट का सामना करने में खाँ साहब को असमर्थ समझ बादशाह ने कुछ सोच कहा, "दौलत के सहारे कोई रास्ता निकल सकता है ?"

"क्यों नहीं, आज ही नई फौज की भरती शुरू की जा सकती है ।"

"फिर शाही महल में इस्तेमाल की जाने वाली सभी चीजों को फौरन नीलाम किया जाय । उससे जो दौलत हासिल हो, उससे जल्द-से-जल्द फौज तैयार कर दुश्मन को भगाने की भरसक कोशिश की जानी चाहिये ।"

खाँ साहब शान्त खड़े रहे । उन्हें विचाराधीन देख बादशाह ने आगे कहा, "अब कुछ भी सोचने-विचारने का वक्त नहीं, खाँ साहब । शराब के बरतनों तक को नीलाम करने में आगा-पीछा मत सोचियेगा ।"

खाँ साहब कुछ भी प्रतिक्रिया न प्रकट कर पा रहे थे । बादशाह उसी धुन में बोले चले जा रहे थे, "रियाया की हिफाजत के लिये अगर हुक्मरां को जान की बाजी भी लगानी पड़े, तो तैयार रहना चाहिये ।" खाँ साहब को पूर्ववत् मौन खड़ा देख बादशाह ने प्रोत्साहित करने की चेष्टा की, "वक्त बड़ा कीमती है, खाँ साहब । वक्त की आवाज सुनिये और उसके मुताबिक कदम उठाइये ।"

"मगर हुजूर, ······।"

"हुजूर···उजूर कुछ नहीं खाँ साहब । कमर कसिये और तैयार हो जाइये वह सब कुछ करने के लिए जिससे तख्ते हुकूमत की हिफाजत मुमकिन हो ।"

"मगर, हुजूर जरा तो सोचिये कि आपके बुजुर्गों द्वारा खरीदी गई बेश कीमती चीजों को नीलाम होते जब रियाया देखेगी तो क्या सोचेगी ?"

"रियाया कुछ नहीं सोचेगी खाँ साहब। बल्कि उन्हें खरीद कर खुश नजर आयेगी। और, यह देखकर मुझे भी कम खुशी न होगी कि जिन चीजों को आज तक शाही खानदान के लोग ही इस्तेमाल करते आ रहे हैं, वे आम रियाया के इस्तेमाल की चीजें बन सकी हैं।"

"जो हुक्म हुजूर।" खां साहब ने सिर झुका दिया।

"अभी शाही महल की एक-एक चीज को बाहर निकलवाइये और उनकी नीलामी की डुग्गी पिटवा दीजिए। देखिये, हुक्म की तामील फौरन की जानी चाहिए।"

"हुजूर का हुक्म सिर-आँखों पर।" खाँ साहब का स्वीकृतिसूचक स्वर सुनने के लिए बादशाह खड़े न रह सके और कक्ष में जा नीलम की सुराही से प्याले भर-भर खाली करने लगे। अन्तिम प्याला जब पूरा न भर सका तो बादशाह ने सुराही को उलटा कर दिया। शेष बूँदें एक-एक करके टपक रही थीं जिन्हें बादशाह बड़े गौर से देख रहे थे। इसी समय लालकुँअरि ने कक्ष में प्रवेश कर आश्चर्य व्यक्त किया, "अरे ! यह क्या कर रहे हैं आप ?"

"देख रहा हूँ, बेगम, कि आखिरी कतरों को सुराही से बिछुड़ने में कितना दर्द होता है।"

"मतलब ?"

"ये कतरे सुराही से हमेशा-हमेशा के लिये जुदा हो रहे हैं। अब शायद इस सुराही को, इन कतरों को, फिर कभी अपने दामन में भरने का नसीब हासिल हो"

"यह चहल कदमी क्यों बढ़ गई है ?" बाहर से आते शोर को लक्ष्य कर लालकुँअरि ने प्रश्न किया, "आज क्या बात है ? कुछ समझ में नहीं आ रहा है ? होने क्या जा रहा है ?"

"जो मुगल खानदान की तवारीख में कभी नहीं हुआ, बेगम।"

बादशाह से हाथ के सुराही छीन एक ओर फेंक लालकुंअरि ने जिज्ञासा व्यक्त की, "जरा साफ-साफ बताइए। यह सब क्या हो रहा है ?" बाहर

धारी भिन्न-भिन्न चीजों को ले जाते हुए दिखाई दिए ।

"नीलामी की तैयारी ।"

"नीलामी ! कैसी नीलामी ? नीलामी का शाही महल की चीजों से क्या वास्ता ?"

"इन्हें नीलाम किया जायेगा । रियाया खुशी-खुशी बोली बोलेगी । कुछ ही देर में ये सभी चीजें रियाया की कहलाने लगेंगी ।"

"मगर, ऐसा क्यों हो रहा है ? ऐसी भी क्या आफत.........।"

"बेगम, दुश्मन की शक्ल में आफत ही आई है । आफत को टालने के लिए फौजी ताकत चाहिए और फौजी ताकत के लिए चाहिए दौलत जो सिर्फ इन चीजों की नीलामी से ही हासिल की जा सकती है ।"

"काश ! एकबार मेरे पुराने दिन लौट आते ।"

"बेगम, गुजरा वक्त कभी वापस नहीं आता और फिर, बेगम, इन्सान की औकात ही क्या । महज वक्त के हाथों का एक खिलौना है । न मालूम वक्त की नजर कब बदल जाय और खूबसूरत-से-खूबसूरत और बेश कीमती-से-बेशकीमती खिलौना अपना वुजूद से हाथ धो बैठे ।" बेगम के उतरे चेहरे को लक्ष्यकर बादशाह ने आगे कहा, "मगर, बेगम, वक्त भी कभी एक-सा नहीं रहता । तब्दीली उसकी खासियत है । जो कल था वह आज नहीं है और जो आज नजर आ रहा है, वह कल किसी और शक्ल में होगा । इन्सान कब भिखारी से बादशाह और बादशाह से भिखारी बन जाता है । इस राज को समझ सकना इन्सान के वश की बात नहीं । मायूस होने की कोई जरूरत नहीं, बेगम । इस उतार-चढ़ाव में ही तो जिन्दगी का असली राज पिनहा है । आओ हमलोग भी नीलामी का नज्जारा देखें चलकर ।"

"आप तशरीफ ले जाइये । शायद मैं उसे देखना बरदाश्त न कर सकूँगी ।"

"अच्छा-अच्छा । तुम आराम करो जाकर । मैं भी थोड़ी ही देर में आता हूँ ।" कहते हुए बादशाह ने कक्ष के बाहर की ओर पैर बढ़ा दिए ।



विगत दो दिनों से लालकुँअरि की मानसिक उद्विग्नता उत्तरोत्तर बढ़ती जा रही थी। न कोई कला उनका मनोरंजन कर पा रही थी और न वह एक स्थान पर कुछ समय के लिये स्थिर ही रह पा रही थीं। पास से आते-जाते कभी सरोद के सितारों को छेड़ देतीं तो कभी सितार पर किसी गत विशेष को बजाने का आदेश देती, कभी शैय्या पर करवट बदलती दृष्टिगत होतीं तो कभी किले की सबसे ऊँची दीवाल पर चढ़ सुदूर निहारते दिखाई देतीं। महल की समस्त परिचारिकाएँ उन्हीं के चारों ओर मँडरा रही थीं। विस्फारित दृष्टि द्वारा परस्पर जिज्ञासा व्यक्त करती हुई इधर-से-उधर आ-जा रही थीं। सजगता सर्वत्रय श्रेष्ठ थी, परन्तु थी शब्द-हीन। दो दिनों से नीलामी का कार्य द्रुतगति से चल रहा था। पुरुष कर्मचारी वर्ग उसमें व्यस्त था। बादशाह को शत्रु के समाचारों से अवगत होने से अवकाश न था। थोड़ी-थोड़ी देर में वह खाँ साहब को बुलवा रहे थे। खाँ साहब कभी नीलामी से प्राप्त धनराशि से अवगत कराते तो कभी उससे भर्ती किए गए सैनिकों की अपर्याप्त संख्या पर असंतोष व्यक्त करते। सैन्याधिकारियों की उपस्थिति भी सम्राट के सम्मुख कम न थी। कभी-कभी एक साथ अनेक सैन्याधिकारी आ उपस्थित होते थे। बादशाह प्रश्नों की बौछार करने लग जाते। संतोषजनक उत्तर न पाने पर वह झुँझला भी उठते और उनके उल्टे-सीधे आदेशों को शिरोधार्य कर सैन्याधिकारी वहाँ से परस्पर विचार-विनिमय करते चले जाते।

लालकुँअरि की मनःस्थिति से अवगत होने का अवकाश ही बादशाह के पास न था। इस बीच दो-चार बार लालकुँअरि ने बादशाह से मिलने की चेष्टा भी की, परन्तु बादशाह की मनःस्थिति बिल्कुल प्रतिकूल थी। लालकुँअरि के

इसी बात में उन्होंने कोई रुचि प्रदर्शित नहीं की। लालकुँअरि की [illegible] सहानुभूति की सीमा और भी सोमित हो गई। उनकी [illegible] तीव्र हो उठी थी। सुगींद छाया की भाँति उनके साथ [illegible] हुए थे। [illegible] मुड़ती सुगींद पर उनकी दृष्टि पड़ जाती। किले के [illegible] रते हुये लालकुँअरि ने सहसा ठिठककर क्रोध स्वर में [illegible], "[illegible] के पीछे हाथ धोकर पड़ी है? कितनी बार मना कर चुकी हूँ [illegible] और अपना काम देख।"

"पर, परवरदिगार ने कनीज को काम ही यही सौंपा है।"

"क्या?"

"आपको देखने का।"

"उन्होंने मुझे देखने का काम सौंप रखा है?"

"जी हाँ।"

"मगर क्यों?"

"कनीज को इसका कोई इल्म नहीं।"

"हूँ।" कुछ क्षणों तक वह मौन [illegible] जुहरा आ गई।" और तेजी से [illegible] हो उन्होंने चारों ओर दृष्टि दौड़ाई, [illegible] निराश हो वह अपने कक्ष में आ [illegible] ने कुछ क्षण पश्चात् डरते-डरते [illegible] कि लालकुँअरि सहसा उठकर [illegible] भी हो, जहाँ भी हो, जुहरा को [illegible] है, सुगींद। उसको देखे बिना [illegible]

"परन्तु, उनका कुछ [illegible] खोज करवा रही है।"

"सुगींद! मुझे [illegible] तरह भी हो [illegible]

सकती हो तो कम-से-कम उसकी खबर तो सुना आ। जा जल्दी जा खुर्शीद देर न कर। और कहीं भी, किसी के भी रोके रुकना मत। सीधे मेरे पास आना।"

"जो हुक्म।" कहती हुई खुर्शीद कक्ष के बाहर हुई ही थी कि खाँ साहब को सामने से आता देख वह लौट पड़ी और कक्ष में प्रवेश कर सूचित किया, "बेगमसाहबा की खिदमत में खाँ साहब तशरीफ ला रहे हैं।"

"खाँ साहब !" सम्हल कर बैठते हुए लालकुँअरि ने आश्चर्य व्यक्त किया, "कौन खाँ साहब ?"

"अपने खाँ साहब वजीरेआजम।"

"जा, उनसे कह दे कि बादशाह सलामत यहाँ नहीं हैं।"

"उन्हीं का हुक्म बजा लाने के लिये आपकी खिदमत में बेवक्त हाजिर होने के लिये मजबूर होना पड़ा है।" खाँ साहब ने कक्ष में पैर रखते हुये झुककर लालकुँअरि को सलाम करते हुए कहा।

लालकुँअरि खाँ साहब को देखते ही खड़ी हो गईं। खाँ साहब ने स्थान की ओर संकेत किया, "तशरीफ रखिए। खड़े होने की जहमत क्यों उठा रही हैं ?" कहते हुए खाँ साहब अपने लिए उपयुक्त स्थान निश्चित कर बैठ गये।

"क्या हुक्म दिया है, बादशाह सलामत ने ?" लालकुँअरि ने धीरे-धीरे बैठते हुए प्रश्न किया।

"गोली मारिए ऐसे-वैसे हुक्मों को। आपके हुक्म के सामने उनके हुक्म की क्या औकात ?"

"फिर भी······?" लालकुँअरि सम्हलकर बैठ गई। स्वर के साथ-साथ उनकी मुद्रा से भी सतर्कता-भाव व्यक्त हो रहा था।

"छोड़िये भी। आप चाहेंगी तो·········।"

बीच में ही लालकुँअरि का दृढ़ स्वर व्यक्त हो गया, "नहीं खाँ साहब बादशाह सलामत का हुक्म सिर-आँखों पर। आप जल्द-से-जल्द उस हुक्म से वाकिफ कराइए।"

"आप मजबूर कर रही हैं तो·········वैसे······।"

"ख़ाँ साहब ! फिजूल की बात सुनने की मैं आदी नहीं। आप फौरन बादशाह सलामत का हुक्म फरमाएँ और······।" लालकुँअरि कहते-कहते रुक गईं। ख़ाँ साहब ने शेष वाक्य पूरा किया, "यहाँ से चला जाऊँ। क्यों, यही आप कहने जा रहीं थी न ?"

"आप सीधे हुक्म से वाकिफ क्यों नहीं करा रहे हैं ?"

"मुझे डर है कि कहीं उस हुक्म के सुनते ही आपके दिल की धड़कन न बढ़ जाय।"

"आपको मेरी फिक्र करने की जरूरत नहीं। आप सीधे हुक्म सुनाइये।"

"आपकी जिद् के सामने मेरी क्या औकात। जब बादशाह······।"

"ख़ाँ साहब !" लालकुँअरि फुफकार उठी, "हुक्म के अलावा मैं एक लब्ज भी सुनना नहीं चाहती।"

"फिर तो, मजबूरी है। आप अपने सब जेवरात मेरे हवाले कर दें।" ख़ाँ साहब के स्वर में कठोरता आ गई थी।

लालकुँअरि फौरन उठी और अलमारी खोल जेवरात ख़ाँ साहब के सामने फेंकते हुए बोली, "ले जाइए।" अलमारी बन्दकर वह पूर्ववत् स्थान पर आकर बैठ गईं।

"और वह डिब्बा क्यों रख छोड़ा है ?"

"उसमें मेरे जाती जेवरात हैं।"

"शाही हुक्म के मुताबिक आपके पास एक भी जेवर नहीं रहने पायेगा।"

लालकुँअरि ने फौरन अलमारी से डिब्बा निकाला और अधिकार में करते हुए कहा, "हरगिज नहीं, मैं अपनी जाती चीजों की सरेआम नीलामी हरगिज न होने दूँगी।"

"काश ! आपने दिल-दिमाग से काम लिया होता।"

"मतलब ?"

"ये क्या, ऐसे न जाने कितने बेशकीमती जेवरात आपके जिस्म की रौनक

बढ़ाते।"

"और यह जिस्म आपकी नजर होता।" लालकुँअरि क्रोध स्वर में आगे बोलीं, "खाँ साहब ! आपका ख्वाब कभी हकीकत में तब्दील नहीं होने का।"

"फिर, यह भी सोच लीजिए की आप की जिद् जुहरा को जिन्दा नहीं छोड़ेगी।"

"खाँ साहब ! जुहरा मेरी बहिन है। उसे दुखी देखना मैं बरदाश्त नहीं कर सकती।"

"फिर, आप अपनी जिद् छोड़ दीजिए।"

"खाँ साहब ! किसी की मजबूरी का नाजायज फायदा उठाना इन्सानियत नहीं है।"

"खाँ साहब इन्सानियत का सबक सीखाने नहीं आये हैं। सीधे जबाव दीजिए। जुहरा का रास्ता आपको अपनाना है या नहीं ?"

"खाँ साहब ! वह लम्हा इस जिन्दगी में कभी नहीं आने का।" डिब्बा खाँ साहब की ओर फेंकते हुये लालकुँअरि ने धमकी दी, "ले जाइए जेवरात और याद रखियेगा कि जुहरा को अगर कुछ हुआ तो मुझसा बुरा कोई न होगा।"

जेवरात का डिब्बा उठा खाँ साहब ने सामान्य स्वर में कहा, "फिर मजबूरी है। जब आपको अपनी बहन की जान नहीं प्यारी है, तो कोई कर ही क्या सकता है।"

"जुहरा।" लालकुँअरि शक्तिभर चीखीं। कक्ष से दूर होते हुए खाँ साहब के कानों में वह भीषण स्वर काफी देर तक गूँजता रहा। लालकुँअरि की चीख सुन चारों ओर से परिचारिकाएं दौड़ पड़ीं। खुर्शीद को सामने आती देख लालकुँअरि ने आगे बढ़ आदेश दिया, "जैसे भी हो खाँ साहब के महल से जुहरा को सही सलामत ले आ।"

"खाँ साहब के महल से ?"

"हाँ, हमेशा तुझे वहाँ जाने से रोकती रही हूँ, मगर आज तुझे जाना ही पड़ेगा। जुहरा शैतान के चंगुल में फँस गई है। उसे किसी भी तरह छुड़ाना है।"

"आप इतमिनान रखिये । जुहरा का वाल भी बाँका न होने पायेगा ।"

"फिर जा, जल्दी जा ।" हाथ से आगे बढ़ने का संकेत करते हुए लालकुँअरि ने सचेत किया, "होशियार रहना, किसी मुखालिफ शख्स का उस महल से जिन्दा बाहर निकलना नामुमकिन समझा जाता है ।"

"देखना है ।" खुर्शीद ने जाते-जाते मन-ही-मन सोचा, "खाँ साहब कितने चालाक हैं ।"



खाँ साहब के महल के एक सामान्य कक्ष के द्वार पर पर्दा पड़ा था । पर्दे के बाहर सशस्त्र रक्षक उपस्थित थे । खुर्शीद ने सस्मित आगे बढ़ प्रश्न किया, "आज यहाँ कैसे दीवान ?"

"जुहरा बेगम की पहरेदारी पर तैनात हूँ ।"

"जुहरा बेगम ! क्या हो गया है उन्हे ?"

"मुझे क्या मालूम ?"

"वाह ! यह पहरेदारी खूब रही ! जरा देखूँ तो······।" खुर्शीद ने पर्दा हटा पैर आगे बढ़ा कहा ।

"मगर, सरकार का हुक्म है कि जुहराबेगम से कोई मिलने न पावे ।"

"मैं भी नहीं ?" सिक्कों भरी थैली आँखों के सामने नचाते हुये खुर्शीद ने पूछा ।

"जल्दी बाहर आजाएगा ।" थैली थाम टेंट में खोसते हुये भय प्रकट किया, "किसी को खबर न हो ।"

"बेफिक्र रहो । शाही महल की नौकरी पक्की समझो ।" खुर्शीद ने कक्ष के अन्दर पैर रखते हुए कहा, "आज ही बेगमसाहबा से तुम्हारी सिफारिश कर

दूँगी।"

"आप आराम से मिलिए।" पहरेदार दीवान का स्वर खुर्शीद के कानों में पड़ा, परन्तु खुर्शीद की आँखें कक्ष के अंधकार में जुहरा को खोज रही थीं। जब जुहरा कहीं नजर न आई तो खुर्शीद ने बाहर निकल पूछा, "जुहरा बेगम कहाँ हैं ?"

"आँय ! आपको नजर नहीं आई ?"

"नहीं।" खुर्शीद दीवान के पीछे-पीछे हो ली। दीवान लगातार तीन कक्षों को पार कर चौथे कक्ष में बनी सीढ़ियों की ओर संकेत करते हुए बोला, "नीचे के कमरे में हैं।"

खुर्शीद एक सांस में सारी सीढ़ियाँ उतर गई। सहसा किसी के कराहने का शब्द सुनाई दिया। यह जुहरा की आवाज थी। खुर्शीद लपककर जुहरा के निकट जा पहुँची। जुहरा फर्श पर पड़ी थी। शरीर पर वस्त्र अस्तव्यस्त थे। जुहरा के कपोलों को सहलाती हुई खुर्शीद ने मृदु स्वर में पुकारा, "जुहरा !"

उत्तर में जुहरा की अपेक्षाकृत तीव्र कराह मुँह से निःसृत हुई ?

"जुहरा !" खुर्शीद ने कान के अधिक निकट मुँह ले जा पुकारा, "जुहरा ?"

जुहरा ने, धीरे-धीरे नेत्र खोल, देखा। खुर्शीद को पहचानते हुए ही वह जोर से कराह उठी। खुर्शीद का हृदय करुणा से भर गया। जुहरा के हाथ को थाम पूछा, "यह क्या हो गया तुम्हें ?"

"मैं बताता हूँ।" खुर्शीद ने चौंक गरदन घुमाकर दृष्टि ऊपर उठाई तो देखा कि खाँ साहब खड़े थे। वह सन्न रह गई। किंकर्तव्यविमूढ़-सी वह खाँ साहब की ओर देखती रह गई।

"बेगमसाहबा ने भेजा होगा। जुहरा के बगैर बेचारी तड़प रही होंगी। देखने आई होगी कि जुहरा जिन्दा है या·········।"

"जी नहीं।" खुर्शीद ने खड़े हो खाँ साहब की ओर उन्मुख हो कहा, "हुजूर की चौखट पर मैं भी तकदीर अजमाना चाहती हूँ।"

"मतलब ?"

"कनीज को भी, सरकार, खिदमत का एक मौका देने की इनायत करें।"

"तू क्या खिदमत कर सकती है ?"

"जो जुहरा भी न कर सकी।"

"ओह ! तो तू बेगम की चालकी दूसरी गोट है।"

"सरकार कनीज को गलत न समझें। सिर्फ एक मौका दें। अगर बेगम-साहबा को इसी कमरे में घसीट न लाऊँ तो यह सिर सरकार कदमों में।" खुर्शीद ने सिर झुका दिया।

"दगाबाजी का नतीजा देख लिया है ?"

"जुहरा का चुनाव ही गलत था।"

"मतलब ?"

"इस दुनियाँ मे भला ऐसी कौन औरत होगी जो अपनी बहिन की अमानत मे खयानत बनना पसन्द करेगी।"

"मगर जब जुहरा की एक-एक बोटी उनको नजर की जायेगी, तब उनके दिमाग ठिकाने आयेंगे।"

"कनीज के रहते हुजूर को इतनी जहमत उठाने की क्या जरूरत।"

"तू अभी बेगम साहबा को नही जानती।"

"हुजूर को शायद मालूम नही कि वह मेरी आँखों से देखती और मेरे ही कानों से सुनती हैं। दोनो के जिस्म एक ही हवा-पानी से पले हैं। आज से नहीं बचपन से उनके मिजाज के वाकिफ हूँ।"

"मगर, उन्हे कब्जे मे लाने के लिए जुहरा की मौत के डर से बढ़कर कोई जरिया नही।"

"जैसी, सरकार की मर्जी। वैसे, शायद जुहरा की मौत की खबर भी उन्हें यहाँ तक न ला सकेगी।"

"नामुमकिन। वह जुहरा को बहुत चाहती हैं। जुहरा को तकलीफ में देखना वह कभी बरदाश्त नही कर सकती।"

"हुजूर, अभी उनके मिजाज से वाकिफ नही है। उन जैसा संगदिल इन्सान

देखने में नहीं आया। वह टूटना जानती हैं, मगर झुकना नहीं। उनके मामूली फैसले के सामने बड़ी-से-बड़ी कुरबानी कोई अहमियत नहीं रखती।"

"फिर, तू भी कुछ न कर सकेगी।"

"हूं, लाहौर में रईसजादों के लिए उन्हें तैयार करने वाली यह कनीज नहीं कोई और था।"

"अब वह वक्त नहीं रहा। उनकी हैसियत बदल गई है।"

"मुझे तो पहले से भी बदतर नजर आती है। लाहौर में दौलत पानी की तरह बरसती थी। यहां हालत यह है कि हुजूर ने जेवरात तक छीन लिए हैं। गुस्ताखी माफ हो, हुजूर बेगम साहबा लाई जा सकती हैं। वहाँ यहाँ तक सिर के बल चलकर आयेंगी। वैसे, हुजूर की मर्जी।"

कुछ सोच-विचार कर खाँ साहब ने स्वीकृति व्यक्त की, "अच्छा ! तू भी कोशिश कर देख।"

"रहने दीजिए, सरकार। हुजूर को कनीज पर जब यकीन ही नहीं तो···।"

"नहीं, नहीं, ऐसी बात नहीं है। दरअसल नाकामयाब इन्सान कामयाबी तक को शक की नजर से देखने लगता है। देख, शायद तू कामयाब हो जाये।"

"हुजूर, शायद नहीं। एकबार सिर्फ उन्हीं चीजों का इस्तेमाल करना पड़ेगा जो·········।"

"किन चीजों का ?"

"हुजूर का तो मकसद पूरा होना चाहिए। पहले चीजें गिनाऊँ, फिर उन पर हुजूर को यकीन दिलाऊँ और फिर·········।"

"रहने दे तू। मुझे न उन बातों को जानने की जरूरत है न फुरसत।"

"मगर, सरकार, इनाम मामूली नहीं लूँगी।"

"अरी ! कामयाब होकर तो दिखा। मुँह मांगा इनाम दूँगा।"

"फिर, यह हार·········।" जुहरा के गले में पड़े हार की ओर संकेत कर खुर्शीद ललचाई दृष्टि से देखने लगी।

"ले-ले। इस मुर्दे के गले में यह बायसे रौनक नहीं है।"

जुहरा के गले से सुर्रीद ने हार उतार लिया। उसे दृष्टि के सम्मुख कर प्रसन्नतासूचक स्वर में बोली, "कितना खूबसूरत है यह !"

"इससे भी नायाब सैकड़ों हार मेरे खजाने में हैं। और सब-के-सब सिर्फ उस शख्स के लिए हैं जो बेगम साहबा को मेरे कब्जे में लाने में कामयाब होगा।"

"फिर तो, सब मेरे हो गए।"

"पहले बेगम तो मेरी हों।"

"वह तो आपकी हैं ही। शुरू से ही हैं, मगर''''''।" कहते-कहते सुर्रीद रुक गई। गले में पड़े हार को ठोढ़ी से दबा पीछे दोनों हाथों से बाँधने लगी।

"मगर क्या ?"

"हुजूर, दूसरों के चक्कर मे ऐसे फँसे कि बेगम की तरफ वह तवज्जह नहीं दी जो उन्हें दरकार थी, वरना अब तक तो, शायद, हुजूर, बेगम साहबा से ऊब चुके होते और ये हार किसी और की तलाश के लिए ईनाम की शक्ल में दिए जाने का इन्तजार कर रहे होते।"

"बेगम साहबा से कोई कभी नही ऊब सकता। उनकी हर बात लाजवाब है।"

"हुजूर के हारों की तरह।"

"कहाँ वह और कहाँ मे बेजान हार।"

बीच में ही सुर्रीद बोल पड़ी, "ऐसा न कहें सरकार। इसी एक बेजान हार मे सौ बेजान जिस्मों में जान फूँकने की ताकत है।"

"बेगम साहबा के बिना मेरे बेजान हो रहे जिस्म मे अगर यह जान डाल सके तो जानूँ।"

"यह तो इसके बाएँ हाथ का खेल है।" जुहरा की ओर संकेत कर, "देखिए न, जब तक यह गले में था, कराह रही थी। इसके दूर होते ही इसका जिस्म कैसा बेजान हो गया है।"

"इसे ऐसे ही तड़प-तड़प कर मरना है। आओ चलें यहाँ से।" जहाँदारशाह ने मुड़ते हुए कहा।

खुर्शीद खाँ साहब का अनुसरण करती हुई बाहर आ गई।

O

खुर्शीद को गये विलम्ब हो चुका था। लालकुँअरि उसकी प्रतीक्षा में थीं। विभिन्न विचार उनके मस्तिष्क में उठ रहे थे। उनकी दृष्टि के सामने कभी खाँ साहब की क्रोधपूर्ण मुद्रा आ जाती और उसके साथ ही जुहरा की दयनीय दशा का चित्र खिंच जाता तो कभी खुर्शीद का क्षमा की भीख माँगता हुआ रूप नेत्रों के समक्ष साकार हो उठता। कभी-कभी वह उठकर टहलने लगतीं। अनेक बार उस ओर भी दूर तक चलीं गईं जिस ओर से खुर्शीद के आने की सम्भावना थी। बहुत देर के पश्चात खुर्शीद ने भागते हुये महल में प्रवेश किया। वह द्वार तक आकर लौटने ही वाली थीं कि सामने से भागती आती वह दिखाई पड़ गई। कदम जहाँ-के-तहाँ रुक गये। वह आकर सामने रुकी। उसकी साँस तेजी से चल रही थी। हाँफती हुई बोली, "जुहरा की जान खतरे में है। आप उन्हें बचाइये वरना······।"

"तेरी उससे मुलाकात हुई ?"

खुर्शीद ने अपने गले से हार उतार लालकुँअरि की दृष्टि के सामने कर दिया।

"यह तो जुहरा के गले का हार है !"

"हाँ।"

"यह हार उसे बहुत पसन्द है। तू इसे क्यों ले आई ?"

"आपको यकीन दिलाने के लिए।"

"अरी, यकीन तुझ पर मुझे रहा कब नहीं ?"

"मगर, अब नहीं रहना चाहिए।"

चाहा था। फर्क सिर्फ इतना रहेगा कि वह अपने दिल में खाँ साहब के लिए जगह बनाने के बजाय अपने दिल में उन्हें बसा बैठीं और मैं आपको उनके कब्जे में करने की बजाय जुहरा को उनके पंजे से आजाद कराने की कोशिश करूँगी।"

"आज बड़ी घुलमिल कर बातें हो रही हैं। किसे किसके पंजे से आजाद कराया जा रहा है ?" बादशाह ने लालकुँअरि के कक्ष में प्रवेश करते हुए कहा।

लालकुँअरि तपाक से उठ खड़ी हुईं। स्थान विशेष की ओर बैठने का संकेत कर लालकुँअरि ने कहा, "तशरीफ रखिए। खैरियत तो है ?"

"खैरियत ही तो नहीं बेगम ! जब दुश्मन सिर पर सवार हो, तब खैरियत कहाँ।"

"फिर, उसे मार क्यों नहीं भगाया जाता ?"

"दुश्मन काफी ताकतवर है। उसे शिकस्त देने के लिये शाही ताकत को मजबूत बनाया जा रहा है।"

"मगर, दुश्मन की खबर मिले तो काफी दिन होने आ रहे हैं। इतनें दिनों में शाही फौज इस काबिल हो ही नहीं सकी कि दुश्मन को मार भगाया जा सके ?"

"इसका जवाब तो खाँ साहब ही दे सकते हैं। उन्हें ही फौज की तैयारी का काम सौंपा गया है।"

"तब तो हो चुकी शाही फौज ताकतवर और खा चुका शिकस्त दुश्मन शाही फौजों से।"

"मतलब ?"

"खाँ साहब का फौजी कामों में मन लगे तब न।"

"खाँ साहब सल्तनत के सबसे वफादार शख्स हैं। वह अपनी जुम्मेदारी बखूबी समझते हैं। वह वही कर रहे होंगे जो मौजूदा हालत में मुमकिन होगा।"

"जरूरत से ज्यादा आपके इसी यकीन ने तो उनका दिमाग सातवें आसमान पर चढ़ा रखा है। मैं पूछती हूँ कि जब दुश्मन सिर पर सवार हो तब जिम्मेदार शख्स को ऐशो-आराम और नाच-गाना कैसे सूझ सकता है, हरम की रौनक बढ़ाने की फिक्र कैसे हो सकू ?"

"तुम्हारे इन सवालात का जवाब, बेगम, तो खाँ साहब ही दे सकते हैं।" कक्ष के बाहर दृष्टि ले जाते हुए, "और, वह तो इधर ही बढ़े चले आ रहे हैं।"

"फिर, मैं चली।" बेगम ने उठते हुए कहा, "आप की खिदमत में कुछ अर्ज करने आ रहे होंगे।"

"मुमकिन है तुम्हारी ही मदद की जरूरत हो उन्हें।"

"अब मेरे पास बचा ही क्या है जो मैं उनके किसी मसले के हल होने में मददगार साबित हो सकती हूँ।"

"अरी बेगम ! सबसे बड़ी दौलत है तुम्हारा दिमाग। इसका सिक्का किसने कब नहीं माना है ?"

"उसकी भी जरूरत अब खाँ साहब को नहीं रही।"

"फिर, इधर आ कैसे रहे हैं ?"

"आपकी तलाश करते हुए।"

"मगर, रुको न, लगता है खाँ साहब से किसी बात पर बहस हो गई है। खाँ साहब तो तुम्हारी तारीफ करते कभी थकते नहीं और तुम हो कि उनसे ऐसे दूर भाग रही हो जैसे उनकी............?"

"हाँ, मुझे उनकी शक्ल से नफरत है।" लालकुँअरि ने बीच में ही बोल अपनी नाराजगी व्यक्त की, "मैं किसी भी कीमत पर उनके साथ बैठना पसन्द नहीं कर सकती।"

"जैसी तुम्हारी मर्जी। वैसे खाँ साहब ऐसे शख्स हैं नहीं जिन्हें नाराज होने का मौका दिया जाय।"

द्वार तक आये खाँ साहब को देख लालकुँअरि पार्श्ववर्ती कक्ष में चली गई। खाँ साहब ने अभिवादन करते हुए प्रवेश किया, 'किसे किस बात का

मौका दिया जा रहा है ?"

"कुछ नहीं, यूँ ही जरा........। हाँ, आप कहिए, कैसे तकलीफ की ?"

"हुजूर की खिदमत में अर्ज करने आया हूँ कि शाही महल की चीजों की नीलामी से उतनी दौलत हासिल नहीं की जा सकी जितनी दुश्मन के हमले को नाकामयाब बनाने के लिए शाही फौज में सिपाहियों की भरती के लिए जरूरी है।"

"फिर ?"

"दौलत के बगैर तो कुछ हो नहीं सकता।" कहीं-न-कहीं से दौलत तो हासिल होनी ही चाहिए।"

"आप ही कोई रास्ता सोच निकालिए।"

"क्यों न रियाया से हासिल कर ली जाय ?"

"रियाया को तकलीफ देना ठीक नहीं।"

"फिर तो, मुझे कोई रास्ता नजर नहीं आता।"

बादशाह कुछ सोच सहसा उछल पड़े, "मिल गई ! मिल गई !!"

"क्या मिल गई हुजूर ?"

"दौलत—बेइन्तिहा दौलत मिल गई।"

"कैसे हुजूर ?"

"खुदाई से।"

"खुदाई से ?" खाँ साहब चौंक उठे, "कहाँ की खुदाई से हुजूर ?"

"किले की खाँ साहब।" खाँ साहब के हाथों को अपने दोनों हाथों में थाम बादशाह ने अनियन्त्रित प्रसन्नता में झूमते हुए कहा, "किले की खुदाई से जो दौलत हासिल हो सकती है, वह रियाया या दूसरे जरिए से हरगिज नहीं।"

"मगर, किस किले की खुदाई से दौलत हासिल हुई है, हुजूर ?"

"हासिल हुई नहीं है, खाँ साहब आगरे के किले में बेइन्तहा दौलत भरी पड़ी है। बचपन में बुजुर्गवार अक्सर जिक्र किया करते थे। आप फौरन खुदाई करवा दीजिए। आप जितनी दौलत चाहेंगे मिलेगी। जाइए, फौरन आज ही रवाना होइए और किले की एक-एक ईंट खोद डालिये। उस दौलत से इतनी

बड़ी शाही फौज खड़ी कीजिये कि दुश्मन सुनते ही कांप उठे और फिर कभी जिन्दा रहते हमले की बात न सोचे।"

"जो हुक्म।" खाँ साहब ने शिष्टाचार पालन करते हुए कहा, "फिर, मैं आज ही आगरे के लिए रवाना होता हूँ।"

"बेशक, मगर वक्त का ख्याल रखिएगा।" प्रस्थान के लिये प्रस्तुत खाँ साहब को देख बादशाह ने मसनद का सहारा लेते हुए कहा, "दुश्मन किसी भी वक्त दिल्ली पर हमला कर सकता है।"

"हुजूर, बेफिक्र रहें। वह नौबत नहीं आने पायेगी। उसका इन्तजाम मैं करके जाऊँगा।"

"बहुत खूब! आपकी एहतियात का जवाब नहीं, खाँ साहब।"

"यह सब हुजूर की जर्रानवाज़ी है। अच्छा, इजाज़त दीजिए।"

"जाइए। खुदा आपको कामयाबी बख्शे।" खाँ साहब आदाब बजाते हुए कक्ष से बाहर हो गए।

o

सहसा [illegible] के [illegible] बहादुर खाँ का ध्यान आकृष्ट किया। [illegible] हुए, उन्होंने [illegible] खाँ साहब आगे-आगे चले जा रहे हैं।"

"हाँ, [illegible]" [illegible] बहादुर खाँ के कथन की पुष्टि की।

"[illegible]"

बहादुर खाँ के आदेशानुसार [illegible] के लिए रोक दी गई।

शाही गाड़ी को पहचानते हुए खाँ साहव ने घोडे को रोक। खुर्शद ने गाड़ी से वाहर कूद प्रश्न किया, "सरकार आगरे से कव तशरीफ लाए ?"

"आज ही—अभी थोड़ी थेर पहले। गाड़ी में और कोई है ?"

"जी हाँ, वेगम साहवा हैं। कुछ तवियत ना साज है। यूँही सैर करने निकली थीं। आप से कुछ वात करना चाहती हैं।"

सुनते ही खाँ साहव घोडे से नीचे उतर आए और गाड़ी के निकट जाकर अभिवादन करते हुए वोले "वेगमसाहवा की खिदमत में आदाव वजा लाता हूँ।"

"वड़ी उम्र है आपकी। अभी गाड़ी में हम दोनों आपको याद ही कर रही थीं।"

"जहेनसीव। खिदमतगार हुक्म का तलवगार है।"

"कितनी दौलत हाथ लगी ?"

"एक कानी कौड़ी भी नहीं। दौलत के नाम पर सिर्फ पचास मन तांबा दो तीन जगहों की खुदाई से हासिल हुआ जिसे वहीं नीलाम कर दिया गया।"

"मगर जुहरा तो कह रही थी कि आपके हाथ वेशुमार दौलत लगी है।"

"जुहरा कह रही थी ?" खाँ साहव सहसा सकमका उठे।

"हाँ, आपने कभी उसें वताया होगा। यूँही एक दिन वह वातों-ही-वतों मे जिक्र कर वैठी थी।" खाँ साहव के मुखःमण्डल के परिवर्तित रंग को माप लालकुँअरि ने कहा, "एक ही वात है। दौलत आपके महल में है या शांही खजाने में-इससे फर्क क्या पड़ता है मुगलिया रक्षक सल्तनत के मुहाफिक हैं तो आपके ही। मेरा खयाल है कि वह दौलत अच्छी खासी फौज खड़ी करने के लिए नाकाफी होगी।"

"आपको या जुहरा को किसी किस्म की गलतफहमी हो गई होगी। दरअसल जो कुछ हासिल हुआ था।, वह सव मजदूरी में खर्च हो गया था।"

"कोई वात नहीं। आपसे हिसाव कोई थोडे ही पूछता है। इस सल्तनत के असली हुक्मरां आप हैं। दुश्मन से सल्तनत की हिफाजत तो किसी-न-किसी तरह होनी ही है। हम लोगों की क्या, जिधर पडला भारी देखा, उधर हो लि

शाही महल में अब क्या रखा है। शराब की सुराही तक मिट्टी की हो गई है।"

"मुझे तो सिर्फ आपकी नजरे इनायत चहिए। अभी जरूरत की सारी चीजें शाही महल में भिजवाए दे रहा हूँ जाकर।"

"जी नहीं, उनकी कोई खास जरूरत नहीं। आप दुश्मन को किसी तरह भगाने की कामयाब कोशिश कीजिए।

"आप बेफिक्र रहिए। कल सुबह ही शाही फौजें कूच कर देंगी।"

"बस! यह आफत सिर से टल भर जाय। फिर आप हैं और आपकी ख्वाहिशें।"

"बस, नजरे इनायत चाहिए।"

"कूच करने से पहले एकबार मुलाकात जरूर कर लीजिएगा।" लाल-कुँअरि ने गाड़ी बढ़ाने का आदेश दिया, "चलो।"

"मैं अभी थोड़ी ही देर में खिदमत में हाजिर होती हूँ।" चलती गाड़ी के साथ-साथ दौड़ते हुए मुर्शीद ने भेदभरी दृष्टि से लालकुँअरि को देखकर जाने की अनुमति मांगी। लालकुँअरि ने भी मुस्कराकर कहा, "जल्दी लौटना। ज्यादा रात न होने पाये।"

"आपको इंतजार नहीं करना पड़ेगा।" गाड़ी से दूर होते हुए मुर्शीद ने उच्चस्वर में कहा। खाँ साहब के निकट जा मुर्शीद सफलताजन्य आनन्द में फूलते हुए बोली, "हुआ यकीन सरकार को? पूरी तरह कब्जे में समझिए।"

"शाबाश, कमाल कर दिखाया तूने।"

"फिर, सरकार, हमारा इनाम?" मुर्शीद ने हाथ फैला दिया।

गले से हार उतार मुर्शीद के फैले हाथ पर रख खाँ साहब ने कहा, "महल से जो जी चाहे ले आना जाकर।"

"इन्कार तो न कीजिएगा?"

"तुझे मुँहमाँगा इनाम मिलेगा। तूने वह काम कर दिखाया है जिसकी उम्मीद ही मैं छोड़ बैठा था।"

"ये तो, सरकार, खुर्शीद के बायें हाथ के खेल हैं। अगर, और कोई हो तो हुक्म दीजिए।"

"और सब तो मेरे इशारे की मुन्तजिर हैं। सिर्फ बेगम साहबा के ही दिमाग आसमान पर थे।"

"उन्हें तो, सरकार, खुर्शीद ने ऐसे ठिकाने लगा दिये हैं कि सोते-जागते अगर, हुजूर, का नाम न जपें तो मेरा नाम नहीं।"

"वाकई, तूने बालू में से तेल निकाल कर दिखा दिया है।"

"फिर, हुजूर, किसी वक्त भी मैं अपना मुंहमांगा इनाम हासिल करने आ सकती हूँ।"

"तुझे अब किसी चीज के लिये किसी से पूछने की जरूरत नहीं।"

"मगर, हुजूर, कनीज से एक गुस्ताखी हो गई है।" खुर्शीद अपराधपूर्ण स्वर में बोली।

"क्या ?"

"जुहरा को एक दिन मैं अपने घर ले गयी थी।"

"मगर, कैसे ? वह तो कैद में है। मेरी इजाजत के बिना वह बाहर निकल ही नहीं सकती।"

"हुजूर की नजरे इनायत का इस कनीज ने नाजायज फायदा उठाया है। सजा के लिये सर हाजिर है।" खुर्शीद ने कहते हुये सिर झुका दिया।

"सजा के मुस्तहक तू नहीं, वे पहरेदार हैं जिनके…………।"

"उनके बदले मुझे सजा दे लें, सरकार। कुसूर उनका नहीं मेरा है, सरकार। मेरे ही यकीन दिलाने पर कि उन्हें किसी किस्म की सजा नहीं मिलेगी, उन्होंने जुहरा को बाहर पैर रखने की इजाजत बख्शी थी।"

"मगर, उन्होंने मेरी हुक्म उदूली करने की जुरअत की कैसे ?"

"सरकार! पहले मेरा सिर उड़ा दीजिये।" खुर्शीद ने सड़क पर ही सिर झुका दिया।

"नहीं, सजा तुझे नहीं उन नालायकों को मिलेगी।"

"तलवार म्यान के बाहर निकालिए, सरकार।"

"यह सड़क है। यह क्या स्वाँग कर रही है?"

"स्वाँग नहीं, सरकार। यह हकीकत है।" इसे ही मेरा इनाम समझकर, सरकार बख्शें।"

"यह क्या जिद् कर रही है तू! सीधे खड़ी हो।"

"सरकार इसे जिद् न समझें। गुनहगार माकूल सजा का मुन्तजिर है।"

"अच्छा बाबा! उन्हें कोई सजा नहीं दी जायेगी। तू सीधे खड़ी तो हो।"

"सरकार बड़े रहमदिल हैं। इतना बड़ा गुनाह कभी कोई माफ नहीं कर सकता। कनीज हुजूर का यह अहसान जिन्दगी भर नहीं भूलेगी। हमेशा हुजूर का हर हुक्म सिर-आँखों पर होगा।"

"तू महल किस वक्त आ रही है?"

"हुजूर के हुक्म की देर है। हुक्म हो तो बन्दी इसी वक्त चलने को तैयार है।"

"नहीं, इस वक्त तो कई जरूरी काम हैं। कल दोपहर के बाद किसी वक्त आ जाना।"

"मगर, कल सुबह तो हुजूर आगरे के लिए कूँच करने वाले हैं।"

"आगरे परसों कूच करूंगा। एक दिन में क्या फर्क पड़ने का।"

"नहीं सरकार, बेगम सहिबा को दी गई जबान बहुत अहमियत रखती है। वह हुजूर की एक ही खुसूसियत पर तो फिदा हैं और वह है हुजूर की जबान। जब कभी मैंने हुजूर की बाबत जिक्र छेड़ा, उन्होंने हमेशा इसी बात की तारीफ की कि आपके लिये वक्त की पाबन्दी सबसे ज्यादा अहमियत रखती है। आप जिस वक्त जो कदम उठाने का फैसला एक बार कर लेते हैं, दुनियां इधर-से-उधर हो जाय, वह वक्त टल नहीं सकता। और फिर, यह तो बेगम साहबा के सामने किया गया, हुजूर का पहला वायदा है। शायद हुजूर को इसकी अहमियत समझाने की जरूरत नहीं। हमारी बेगम साहबा का दिल मक्खन से भी मुलायम है।"

"फिर!" खाँ साहब ने सोचते हुये कहा, "मैदाने जंग से लौटने के बाद

देखा जायेगा।"

"जैसी हुजूर की मर्जी।"

"अच्छा ! बेगमसाहबा के ख्यालात बदलने न पावें।" खाँ साहब ने घोड़े पर सवार होते हुये कहा।

"हुजूर, बेफिक्र रहें। उनके ख्यालात न बदले हैं न बदलेंगे।" खुर्शीद फौरन मुड़ चलने को हुई कि एक कर्मचारी ने सामने आ कहा, "बेगम साहबा की गाड़ी खड़ी है।"

"कहाँ ?"

"वह रही।" कर्मचारी ने कुछ अन्तर पर खड़ी गाड़ी की ओर हाथ से संकेत किया।

"खुर्शीद लपकी गाड़ी की ओर और उसके बैठते ही गाड़ी राजमार्ग पर सरपट भागने लगी।

O

कक्ष विशेष में जहाँदारशाह गावतकिए के सहारे अर्धशायित हो मदिरा के साथ सुमधुर संगीत का रसास्वादन कर रहे थे। लालकुँअरि के प्रविष्ठ होते ही वह, मदिरा-पात्र ओठों से हटा, पूछ बैठे, "लौटने में बड़ी देर लगा दी ? तुम तो कह गई थीं कि सूरज ढलने के पहिले ही वापस आजाओगी ?"

"हाँ, जरा देर हो गई। अभी तक महफिल क्यों नहीं जमीं ?" लालकुँअरि ने कक्ष में उपस्थित परिचारिकाओं पर दृष्टि डाल प्रश्न किया।

"किसके लिए जमती महफिल, बेगम। तुम तो थीं नहीं। जुहरा की कई दिन से शक्ल देखने को नहीं मिली है। न जाने कहाँ रहती है। खुर्शीद को शायद तुम अपने साथ ले गई थीं ?"

"जी हाँ, गलती हुई, आइन्दा से कहीं जाऊँगी, तो कम-से-कम खुर्शीद को तो आपकी खिदमत में छोड़ ही जाऊँगी।"

"मगर, कोई खास फर्क नहीं पड़ा। तुम्हारे जाने के कुछ देर बाद ही खाँ साहब आ गए थे। काफी देर तक उनसे बातें होती रहीं।"

"क्या-क्या बातें हुई उनके और आपके दरम्यान ?"

"इस वक्त जंग आम मसला है। तैयारियों के मुतअल्लिक बातें चलती रहीं।"

"आगरे के किले में कितनी दौलत हाथ लगी ?"

"वक्त जाया हुआ, बेगम कुछ भी हासिल नहीं हो सका।"

"फिर ?"

"जंग की तैयारियों का क्या होगा ?"

"मैंने तो सब उन्हीं पर छोड़ दिया है। जो मुमकिन होगा, वह उठा न रखेंगे।"

"कूच कब कर रहे हैं ?"

"जंग के लिए माकूल तैयारी होते ही कूच कर देंगे। मेरा ख्याल है अब आठ-दस रोज में उन्हें कूच कर देना चाहिए।"

"मगर, मुझसे जो उनकी बात हुई है, उसके मुताबिक वह कल ही सुबह कूच करने वाले हैं।"

"कल सुबह ?"

"हाँ, वह कल सुबह जरूर कूच कर देंगे।"

"मगर इतनी जल्दी मैं तैयार कैसे हो सकूँगा ?"

"आपको तैयारी की क्या जरूरत ?"

"मैदानेजंग मे मेरे हाजिर रहने से सिपाही दुगने जोश के साथ लड़ेंगे। कल सुबह कूच करने की बात नामुमकिन है। तुम्हें समझने में धोखा हुआ होगा, बेगम।"

"जी नहीं, शाही फौजें दिल्ली से कल सुबह ही कूच करेंगी और उनकी रहनुमाई कर रहे होंगे खाँ साहब।" लालकुँअरि ने आत्मविश्वासपूर्ण

स्वर में एक-एक शब्द पर वल दे कहा।

"फिर तो इसका मतलव है कि माँ वदौलत को मैदानेजंग तक जाने की जहमत नहीं उठानी पड़ेगी।"

"यह आप जानें और खाँ साहव। आपने मैदाने जंग में हाजिर रहने की वात मंजूर ही क्यों कर ली ?"

"वह तो उन्होंने मंजूर करवाली। मैं तो आखीर तक इन्कार करता रहा। तुम रहतीं वेगम तो वह इतनी जिद् न कर पाते। अव इस मुसीवत से तुम्हीं छुटकारा दिला सकती हो, वेगम।"

"मैं खाँ साहव से किसी तरह की कोई वात नहीं करना चाहती।"

"फिर तो वेगम, मैंदाने जंग तक विना जाये जान नहीं छूटने की। लेकिन, एक वात मैं अभी कहे देता हूँ।"

"वह क्या ?" लालकुँअरि की दृष्टि प्रश्न चिह्न वन वादशाह सलामत के चेहरे पर टिक गई।

"अकेले हरगिज न जाऊँगा।"

"मतलव ?"

"तुम्हें भी साथ चलना पड़ेगा।"

"हुजूर का हुक्म सिर-आँखों पर। मैं तो खुद ही अभी यह मसला हुजूर की खिदमत में पेश करने वाली थी।"

"फिर तो, मुझे कोई फर्क नहीं पड़ता। अगर, तुम मेरे साथ हो तो मैंदाने जंग भी माँ वदौलत के लिए किसी महफिल से कम पुरलुत्फ न रहेगा।"

"न हो तो किसी को भेज कर दरियाफ्त करा लिया जाये कि कव कूँच करना है। वक्त थोड़ा है। हुजूर को तैयार होने के लिये कुछ वक्त तो चाहिए ही।"

"वेशक।"

लालकुँअरि ने गरदन घुमाई तो खुर्शीद दृष्टिगत हुई। देखते ही आज्ञा दी, "खाँ साहव से इतना दरियाफ्त कर आ कि कव कूँच करना है।"

कल सुबह।

"फिर भी, एक बार तू दरियाफ्त तो कर आ।"

"जो हुक्म।" खुर्शीद आदाब बजाती हुई कक्ष से बाहर हो गई।

"जुहरा से यह किसी माने में कम नहीं है।" बादशाह ने खुर्शीद के जाने के पश्चात् अपनी धारणा प्रकट की।

"अक्लमन्द उससे भी ज्यादा है। जो काम जुहरा के जरिए भी नामुमकिन थे, उन्हें इसने बखूबी अन्जाम दिए है।"

खुर्शीद दूसरे ही क्षण लौट आई। उसने कक्ष में घुसते ही सूचित किया, "खाँ साहब हुजूर की खिदमत मे खुद-ब-खुद तशरीफ ला रहे हैं।"

"फिर, आप दरियाफ्त कर लीजिए।" लालकुँअरि ने उठते हुए कहा।

"नहीं बेगम, अकेले मैं कुछ भी फैसला न कर सकूँगा। तुम्हारे सामने खाँ साहब ज्यादा नहीं बोल पाते, वरना वह जो चाहते हैं, मुझसे मंजूर करवा लेते हैं।"

खाँ साहब को आता देख लालकुँअरि सम्हल कर बैठ गईं। खाँ साहब ने अभिवादन के पश्चात् मुस्कराते हुए कहा, "जहेनसीब, आज बहुत दिनों बाद बेगम साहबा हुजूर के साथ नजर आ रही हैं।"

"आपकी फौजें कब कूँच कर रही है?" बादशाह ने सीधे प्रश्न किया।

"कल सुबह कूँच करने का इरादा है।"

"फिर तो इनकी इत्तिला सही थी।"

"हम तो हुक्म के गुलाम हैं। कल सुबह कूँच करने का हुक्म मिला है। हुक्म सिर-आँखो पर।"

"हुक्म मिला है! किसने हुक्म दिया है?"

"बेगम साहबा के मुताबिक जब दुश्मन सिर पर सवार हो तो वक्त जाया करना ठीक नहीं। जल्द-से-जल्द दुश्मन के दिमाग दुरुस्त करने चाहिए।"

"इसके माने हैं कि मुझसे मुलाकात करने के बाद आप बेगम साहबा से मिले हैं।"

"जी हाँ, कुछ यूँ ही समझ लीजिए। मेरे लिए जैसे आप वैसे बेगम साहबा। दोनों के हुक्म मेरी नजर में बराबर अहमियत रखते हैं। बेगम साहबा के हुक्म के मुताबिक ही हुजूर की खिदमत में अर्ज करने आया हूँ कि कल सुबह ही कूँच करना है बेहतर होगा हुजूर तैयार रहें।"

"बेगम साहबा की तैयारी पर मुनहसिर करेगा। मुझे तैयार होने में क्या देर। वक्त तो इन्हें तैयारी के लिए चाहिये।"

"क्या आप भी तशरीफ ले चल रही हैं ?" खाँ साहब ने सीधे लालकुँअरि से प्रश्न किया।

"आप ही की तो ख्वाहिश है कि.........।"

"मेरी ख्वाहिश।" खाँ साहब बीच में ही साश्चर्य बोले, "मैंने तो आपकी बाबत कभी सोचा ही नहीं। और फिर भला मुझे यह बरदाश्त ही कैसे हो सकता है कि आप मैदाने जंग की मशक्कतें उठायें।"

"हुजूर को मैदाने जंग के लिए तैयार करने का क्या मतलब होता है ?"

"ओह ! मैंने ख्वाब में भी न सोचा था कि हुजूर को तैयार करने का मतलब होगा आपको तकलीफ देना। दरअसल, मुझसे गलती हुई। माफी का दरख्वास्तगार हूँ।"

"नहीं खाँ साहब ! जैसा आपने कहा था कि बादशाह की हाजिरी में सिपाही जान हथेली पर रख कर लड़ता है, माँ बदौलत को मैदाने जंग की जहमतें उठानी ही चाहिए। हाँ, हमारी बेगम को जरूर तकलीफ होगी।"

"जी नहीं, मेरी फिक्र करने की जरूरत नहीं। मुझे अपने को हर हालत के मुताबिक ढालना आता है।"

"फिर, खाँ साहब, सुबह कूँच के वक्त हम लोगों को आप तैयार पायेंगे।"

"फिर, इजाजत दीजिए।" खाँ साहब ने प्रस्थान-भाव व्यक्त किया।

"कूँच के पहिले एकबार फिर तैयारियों का मुआयना करना न भूलियेगा।"

"जो हुक्म।" खाँ साहब ने झुककर अभिवादन किया और उल्टे पैरों तेजी से निकल गये।

"कुछ देर आप आराम फरमा लीजिये।" लालकुँअरि ने उठते हुये कहा।

"पर, तुम जा कहाँ रही हो ?"

"तैयारी करने।"

"कुछ देर तो पास बैठो बेगम। इधर पिछले कई दिनों से तुम न जाने क्यों खोई-खोई-सी रहती हो ?"

"वक्त बहुत थोड़ा है। आराम करना बेहतर होगा।"

"मगर, तुमने आदत जो खराब कर रखी है।"

लालकुँअरि ने सुनते ही मुस्करा दिया। बेगम ने तानपूरा उठा और सुपरिचित सुमधुर ध्वनि बादशाह के कर्ण-कुहरों मे प्रवेश करने लगी। कुछ ही देर में बादशाह की पलकें झपने लगीं। उन्हें प्रगाढ़ निद्रा में निमग्न अनुभव कर लालकुँअरि दीर्घनि:श्वास छोड़ते हुए उठ खड़ी हुई और खुर्शीद को अनुसरण करने का संकेत प्रकट कर द्वार से बाहर हो गई।

O

सैय्यद बन्धुओं को व्यूह-रचना का इतना अधिक समय मिल गया था कि शाही सेना की प्रतीक्षा के अतिरिक्त उनके पास कोई काम न था। दोनों भाई कभी परस्पर वार्तालाप करते, एक-दूसरे की आलोचना-प्रत्यालोचना करते और भावी योजनाओं का निर्माण करते, कभी फर्रुखसियर के शिविर में बैठ शत्रु के प्रमादी स्वभाव की हँसी उड़ाते। ज्यों-ज्यों समय बीत रहा था, सैय्यद बन्धुओं को प्रतीक्षा असह्य होती जा रही थी। दोनों अग्रसर होने का परस्पर निर्णय कर फर्रुखसियर से अनुमति प्राप्त करने के लिए शिविर मे बाहर निकले ही थे कि प्रमुख गुप्तचर ने उनकी सेवा में सूचना निवेदित की, "हुजूर, दुश्मन ने कूँच कर दिया है।"

"चाल कैसी है ?"

"तूफानी, सरकार।"

"क्यों न हम आगे बढ़ उनकी थकी फौजों का सफाया कर दें ?" सैय्य
हुसेन अली ने अपनी व्यग्रता व्यक्त की।

"नहीं, यहाँ से आगे बढ़ने की कोई जरूरत नहीं। हम यहीं दुश्मन के आ
का इन्तजार करेंगे।" सैय्यद अब्दुल्ला खाँ ने अपना निर्णय दिया।

"हमें, दुश्मन को आराम करने का मौका नहीं देना चाहिए।"

"दुश्मन की कमान है जुल्फिकार खाँ के हाथ में। वह तब तक सिपाहि
को आराम नहीं करने देगा जब तक हम लोगों के सामने आ नहीं डटेगा।"

"आइए, शाहजादा साहब को इत्तिला दें चल कर।" हुसेन अली से
रहा गया, "देखना है दुश्मन के कूँच करने की बात सुनकर उनके चेहरे क
क्या हालत होती है।"

"चलो।" अब्दुल्ला फर्रुखसियर के शिविर की ओर चल दिए।

दोनों ने शिविर में प्रवेश किया ही था कि अंगरक्षक विशेष से प्रश्न किय
"शाहजादा साहब को क्या हो गया ?"

"कुछ तो नहीं।"

"अच्छा ! पिलाओ।"

"मगर सरकार, पेट के दर्द से दिन भर बेचैन रहेंगे।"

"फिर रहने दो, और ख्याल रखना कि अब इतनी कभी न पीने पायें कि यह हालत हो जाय।"

"जो हुक्म।"

"कल सुबह मुलाकात करने आयेंगे।"

"बहुत अच्छा।" अंगरक्षक भी सैय्यद बन्धुओं के पीछे-पीछे बाहर तक चला गया।

O

दिवस के प्रकाश को रात्रि का अंधकार उदरस्थ तो कर जाता, परन्तु अधिक समय न रख पाता। प्रकाश अंधकार का उदर विदीर्ण कर सगर्व मुस्करा उठता। प्रकृति विजयोत्सव मनाती। परन्तु अन्धकार भी पराजय स्वीकार करने वाला न था, तारागणों की विशाल सेना साथ ले सहसा आक्रमण कर देता और प्रकाश को दबोच लेता। प्रकाश भी अवसर की प्रतीक्षा में रहता। अन्धकार की पकड़ ढीली होते ही वह छिटक कर दूर खड़ा होता और विजयगर्व से फूल अन्धकार को ललकारने लगता। दोनों का परस्पर द्वन्द्व देखते हुये शाही सेना आगरे की सीमा पर आ पहुँची और शिविरों के गड़ने की ध्वनि से वातावरण गूँज उठा।

सैय्यद हुसेन अली तेजी से घोड़ा भगाते हुये सैय्यद अब्दुल्ला के शिविर के निकट आ उतरा और तेजी से शिविर में घुस बोले, "भाई साहब ! अब देर किस लिए ? दुश्मन बड़ी तेजी से मोर्चाबन्दी कर रहा है।"

"सिर्फ जासूसों के वापस आने का इन्तजार है। आओ......।"

"गोली मारिए जासूसों को। आप बाहर निकलिए और हमले का हुक्म दीजिए।"

"नहीं हुसेन, दुश्मन की असलियत जाने बगैर कोई भी कदम उठाना अक्लमन्दी नहीं होगी।"

"फिर, आप करिए इन्तजार।" हुसेन ने जाने का उपक्रम करते हुए कहा, "मैं अपने सिपाहियों को हमले का हुक्म देता हूँ जाकर।"

"ठहरो हुसेन।" हुसेन को मुड़कर अपनी ओर उन्मुख देख अब्दुल्ला ने आगे समझाया, "फूट बुरी होती है। उतावलेपन से सब काम बिगड़ जायेगा।"

"दुश्मन सिर पर सवार है और आप हाथ-पर-हाथ धरे इतमिनान से बैठे हैं। मेरी समझ में नहीं आ रहा है…………।" शिविर में एक साथ अनेक व्यक्तियों के प्रवेश ने हुसेन को आगे बोलने न दिया।

उनमें से एक को अब्दुल्ला खाँ ने सम्बोधित किया, "असद खाँ! क्या खबर लाये ?"

असद खाँ गुप्तचर विभाग का प्रमुख था। उसने आदाब बजा कर सूचित किया, "फौजी तैयारी तो कोई खास नजर नहीं आई। हाँ, बादशाह जरूर बेगम के साथ तशरीफ लाये हैं।"

"तब तो डोलियाँ काफी होंगी। बादशाह का खेमा किस तरफ गड़ा है?"

"बाईं तरफ हुजूर।"

"सिपाही कितने होंगे?"

"सिपाहियों की तादाद का अन्दाज लगाना मुश्किल है, हुजूर; क्योंकि सिपाहियों में ज्यादातर मुझे खिदमतगार ही नजर आये।"

"हूँ।" कुछ सोच सैय्यद अब्दुल्ला ने कहा, "तुम अपना काम देखो जा कर। काम हिदायत के मुताबिक ही होना चाहिये। किसी बात की परवाह मत करना। फतहयाबी हासिल होते ही मुंह माँगा इनाम मिलेगा।"

"हुजूर का हुक्म सिर आँखों पर।" असद खाँ सलाम करके उल्टे पैरों शिविर के बाहर होगया।

हुसेन को अपनी दृष्टि का केन्द्र-बिन्दु बना सैय्यद अब्दुल्ला ने कहा, "तुम फौज को लेकर दाहिनी तरफ से हमला करो जाकर। मैं बाईं तरफ का मोर्चा सम्हालता हूँ। हरावल को तोपें आगे बढने देंगी नहीं।"

"मैं हरावल को भी देख लूँगा।"

"नहीं, उसको देखने की कोई जरूरत नहीं। जैसा मैं कहता हूँ, वैसा करो जाकर।"

"जाता हूँ।" हुसेन ने मुड़ते हुए कहा, "आप बाहर निकल तोपचियों को तो हुक्म दीजिये।"

"अभी बुलवाता हूँ करीम को।"

"करीम खाँ पता नहीं कहाँ होंगे। तलाश करने में वक्त जाया होगा। आप खुद क्यों नहीं मसनद छोड़ रहे हैं?"

"देखना है मुझे खाँ क्या खबर लाता है।"

"आपका इन जासूसों का चक्कर मेरी समझ में नहीं आता। आप इन्तजार करिये। मैं गोला दागने का हुक्म दिए देता हूँ जाकर।" कहता हुआ हुसेन शिविर के बाहर हो गया।

अब्दुल्ला खाँ भी हुसेन को पुकारते हुए बाहर निकल आए। हुसेन घोड़े पर सवार हो चुका था। घोड़े की लगाम पकड़ अब्दुल्ला खाँ ने कहा, "तुम्हारे मोर्चे पर पहुँचने के पहिले ही तोपें गोले उगलना शुरूकर देंगी।"

"भाई साहब! इन्तजार करना मेरी आदत के खिलाफ है। बिलावजह पन्द्रह दिन से यहाँ खेमा गाड़े पड़े हैं। अब तक तो न जानें कब दिल्ली फतेह हो गई होती।"

"खैर तुम सीधे अपने मोर्चे पर जाओ।" सैय्यद अब्दुल्ला का घोड़ा आ-गया था। उस पर सवार हो तोपों के मोर्चे की ओर उन्मुख होते हुए अब्दुल्ला ने कहा, "तुम्हारा साबिका जुल्फिकार खाँ से पड़ेगा। वह ईरानी सरदार बहुत चालबाज है। निहायत होशियार रहने की जरूरत है।"

"आप फिक्र न करिये। हुसेन की तलवार के सामने को[illegible] न

चलेगी ।" हुसेन ने घोड़े को पूरी चाल से छोड़ दिया था ।

O

जुल्फिकार खाँ वादशाह के विशाल शिविर के एक भाग विशेष में वैठे परामर्श में लीन थे। मदिरा सुराहियों से प्यालों में डाली जा रही थी । पात्र-रिक्त हो रहे थे । भरे जा रहे थे । न वादशाह मदिरा-पान को विराम दे रहे थे न खाँ साहब मदिरा-पान की सीमा का संकेत कर रहे थे । जैसे दोनों में पीने की होड़ लगी हो । कोई अपने को कम मदिरा-प्रेमी प्रमाणित नहीं करना चाहता था । तीसरी सुराही के खाली होने पर खाँ साहब ने कहा, "इस सुराही में तो कुछ भी नहीं निकली ।"

"सबसे बड़ी सुराही······।" वादशाह का शेष स्वर तोपों की गर्जना में डूब गया ।

"शायद दुश्मन ने गोला-वारी शुरू कर दी ।" खाँ साहब के हाथ का प्याला मुंह तक न जा सका । उन्होंने उठते हुए कहा, "अब मुझे इजाजत दीजिए ।"

"जाइए ।" वादशाह ने मदिरा-पूरित पात्र बिना ओठों से पृथक किए ही अनुमति दी ।

"ख्याल रखियेगा, हुजूर । आप को वायाँ मोर्चा सम्हालना है ।"

"आप वेफिक्र रहिए ।"

"जैसी कि खबर मिली है । आपको शायद सैय्यद अव्दुला से लोहा लेन पड़े ।"

"आपने सब इन्तजाम तो कर ही दिया है । किसी किस्म का खतरा तं नहीं है ?"

"जी नहीं, दुश्मन का आप तक पहुँचना नामुमकिन है ।"

"फिर तो लोहा लेने का सवाल ही नहीं उठता ।"

"फिर भी, यह मैंदाने जंग है । दुश्मन किस वक्त कौन करवट लेता है, अन्दाज लगाना मुश्किल है । हमें हमेशा हर हालत का सामना करने के लिए तैयार रहना चाहिए ।"

"आपके होते हुये मां बदौलत को फिक्र करने की जरूरत नहीं ।"

"जुल्फिकार खाँ के जीते जी हुजूर का बाल भी बाँका न होने पायेगा ।"

"यही यकीन तो मां बदौलत को मैदाने जंग तक घसीट लाया है ।"

"हुजूर अब आराम फरमायें । जब तक मेरी तरफ से कोई खबर न मिले हुजूर इसके बाहर हरगिज पैर न रखें । और हाँ, बेगम साहबा तो इस खेमे को छोड़ें ही नहीं ।" खाँ साहब सम्मान-भाव व्यक्त करते हुए शिविर के बाहर निकल गए ।

खाँ साहब को शाही शिविर छोड़े हुए विशेष समय न हुआ था कि एक सिपाही भागता-भागता आया और हाँफते हुये शिविर में प्रविष्ठ हुआ । झुक कर तीन बार सलाम करके उसने निवेदन किया, "खाँ साहब ने हुजूर की खिदमत में अर्ज करने को कहा है कि जल्द-से-जल्द परवरदिगार अपना मोर्चा सम्हाल लें ।"

सैनिक की बात सुनते ही बादशाह ने लालकुँअरि की ओर देखा । लालकुँअरि ने, बादशाह की दृष्टि मे निहित प्रश्न को समझ, कहा, "जाइए, जाना ही पड़ेगा ।"

"तुम भी मैदाने जंग में जाने को कहती हो ?"

"इसके अलावा चारा ही क्या है ? मैदाने जंग मे बादशाह और एक मामूली सिपाही में कोई खास फर्क नही रहता ।"

"तुम्हारी दृष्टि में मैं एक मामूली सिपाही ही रह गया हूँ, बेगम ?"

"जी नहीं, मेरे लिए तो आप सब कुछ हैं । आपकी नजरो से देखती और कानो से सुनती हूँ । मेरे कहने का मतलब सिर्फ यह था कि

मामूली सिपाही बादशाह तक को ललकारने की जुरअत कर सकता है।”

“फिर क्या, मुझे जाना ही पड़ेगा ?”

“जैसी हुजूर की मर्जी।”

“नहीं बेगम। मुझे तो अपनी सरकार की मर्जी के मुताबिक कदम उठाना
।”

“जाना ही होगा।”

बादशाह तपाक से उठ खड़ा हुआ और द्वारोन्मुख होते हुए बोला, “बेगम! जब तक मैं लौट न आऊँ, इस खेमें के बाहर निकलना मत।”

“हुजूर का हुक्म सिर-आँखों पर।” बेगम ने अनुसरण करते हुए कहा, “हुजूर मुझे यहीं इन्तजार करते पायेंगे।”

बादशाह की सवारी के लिए हाथी पहिले से ही तैयार था। हौदे में बाद-शाह के बैठते ही हाथी उठ खड़ा हुआ। जब तक हाथी दृष्टि से ओझल नहीं हो गया, लालकुँअरि शिविर के द्वार पर खड़ी अपलक निहारती रहीं। खुर्शीद ने पीछे से कहा, “चलिए, आराम फरमाइये चल कर।”

“इस जिन्दगी में आराम कहाँ, खुर्शीद।” अन्दर की ओर मुड़ते हुए लाल-कुँअरि ने दीर्घ निःश्वास ली, “जान आफत में है। एक लम्हे को भी सुकून नहीं। नामालूम इस जंग का क्या अन्जाम हो।”

“फतह हमारी होगी। दुश्मन मुँह की खायेगा। हमारी बेगम साहब
हुकूमत करेंगी।”

“अगर, फतहयाबी हासिल भी हो गई तो दूसरी जंग सामने आजायेगी

“दूसरी जंग ! क्या और भी किसी दुश्मन के हमले की खबर मिली है

“तू तो इतनी जल्दी भूल जाती है। खाँ साहब और मेरे दरम्यान छि
वाली जंग को तू इतनी जल्दी भूल गई ?”

“भूली तो नहीं हूँ, मगर, मेरी निगाह में वह इतनी अहमियत भी
रखती कि उसे हमेशा याद रखूँ।”

“तू अभी खाँ साहब के मिजाज से वाकिफ नहीं है। वह मुझे ह

करने के लिए कुछ भी उठा न रखेंगे।"

"मगर, मेरे जिन्दा रहते उनकी ख्वाहिश कभी पूरी नहीं होने की।"

"तुम जैसी सैकड़ों की जान की कीमत पर भी वह अपना इरादा बदलने वाले नहीं।"

"फिर, आप उनकी जान को भी खतरे में समझिये।"

"तेरा बचपना अभी तक नहीं गया।"

"मौत के मुँह में जाने के लिये तैयार शख्स के लिये कुछ भी नामुमकिन नहीं होता।"

"आ किसी दूसरे खेमें में चलें।" लालकुँअरि ने उठते हुए कहा, "इस खेमें में रहना खतरे से खाली नहीं है।"

"यह शाही खेमा है।" खुर्शीद ने अनुसरण करते हुये जिज्ञासा प्रकट की, "इसमें किस बात का खतरा?"

"दुश्मन की नजर सबसे पहिले इसी पर पड़ेगी।"

"मगर, दुश्मन यहाँ तक आने ही नहीं पायेगा। शायद आप इसकी हिफाजत के लिये तैनात सिपाहियों की तादात से वाकिफ नहीं।"

"आस्तीन के साँप के लिये कोई भी हिफाजत नाकाफी ही साबित होती है।"

"आपका मिजाज जरूरत से ज्यादा शक्की हो गया है।"

"शक्की नहीं खुर्शीद, खाँ साहब बादशाह सलामत की गैर हाजिरी का नाजायज फायदा उठाने की नीयत से कभी भी आ सकते हैं।" अनेक खेमों को पार करते हुए लालकुँअरि ने उपयुक्त खेमें की खोज में दृष्टि उठाई ही थी कि सहसा घोड़े पर सवार खाँ साहब को बेतहाशा अपनी ओर आते हुये देखा। देखते ही वह खेमें की ओट हो गईं। परन्तु खुर्शीद उनकी दृष्टि से न छुप सकी। निकट आते ही उन्होंने खुर्शीद से पूछा, "बेगम साहबा कहाँ हैं?"

"आपको रास्ते में नहीं मिलीं?"

"नहीं तो।"

"कुछ ही देर तो हुई है उन्हें इसी ओर को गए हुए।"

"तब तो जरूर वह बादशाह सलामत की तलाश में होंगी।"

"मगर, मुझसे तो कह कर गई हैं कि वह आपकी तलाश में वहीं जा रही हैं।"

सुनते ही खाँ साहब ने घोड़ा मोड़ा परन्तु सामने से शत्रु-सैनिकों के झुण्ड को अपनी ओर बढ़ता देख उन्होंने घोड़ा पुनः मोड़ा और ऐसी एड़ लगाई कि घोड़ा हवा से बातें करने लगा। खाँ साहब के जाते ही लालकुँअरि ने खुर्शीद के पास आ अनुमान व्यक्त किया, "शायद, यह मैदाने जंग छोड़ कर भाग खड़े हुये हैं। पता नहीं।" कुछ सोच लालकुँअरि ने आगे कहा, "मैं बादशाह सलामत के पास जा रही हूँ।" एक खेमें के खूँटे से बँधे घोड़े को खोल लालकुँअरि ने छलांग लगाई और घोड़े को उसी दिशा में दौड़ा दिया जिस ओर कुछ समय पहिले बादशाह गये थे।

दूर से ही लालकुँअरि ने देखा कि शाही सवारी का हौदा खाली है। वह एक ओर तो लटक-सा गया है। उसे बाँधने वाली रस्सियाँ काट दी गई हैं। फिर भी, वह उसी को लक्ष्य कर बढ़ रही थीं। मार्ग में प्रवाहित रक्त और अंग-भंग सैनिकों के धराशायी होने के कारण यद्यपि अश्व की गति यथेष्ठ मन्द पड़ चुकी थी, फिर भी, लालकुँअरि साहस न छोड़ रही थीं। शाही सवारी कुछ ही दूर रह गई थी कि सामने से आते घोड़े पर सवार बादशाह पर उनकी दृष्टि पड़ी। इसके पूर्व कि लालकुँअरि कोई प्रश्न कर सकें, बादशाह का अश्व निकट आ गया और उन्होंने आश्चर्य व्यक्त किया, "कहाँ जा रही हो?"

"आपकी तलाश में।"

"मेरी तलाश में! सीधे खेमें में जाकर आराम करो। मैं खाँ साहब के मोर्चे की तरफ जा रहा हूँ।"

"मगर, उन्हें तो मैंने अभी दिल्ली की तरफ भागते हुए देखा है।"

"नामुमकिन, खाँ साहब मैदाने जंग को छोड़कर भागने वाले नहीं।"

"यकीन कीजिये वह काफी रास्ता तय भी कर चुके होंगे। जंग की मौजूदा हालत क्या है ?"

"अगर, खाँ साहब भाग खड़े हुए हैं तो फिर दुश्मन के हाथ बाजी रही। मेरे मोर्चे के ज्यादातर सिपाही मारे गए हैं।"

"फिर तो, यहाँ एक लम्हा भी रुकना खतरे से खाली नहीं है। आइए, हम लोग भी भाग चलें।"

"मगर, भागकर जायेंगे कहाँ ?"

"कहीं-न-कहीं पहुँच ही जायेंगे। मौत के मुँह में जाने से तो बच जायेंगे।"

"चलो।" बादशाह की सहमति पाते ही लालकुँअरि ने घोड़ा मोड़ा। दोनों अश्व गति में परस्पर स्पर्धा से आन्दोलित हो उठे।

O

घुड़सवारी की अभ्यस्त न होने के कारण अधिक दूरी तय करना लालकुँअरि के लिये सम्भव न था। उनके चेहरे पर थकान के चिह्न उभर आये थे। प्रस्वेद की सहायता से धूल ने आपादमस्तक ऐसी पर्तें जमाई थीं कि रंग बदरंग हो गया था। प्यास से कण्ठ सूख रहा था। सूर्यास्त का समय था। बस्ती के निकट से गुजरते हुए लालकुँअरि ने कहा, "क्यों न हम लोग रात इसी गाँव में काट लें ?"

"यह गाँव मैदाने जंग के करीब पड़ता है। दुश्मन के सिपाही यहाँ तक आसानी से आ सकते हैं। और फिर..........।"

"मगर प्यास से मेरा गला सूख रहा है।"

"पहिले ही क्यों नहीं बताया ?" लालकुँअरि के क्लान्त मुखमण्डल पर पर दृष्टि डाल जहाँदारशाह ने अश्व को बस्ती की ओर मोड़ कहा।

तो कहीं भी पिया जा सकता था।"

गाँव की सीमा पर एक कुआँ था। कई ग्रामीण स्त्रियाँ कुएँ की जगत पर थीं। दो अश्वरोहियों को अपनी ओर आते देख सब-की-सब चिल्लाती हुई बस्ती की ओर भागीं। उन्हें भागते लक्ष्य कर जहाँदारशाह ने आश्चर्य व्यक्त किया, "अरे रे रे ! ये भाग क्यों रही हैं ?"

"और नहीं तो क्या बादशाह सलामत की नजर का शिकार बनने के लिए खड़ी रहें ?"

"बुरा क्या है ? शिकार बने बिना ऐश कहाँ ?"

"ऐसे ऐश से अल्लाह दूर रखे। बादशाहत भी क्या ही बुरी बला है। न हासिल होते देर न उससे महरूम होते देर। वक्त न जाने इंसान को कब क्या-से-क्या बनादे।"

कुआँ निकट आ गया था। तीन-चार बरतन इधर-उधर पड़े थे। उन्हें देख जहाँदारशाह ने कहा, "देखो, अगर किसी में पानी हो तो, प्यास बुझालो।"

"आबस्ती के अन्दरच त ेइए,लें। यहाँ न लोटा है न गिलास।"

"चुल्लू से पीने में जो लुत्फ आता है, बेगम, वह गिलास से पीने में कभी नहीं आने का। ठहरो, मैं पानी उँडेलता हूँ, तुम चुल्लू बांधो।" घोड़े से उतर जहाँदारशाह कुँए की जगत पर चढ़ गए। हर बरतन में झांक कर देखा। एक में भी पानी का बूँद तक न था। इधर-उधर दृष्टि दौड़ाई। रस्सी भी नजर न आने पर उन्होंने कहा, "बेगम, कहो तो पगड़ी खोल पानी भरलूँ ?"

"जी नहीं, आप यहीं रुकिये। मैं जाकर किसी घर से पानी पिए आती हूँ।" कहते हुए लालकुँअरि बस्ती की ओर घूमी ही थीं कि कुछ दूरी पर अनेक ग्रामीण धीरे-धीरे आगे बढ़ते दिखाई दिए। लालकुँअरि सहम कर वहीं खड़ी हो गईं। आश्चर्यचकित दृष्टि से ग्रामीणों की ओर जहाँदारशाह का ध्यान आकर्षित करने के उद्देश्य से उन्होंने पूछा, "ये लोग कौन हैं ?"

"कौन ?" ग्रामीणों को दृष्टिगत कर जहाँदाहशाह ने कहा, शायद औरतों के जरिए हमारे आने की खबर इन्हें मिल गई है। बेचारे हम लोगों का इस्ति-

ख्याल करने आ रहे हैं।"

"मगर, मुझे तो इनके हाथों में लाठियाँ नजर आ रही हैं !"

"जो जिसके पास होगा, वही तो दूसरे को नजर आयेगा। तुम्हारी तलवार पर उन औरतों की नजर पड़ गई होगी।"

"ओह !" लालकुँअरि ने फौरन कमर से तलवार खोल कुँए में फेंक दी।

"यह क्या किया, बेगम ? तलवार कुँए में क्यों फेंक दी ?"

"गलतफहमी पैदा करने वाली चीज को पास रखने से कोई फायदा नहीं। ये तो बढ़ते ही चले आ रहे हैं।"

"देखता हूँ।"

बढ़ते हुए जहाँदारशाह को रोक लालकुँअरि ने कहा, "नहीं, मैं दरियाफ्त करती हूँ।"

लालकुँअरि को अकेले आगे बढ़ते देख एक वृद्ध ग्रामीण ने, जो जमींदार रहा होगा, ऊँचे स्वर में प्रश्न किया, "कौन हो तुम ?"

"उनकी बेगम।" लालकुँअरि ने हाथ से पीछे की ओर संकेत कर उत्तर दिया।

"वह कौन हैं ?"

"आप लोगों के बादशाह सलामत।" लालकुँअरि ने देखा कि ग्रामीण एक-दूसरे की ओर आश्चर्यपूर्वक दृष्टि से देख-देख सम्राट के प्रति सम्मान-सूचक शब्दों का उच्चारण कर रहे हैं। भयरहित हो लालकुँअरि ने आगे बढ़ कहा, "हम लोग प्यासे हैं। अगर आप.........."

"आइए-आइए, पधारिये। गाँव आप का है।" ग्रामीण प्रमुख ने स्वागत भाव व्यक्त किया।

लालकुँअरि ने संकेत से जहाँदारशाह को निकट बुलाया। दोनों साथ-साथ ग्रामीणों की ओर बढ़े। अपेक्षाकृत विशाल और स्वच्छ मकान के एक कक्ष में आराम के साथ बैठ दोनों ने जलपान किया।

ग्रामीण प्रमुख ने हाथ जोड़ जिज्ञासा व्यक्त की, "हुजूर इधर कैसे ?"

"अकेले कहां साथ में यह भी तो हैं।" लालकुंअरि की ओर संकेत कर जहांदारशाह हँस दिए।

"सरकार के साथ में न बाजा व गाजा, न फौज न फाटा। सरकार कहीं हंस की तरह निकल पड़ते हैं।"

"ऐसे ही चला था।" दीर्घ निःश्वास छोड़ जहांदारशाह ने कहा, "मगर मैंदाने जंग में सबका सफाया हो गया।"

"तो क्या हुजूर, इस मैंदाने जंग से तशरीफ ला रहे हैं?"

"हां, वहां से जान बचा कर भागने के अलावा कोई चारा न था।"

वह ग्रामीण वहां से उठा। कुछ पग एक ओर को गया। उसकी ओर और भी ग्रामीण बढ़े। परस्पर काना-फूसी होने लगी।

जहांदारशाह ने लालकुंअरि को अकेला पा कहा, "हम लोगों का यहां ठहरना खतरे से खाली नहीं है। फौरन चल देना चाहिए।"

"मगर, इस रात में कहां भटकते फिरेंगे?"

"दुश्मन के हाथों सौंपे जाने से भटकना बेहतर है। चलो उठो।" जहांदारशाह को उठता देख लालकुंअरि भी उठ कर खड़ी हो गईं। कक्ष से बाहर निकल जहांदारशाह ने कहा, "आप लोगों को बहुत-बहुत शुक्रिया। अब हम लोग चलते हैं।"

"मगर, सरकार रात अंधेरी है। रास्ता भी अनजान होगा। तकलीफ होगी।"

"किस्मत में जो लिखा है, उससे तो बचा जा सकता नहीं।"

"क्या एक गाड़ी का इन्तजाम नहीं हो सकता?" लालकुंअरि ने पूछा

"क्यों नहीं। अभी मँगवाता हूँ। मँहगू।" ऊँचे स्वर में उसने पुकारा।

"जी सरकार।" जन-समूह के पीछे से उत्तर मिला।

"जरा जल्दी से छतदार बहली तो निकाल।"

"अभी लाया सरकार।" मँहगू एक ओर को लपका।

विशेष प्रतीक्षा न करनी पड़ी। भगते बैल की घंटियों की ध्वनि कान

पड़ते ही ग्रामीण प्रमुख बोला, "बहली आ गई सरकार। जहाँ तक हुजूर जाना चाहेंगे, मेंहगू पहुँचा आएगा।"

गाड़ी के आते ही दोनों उसमें जा बैठे। गाड़ी चलने के पूर्व मेंहगू ने सुना, "रास्ते में किसी तरह की तकलीफ न होने पावे।"

"हाँ।" मेंहगू ने बैल को बढ़ने का संकेत करते हुए आज्ञाकारिता व्यक्त की। कुँए की जगत के निकट दोनों घोड़े पूर्ववत् खड़े थे। गाड़ी को पास से गुजरते अनुभव कर दोनों हिनहिनाए परन्तु किसी का भी ध्यान उनकी ओर न गया और गाँव दूर होता चला गया।



लालकुँअरि की आँख खुली तो अपना सिर जहाँदारशाह की जाँघ पर रखा पाया। जहाँदारशाह बैठे-बैठे सो रहे थे। वह हड़बड़ा कर उठ बैठीं। दोनों ओर झाँक कर देखा तो गाड़ी को गतिमान पाया। मार्ग कच्चा था। गाड़ीवान भी ऊँघ रहा था। बैल मन्दगति से गाड़ी खींच रहे थे। सूर्य के प्रकाश में अपरिचित स्थान के प्रति लालकुँअरि ने जिज्ञासा व्यक्त की, "हम लोग कहाँ हैं इस वक्त ?"

गाड़ीवान की अपेक्षा जहाँदारशाह की नींद टूटी। सहसा उनके मुँह से निकला, "आँय ! सवेरा हो गया ?"

"जी हाँ।" लालकुँअरि ने जोर से कहा, "ये गाड़ीवान ! गाड़ी जरा रोकना तो।"

"क्यों, गाड़ी को क्यों रुकवा रही हो ?" गाड़ी को रुकते अनुभव कर जहाँदारशाह ने प्रश्न किया।

"यह दाहिनी तरफ बड़ा खूबसूरत बाग नजर आ रहा है।" बाग की

ओर लालकुँअरि ने संकेत किया, "रुकने के लिए यह बाग बेहतर रहेगा।" लालकुँअरि के साथ जहाँदारशाह भी उतर पड़े और दोनों बाग की ओर बढ़े। बाग के एक किनारे एक झोपड़ी दृष्टिगत हुई। झोपड़ी को लक्ष्य बना कुछ कदम ही दोनों बढ़ पाये होंगे कि दूसरी ओर से आवाज आई; कौन है?"

जिधर से ध्वनि आई थी उधर ही उनके कदम उठ गये। प्रश्नकर्ता एक युवक था। उसने दोनों को देखा तो देखता रह गया। अपलक अपनी ओर निहारते युवक को अनुभव कर लालकुँअरि ने प्रश्न किया, "तुम्हीं इस बाग के मालिक हो?"

"जी नहीं। मैं नौकर हूँ।"

"इस बाग के मालिक कहाँ हैं?"

"दिल्ली में। मैंने उन्हें कभी नहीं देखा।"

"फिर, इस वक्त तो इस बाग के मालिक तुम्ही हो न?"

"हुकुम दें हुजूर। जिस लायक हूँ, हाजिर हूँ सरकार।"

"हम लोग कुछ वक्त इस बाग में गुजारना चाहते हैं।"

"बड़े शौक से। बाग आपका है। जब तक जी चाहे, ठहरिये। मगर···।"

"कहो-कहो, रुक क्यों गये?"

"आपके ठहरने लायक जगह बाग में कहाँ।"

"क्यों, वह झोपड़ी तुम्हारी नहीं है?"

"है क्यों, नहीं सरकार। मगर, सरकार कहाँ आप लोग और कहाँ ऊ झोपड़ी सरकार।"

"उसकी चिन्ता तू मत कर। हम लोग चलते हैं। अगर हो सके तो कुछ खाने-पीने का इन्तजाम करदे।"

"होइ का नाहीं सकत सरकार। अबहीं जौनु हवैं, सरकार की खिदमत माँ हाजिर करित हवैं लाकर।" कहता हुआ वह युवक बाग के द्वार की ओर उन्मुख हो भागा।

झोपड़ी में कुछ कपड़े बर्तन और एक चारपाई के अतिरिक्त कुछ न था।

उसी चारपाई पर गिरते हुए लालकुँअरि ने कहा, "बड़ी जोर की भूख लगी है।"

"कुछ-न-कुछ तो वह लाता ही होगा।" जहाँदारशाह ने भी उसी चारपाई पर बैठ पैर फैला दिये।

लालकुँअरि ने मौन भंग किया, "क्या सोच रहे हैं ?"

"कुछ नहीं बेगम।" कमर सीधी करते हुए जहाँदारशाह ने लम्बी साँस ली।

"फिर खामोश क्यों हैं ? कुछ बोलिये न।"

"किस्मत के मारे इन्सान के पास बोलने को रह ही क्या जाता है, बेगम।"

"आपकी यही बातें तो मुझे अच्छी नहीं लगतीं।"

"इसी लिए तो खामोश हूँ। अच्छा होता किसी के तीर का निशाना बन जाता।"

"आप भी कैसी बातें कर रहे हैं ?" लालकुँअरि ने उठकर बैठते हुए कहा, "अच्छा, सुनिये। एक गीत सुनाती हूँ।" उन्होंने गुनगुनाना प्रारम्भ कर दिया।

"तुम्हें जोरों की भूख लगी है, बेगम। ऐसे में गाया नहीं जायेगा। वह कुछ-न-कुछ लाता ही होगा। पहले कुछ पेट में डाल लो, फिर, जो जी चाहे, करना।"

बाहर से आवाज आई, "सरकार ! हम आइ गएन।"

"अन्दर चले आओ।"

बागवान ने हाथ की चीजों को एक-एक कर रखते हुए कहा, "यह रहा दूध सरकार। गरम हवै। और ई हैं फल सरकार ! अपनी ही बगिया के हैं। सबै मीठ हवैं। और सरकार हुकुम करें।" हाथ जोड़ वह खड़ा हो गया।

"खाने के लिए और कुछ नहीं मिल सकता यहाँ ?"

"और इहाँ जंगल मा का रखा है, सरकार। हम गरीबन का रोटी-दाल सहारा है। वहके अलावा हियाँ कुछ नाहीं मिलत।"

"वही तो चाहिये।"

"का सरकार, रोटी-दाल चाही ?"

"हाँ।"

"अबै लेव सरकार । अबहीं चूल्हा सुलगाइत है जाय कै।" कहता हुआ वह बाहर निकल गया।

O

नींद टूटने पर बाहर की ओर देखते हुए जहाँदारशाह ने कहा, "अब चलना चाहिये।"

"मगर, चलियेगा कहाँ ?" लालकुँअरि ने बिना उठे पूछा।

"दिल्ली।"

"रास्ते में तो आप कह रहे थे कि दिल्ली सबसे ज्यादा खतरे की जगह है।"

"हाँ, है और नहीं भी है।"

"सो कैसे ?"

"वहाँ अगर हजार दुश्मन हैं तो दो-चार हमदर्द भी हैं। मुझे यकीन है कि कोई-न-कोई ऐसा हमदर्द निकल ही आयेगा जो हमें कुछ दिन के लिए पनाह दे देगा।"

"वैसे तो खाँ साहब ही पहुँच चुके होंगे; मगर, मुझे उनपर कतई भरोसा नहीं।"

"अगर, वह मिल गए तो कोई फिक्र की बात ही नहीं। उन्होंने मेरा हमेशा बुरे वक्त में साथ दिया है। चलो, उठो।"

"मगर, मुझे उनकी शक्ल तक से नफरत है। न मालूम वह हम लोगों की मजबूरी का क्या नाजायज फायदा उठाने की कोशिश करें।"

"बेगम ! खाँ साहब को तुमसे ज्यादा मैं जानता हूँ। वह कभी कोई ऐसा कदम नहीं उठा सकते जो हमारी शान के खिलाफ हो।"

"और किसी शहर में क्या हम लोग अपनी जिन्दगी नहीं गुजार सकते ?"

"मगर, जब दिल्ली में अपने हमदर्द हैं तो फिजूल में दर-दर फिरने से फायदा ?"

"जैसी आपकी मर्जी।"

"फिर उठो, वक्त जाया मत करो। दुश्मन की चाल मौत की चाल से भी तेज होती है।"

"यहाँ से चलने के पहिले मेहमानवाज को हमें कुछ-न-कुछ तो देना ही चाहिए।"

"फिर, कभी देखा जायेगा। इस वक्त हम लोगो के पास है ही क्या देने को ?"

"अगर, इजाजत दें तो एक बात कहूँ।"

"हाँ-हाँ, कहो; जल्दी कहो। देर हो रही है।"

"आप अपने कपड़े इस बागबान को दे दीजिए।"

"और मैं दिल्ली तक नंगा चलूँ ?"

"जी नहीं।" लालकुँवरि को हँसी आ गई, "उसके कपड़े आप पहिन लीजिये। रास्ते में आपके पहचाने जाने का खतरा भी नहीं रहेगा और मेह-मानवाजी के.............।"

"वाह बेगम !" उछल पड़े जहाँदारशाह, "यह एक ही रही।" कपड़े खोलते हुये वह आगे बोले, "अब हम दिल्ली तक महफूज पहुँच जायेंगे। उसे आवाज तो दो।"

"किस लिये ?"

"कपड़ों के लिए।"

"पहले आप कपड़े बदल तो लीजिये।"

"बदल कैसे लूँ। वह आयेगा तभी तो कपड़े हासिल हो सकेंगे।"

"जी नहीं, ये रहे उसके कपड़े।" खूँटी में टँगे कपड़ों को उतार आगे बढ़ा लालकुँवरि ने कहा, "बदल डालिए। और.........।"

"कहो-कहो, बेगम ! रुक क्यों गई ?"

"छोड़िये। आप भी कहेंगे कि मेरा दिमाग कितना खुराफाती हो गया है।"

"खुराफाती नहीं बेगम। तुम्हारे दिमाग ने बहुत बड़ा खतरा दूर कर दिया वरना अगर कहीं दुश्मन की नजर पड़ जाती तो मौत के मुँह में जाने के अलावा दूसरा रास्ता न था।"

"उसी बाबत तो एक बात और मेरे दिमाग में आई थी।"

"वह क्या ? जल्दी वह भी कह डालो।"

"अगर, हुजूर, दाढ़ी मूँछ मुड़वा डालें, तो फिर कोई पहचाने जाने की गुंजाइश ही नहीं रह जाती।"

"बेगम बात तो बेजा नहीं है, मगर यहाँ यह मुमकिन न हो सकेगा ?"

"बागबान तो दाढ़ी रखाये नहीं है। जरूर कहीं-न-कहीं तो वह मुड़वाता ही होगा।" बाहर निकलते हुए, "अभी दरियाफ्त········। अरे ! तुम यहीं खड़े हो ?"

"जी सरकार ! हमने सोचा कि कहीं कउनो चीज कै जरूरत न पड़ जाय।"

"तुम्हारी दाढ़ी कौन बनाता है ?"

"कौन की बनाई। हम खुदै बनाइ लेइत है।"

"फिर तू एक काम कर।"

"हुक्म दें सरकार।"

"बादशाह सलामत की दाढ़ी मूँछ साफ कर दे।"

"बादशाह सलामत ! कौन हैं बादशाह सलामत ?"

"ये ही जो हमारे साथ हैं।"

"आपौ सरकार गजब करत हैं। बादशाह कहूँ ऐसे मारे-मारे फिरत हैं।"

"कपड़ों से तू उन्हें नहीं पहचान सका ?"

"अइस कपड़ा तो, सरकार रहसौ वाले पहिनत हैं। हम तो आप लोगन का उनहीं समझा रहे।"

"अच्छा, तू वही समझे रह। बस, जरा जल्दी से दाढ़ी मूँछ साफ कर

दे । आइए, बाहर आ जाइए । हो गया इन्तजाम ।"

"ईका सरकार ! ई तो हमार कपड़वा हवै सरकार ! आपका सोभा नाहीं देत सरकार ।"

"सरकार ने तेरे कपड़े पहिने हैं । तू सरकार के बढ़िया कपड़े पहिनना । जा देर न कर । जल्दी से जो मैं कहती हूँ, कर ।"

"सरकार ! ऊ कपड़ा हम गरीबन का सोभा नाइ देइ ।"

"बस-बस ! बेकार की बात मत कर । जो मैं कह रही हूँ, पहले कर ।"

वह सिर झुका झोपड़ी मे घुसा और उस्तरा उठा लाया । जमीन पर ही बैठ वह जहाँदारशाह की दाढ़ी-मूँछ साफ करने लगा । जैसे-जैसे चेहरा साफ होता जा रहा था, बेगम की हँसी फूटी पड़ रही थी । वह मुँह मे दुपट्टा ठूँसे खड़ी थी । दाढ़ी-मूँछ साफ होने पर उसने दर्पण आगे बढ़ा दिया । उसमें चेहरा देखते ही जहाँदारशाह हँसे बिना न रह सके । लालकुँअरि की ओर देख वह बोले, "कैसा लग रहा हूँ, बेगम ?"

"निहायत खूबसूरत चेहरा निकल आया है ।"

"तुम्हारी तरह ।" जहाँदारशाह खड़े हो गये ।

"अपनी अगूठी उतार लालकुँअरि ने बागवान की ओर बढ़ा कहा, "ले अपनी लुगाई के लिए, इसे रख ले ।"

"सरकार·········।"

"जा-जा, गाड़ीवान से कह दे आकर कि फौरन तैयार हो । हमलोग चलने को तैयार हैं ।" लालकुँअरि ने उसे कुछ भी न कहने दिया ।

"एकबार दिन-रात साथ रहने वाले भी धोखा खाये बिना नहीं रह सकते ।"

"तुम्हें तो धोखा नहीं हो रहा है ?"

"धोखा ! अरे हुजूर, मुझे तो मुँह मांगी मुराद मिली है । शायद आप भूल गये होंगे । मैंने शुरू-शुरू में हुजूर की खिदमत में गुजारिश की थी कि मुझे दाढ़ी-मूँछ अच्छी नहीं लगती ।"

"चलो इसी बहाने सही, तुम्हारी ख्वाहिश तो पूरी हो गई ।"

"आइए, चलें।" गाड़ीवान को इन्तजार करते देख लालकुंअरि ने प्रस्थान-भाव व्यक्त किया, "गाड़ी तैयार है।"

"चलो।" जहांदारशाह चल दिए।

गाड़ी में बैठने के पूर्व लालकुंअरि ने बागवान से कहा, "तुम्हारी मेहमान-बाजी से बादशाह सलामत बहुत खुश हुए। फिर कभी, इधर से गुजरे तो तुम्हारे यहां जरूर रुकेंगे।" कह कर वह गाड़ी में जा बैठीं। गाड़ी चल दी।

"भूल-चूक माफ करना सरकार।" हाथ जोड़े बागवान युवक दृष्टि से ओझल होती गाड़ी को तब तक अपलक निहारता रहा जब तक गाड़ी दृष्टि से परे नहीं हो गई।

O

छः दिन तक निरन्तर यात्रा करने के पश्चात जहांदारशाह और लालकुंअरि ने दिल्ली नगर में प्रवेश किया तो आश्चर्यचकित रह गये। दोनों ने एक-दूसरे को साश्चर्य देखा। दोनों दृष्टियों में एक ही भाव था–"क्या यह वही दिल्ली है जहां अहर्निश जनसागर हिलोरें लिया करता था ?" गाड़ी आगे बढ़ रही थी। बाजारें बन्द थीं। दुकानों पर ताले लटक रहे थे। राजमार्गों पर यत्र-तत्र कोई वृद्ध या बालक दृष्टिगत हो रहा था। जहांदारशाह ने संदेह व्यक्त किया "यह कोई दूसरा शहर तो नहीं है ?"

"सब्जी मण्डी वाला बरगद तो यही है।" गाड़ी सब्जी मंडी से गुजर रही थी। पूर्व परिचय के आधार पर लालकुंअरि ने संदेह निवारण करने की चेष्टा की।

"हां, जुहरा बैठती तो इसी जगह थी।" स्थान विशेष को दृष्टि का केन्द्र-बिन्दु बना जहांदारशाह ने कहा, "क्यों न किसी से दरियाफ्त किया जाय ?

"इस लड़के से पूछ देखिए।" गाड़ी के पास गुजरते से लड़के को लक्ष्य कर लालकुँअरि ने कहा।

"ऐ लड़के !" लड़के के उन्मुख होने पर जहाँदारशाह ने बाहर गरदन निकाल प्रश्न किया, "दिल्ली शहर यही है न ?"

"जी हाँ, आप क्या इस शहर में पहिली मरतबा आए हैं ?"

"खाँ साहब कहाँ रहते हैं ?" उसकी बात को अनसुना करते हुए जहाँदारशाह ने पूछा।

"कौन खाँ साहब ?"

"जुल्फिकार खाँ।"

"जो वजीरेआजम थे ?"

"हाँ-हाँ, वही-वही, जरा बताना तो बेटा वह कहाँ रहते हैं ?" जहाँदारशाह की गरदन उत्सुकता वश और बाहर निकल आई थी।

"मुझे नहीं मालूम।" कहते हुए लड़के ने अपना रास्ता पकड़ा।

जहाँदारशाह ने पूर्ववत् बैठते हुए नैराश्यपूर्ण स्वर में कहा, "अब ?"

"किसी और से पूछ देखिए। कोई-न-कोई तो जानता ही होगा।" सहसा एक ओर को संकेत कर लालकुँअरि उछल पड़ी, "वह देखिए। उसी लड़के से एक बुड्ढा हमारी ओर देख-देखकर कुछ पूछ रहा है।" कुछ रुक, "और शायद हमारी तरफ ही वह आ भी रहा है।"

दोनों प्रतीक्षातुर हो उठे। वृद्ध पुरुष ने गाड़ी के निकट आ प्रश्न किया, "आप लोग किसकी तलाश में हैं ?"

"वजीरेआजम जुल्फिकार खाँ की।"

"आइए।" वह गाड़ी का मार्ग-निर्देशन करने लगा। गाड़ी दो-तीन मोड़ों से गुजरती हुई, मार्ग-निर्देशक के मुड़कर खड़े होते ही, एक साधारण से घर के आगे जाकर रुक गई। वृद्ध ने आगे बढ़ कर उनका स्वागत करते हुए कहा, "नीचे तशरीफ लाइए।"

"इसी में रहते हैं खाँ साहब ?" जहाँदारशाह ने जिज्ञासा व्यक्त की।

"जी हाँ, पुरानी कोठी उन्होंने छोड़ दी है। वह कोठी सैय्यद अब्दुल्ला खाँ के कब्जे में है।"

"क्या दुश्मन का दिल्ली पर भी कब्जा हो गया ?" जहाँदारशाह ने गाड़ी से नीचे कूद अनभिज्ञता व्यक्त की।

"जी हाँ, कई दिन पहिले ही उन्होंने दिल्ली पर कब्जा कर लिया था।"

"और खाँ साहब खामोश बने रहे। कहाँ हैं खाँ साहब ?"

"अन्दर। तशरीफ तो ले चलिये।"

जहाँदारशाह तेजी से मकान में घुसे। पहले ही कक्ष में खाँ साहब को गावतकिए के सहारे बैठे, हुक्का गुड़गुड़ाते देख वह अधिकार भरे स्वर में बोले, "दुश्मन का दिल्ली पर कब्जा हो गया और आप इतमीनान से बैठे हैं ?"

मदिरापूरित सुराही को देखते ही जहाँदारशाह खड़े न रह सके और सुराही से प्याले से को भरने लगे। आगन्तुक का अप्रत्याशित आचरण देख ख़ाँ साहब आश्चर्यचकित रह गये। हुक्के की नली मुँह से हटा खाँ साहब ने पूछा, "आपकी तारीफ ?"

रिक्त प्याले को भरती मदिरा की धार को देखते हुए जहाँदारशाह ने कहा, "वाकई, वक्त के साथ इनसान को बदलते देर नहीं लगती।" प्याला भर चुका था। गटागट पीते हुए जहाँदारशाह को तीक्ष्ण दृष्टि से देख खाँ साहब ने संदेह निवारण करना चाहा, "हुजूर, इस शक्ल में !"

"वक्त इन्सान से सब करा लेता है, खाँ साहब। यह तो बेगम की अक्ल की दाद दीजिए, वरना खुदा न खास्ता कहीं पहचान लिया जाता तो शायद···।" शेष स्वर मदिरा की घूँट में तिरोहित हो गया।

"बेगम साहबा को कहाँ छोड़ा, हुजूर ने ?"

"बाहर गाड़ी में हैं।"

खाँ साहब सुनते ही लपके बाहर की ओर। गाड़ी के पास जा वह बोले, "आप गाड़ी में क्यों बैठी हैं ? आइए, अन्दर तशरीफ ले चलिए।'

लालकुँवरि ने बिना कुछ कहे-सुने गाड़ी से नीचे उतर खाँ साहब द्वारा

निर्देशित मार्ग का अनुसरण किया। जहाँदारशाह कई प्याले खाली कर चुके थे। प्याला भरा तैयार था। लालकुँअरि की ओर बढ़ा उन्होंने कहा, "लो, बेगम, सारी थकान फौरन दूर हो जायेगी।"

"जी शुक्रिया। मुझे नहीं चाहिये।"

"बेगम! जायका बुरा नहीं। मजा आ जायेगा।"

"जी नहीं, आपको ही मुबारक हो। मुझे कतई दरकार···।" लालकुँअरि को कक्ष में छोड़ खाँ साहब बाहर चले गए थे। उनके आते ही लालकुँअरि ने अपना वाक्य अधूरा छोड़ दिया।

खाँ साहब ने स्थान ग्रहण किया। जहाँदारशाह ने पुनः प्याला भरा और स्वाद ले-लेकर पीने लगे। खाँ साहब ने सस्मित कहा, "हुजूर तो अकेले-ही-अकेले·········।"

"आप भी लीजिए।" बीच में ही जहाँदारशाह ने झूमते हुए कहा।

"मेरा मतलब है बेगम साहबा को भी शरीक होना चाहिये।"

"बेगम आज कुछ खफा नजर आ रही हैं।"

"जी नहीं, खफा नहीं, बल्कि गमगीन कहें तो बेहतर होगा। और होना भी चाहिये। मलकये हिन्दुस्तान थी हुजूर। वह शानो शौकत······।"

बीच में ही लालकुँअरि तपाक से बोल उठीं, "जी नहीं, गम होना चाहिए उन्हें जो अपनी हैसियत भूल बैठे थे। मैंने कभी अपनी वकत नहीं भूली।"

"यह आप क्या फरमा रही हैं!" साश्चर्य खाँ साहब ने सम्मान-भाव व्यक्त किया, "आप मेरी नजर में इस वक्त भी वही मलकए हिन्दोस्तान हैं और रहेंगी। अगर खिदमतगार से हुजूर की शान के खिलाफ कोई गुस्ताखी होगई हो तो माफी······।"

"इस इज्जत आफजाई के लिए बहुत-बहुत शुक्रिया खाँ साहब।" मदिरा के मद में जहाँदारशाह इतना अभिभूत हो चुके थे कि बैठे न रह सके। उन्हें दृष्टिगत कर सभय लालकुँअरि ने प्रश्न किया, "जुहरा की कुछ ख——है?"

"क्यों नहीं।"

"कहाँ हैं ?" लालकुँअरि का अधैर्य चरम सीमा पर था ।

"यहीं, बगल के कमरे में ।" उठते हुए खाँ साहब ने तत्परता व्यक्त की, "चलिए, मिल लीजिए चल कर ।"

लालकुँअरि यन्त्रवत् उठीं और खाँ साहब का अनुसरण करती हुई दो-तीन कमरे पार करती चली गईं । खाँ साहब ने एक कक्ष के द्वार की कुंडी खोल द्वार को धक्का देते हुए कहा, "इसमें हैं आपकी वहिन ।"

लालकुँअरि ने वाहर से ही अन्दर झाँका । अंधेरा इतना था कि उन्हे कुछ दिखाई न दिया । संदेह उनके मुखमण्डल पर उभर आया जिसे खाँ साहब ने लक्ष्य कर कहा, "जुहरा अन्दर हैं । जरा गौर से देखने की कोशिश कीजिये ।"

लालकुँअरि ने एक पग आगे वढ़ द्वार पर रखा और आगे झुककर देखने की चेष्टा की । इसके पूर्व कि वह मुड़ अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त कर सकें, खाँ साहब ने पीछे से ऐसा धक्का दिया कि लालकुँअरि अन्दर जा गिरीं । खाँ साहब ने फौरन दरवाजे वन्दकर वाहर से कुंडी चढ़ा दी । सब कुछ इतने अप्रत्याशित ढं से हुआ कि लालकुँअरि समझ ही न सकीं कि क्या हो गया ।

वह अंधेरे में फर्श पर पड़े मानव शरीर से जा टकराईं । टकराते ही वा शक्तिभर द्वार की ओर दौड़ चीखीं, "दरवाजा खोलो-दरवाजा खोलो ।" चिल्लाती हुई वह दरवाजा भड़भड़ाने लगीं ।

खाँ साहब सीधे जाकर जहाँदारशाह की वगल में वैठ गये थे । मदिरा ने उन्हें मदहोश वना दिया था । वह औंधे मुँह कालीन पर पड़े हुए थे । रह-रह कर खाँ साहब की दृष्टि वाहर जा रही थी । दरवाजा भड़भड़ाने की क्षीण ध्वनि निर न्तर उनके कानों में पड़ रही थी । प्रतीक्षित प्राणी के आने में विलम्ब अनुभ कर वह उठे और जाकर कुंडी खोल दी । तेजी से दरवाजा खोल लालकुँअ ने वाहर निकलने की चेष्टा की । खाँ साहब ने रास्ता रोक कहा, "जा कह रही हैं ? जुहरा से मिलीं ?"

"एहसान फरामोश, वदमाश, दगावाज ।" दाँत पीसते हुए लालकुँअ ने व्यवधान-मुक्त होने की चेष्टा की, "अभी.........।" खाँ साहब के हाथ

लालकुँअरि की गरदन को ऐसा दबोचा कि वह आगे न बोल सकी। सारा तनाव जाता रहा। "थोड़ा इन्तजार और कर।" कहते हुए खाँ साहब ने उसी हाथ का ऐसा धक्का दिया कि लालकुँअरि सामने की दीवार से जा टकराईं। खाँ साहब ने पुनः बाहर से द्वार की कुंडी चढ़ा दी और बाहर कक्ष में आ बैठे। कभी बाहर सड़क पर दृष्टि जाती तो कभी अचेत मुँह के बल लुढ़के पड़े जहाँदारशाह पर। समय बीत रहा था। उनकी व्यग्रता बढ़ती जा रही थी। उनसे बैठे न रहा गया। बाहर निकल वह टहलने लगे। सहसा समवेत अश्वों की पगध्वनि उनके कानों में पड़ी। पैर रुक गये। दृष्टि ध्वनि के उद्गम स्थान की ओर उठ गई। अश्वारोही तेजी से बढ़ते चले आ रहे थे। खाँ साहब ने एक बार मुड़ जहाँदारशाह पर दृष्टि डाली और चेहरे पर मुस्कान बिखेर स्वागत-भाव व्यक्त किया, "अहेनसीब, तशरीफ लाएँ सरकार।"

"आप तो मैदाने जंग से ऐसे गायब हुए कि फिर नजर ही नहीं आये।" घोड़े से नीचे उतरते हुए सैय्यद अब्दुल्ला ने खाँ साहब को दृष्टिगत किया।

"जी हाँ, दुश्मन का पीछा जो करना था। अगर जरा भी चूक जाता तो शिकार हुजूर की नजर कैसे करता।" कक्ष में प्रवेश कर जहाँदारशाह की ओर संकेत कर, "यह हैं हुजूर जहाँदारशाह।" औंधे मुँह पड़े जहाँदारशाह को पकड़ घुमाते हुए खाँ साहब ने आगे कहा, "बड़ी मुश्किल से कब्जे में कर पाया हूँ।"

अब्दुल्ला खाँ ने पीछे खड़े फर्रुखसियर को सम्बोधित कर कहा, "हुजूर, जरा आगे तशरीफ लाएँ। दुश्मन पर एक नजर डाल लें, फिर······।"

"कत्ल कर दो। देखना क्या है।" जहाँदारशाह को दृष्टिगत करते हुए फर्रुखसियर ने आश्चर्य व्यक्त किया, "मगर, इनकी तो दाढ़ी-मूँछ बड़ी खूबसूरत थी! कहीं·········।"

"जी नहीं। इन्होंने रास्ते में दाढ़ी-मूँछ इस वजह से मुड़ा डाली ताकि पहचाने न जा सकें।" खाँ साहब ने भ्रम-निवारण करने की चेष्टा की।

सैय्यद अब्दुल्ला को दृष्टिगत कर फर्रुखसियर ने सावधान किया, "आप

अच्छी तरह गौर कर लीजिये ।"

"जी, नाक-नक्शा तो वही हैं ।" झुककर जहाँदारशाह की उँगली से अंगूठी निकाल उस पर अंकित नाम को पढ़ते हुए सैय्यद अब्दुल्ला खाँ ने संदेह निवारण किया, "शक की कोई गुंजाइश नहीं रही, हुजूर ।"

"फिर, देर किस लिए, कत्ल कर दो । ओह ! यह अन्दर दरवाजा कौन पीट रहा है ?" लालकुँअरि द्वारा दरवाजा भड़भड़ाने की ध्वनि उस कक्ष तक आ पहुँची थी । फर्रुखसियर ने आदेश दिया, "खाँ साहब ! जरा देखिये तो इन्होंने अन्दर किसे बन्द कर रखा है ।"

"हुजूर को तकलीफ उठाने की क्या जरूरत । मैं अभी लाकर पेश करता हूँ ।" खाँ साहब कहते हुए मुड़े ।

"खबरदार जो जगह से हिले भी ।" सैय्यद हुसेन अली के कठोर स्वर ने सबका ध्यान आकर्षित किया ।

"ओह ! तो आप से आराम नहीं किया गया ?" सैय्यद हुसेन अली को फर्रुखसियर ने दृष्टिगत किया ।

"दुश्मन की मौजूदगी सुनकर लेटा रहा भी कैसे जा सकता है, हुजूर ।"

सैय्यद अब्दुल्ला खाँ लालकुँअरि को हाथ पकड़ कक्ष के अन्दर ले आये और बोले, "हुजूर, यह हैं बेगम लालकुँअरि । इन्होंने इन्हें कोठरी में बन्द कर रखा था ।"

"हुजूर की नजर करने के लिए ।" खाँ साहब तपाक से बोल दिये ।

"झूठ सरासर झूठ ।" लालकुँअरि बीच में ही तड़पीं, "इसने कोठरी में मुझे बन्दकर रखा था अपनी हवस पूरी करने के लिए । शुरू से ही इसकी नियत खराब रही है । इससे पूछिए, इसने क्या नहीं किया मुझे अपने कब्जे में करने के लिए, मगर इसे कामयाबी न मिली है न जीते जी मिलेगी । इस जालिम ने मेरी बहिन को तड़पा-तड़पा कर मार डाला है । उसकी लाश कोठरी में पड़ी है । इस कमीने······।" शेष वाक्य को लालकुँअरि की कटार ने पूरा किया ।

परन्तु, खाँ साहब सीने से लालकुँअरि को कटार निकालते समय सावधान

O

जहाँदारशाह की मदहोशी दूर हुई तो अपना सिर लालकुँअरि की गोद में
या । हड़बड़ा कर उठ बैठे । चारों ओर दृष्टि दौड़ाई । साश्चर्य प्रश्न किया,
हम कहाँ हैं बेगम ?"

"कैदखाने में ।"

"कैदखाने में ! किसने कैद किया हमें ?"

"फर्रुखसियर के हुक्म पर सैय्यद भाइयों ने ।"

"ओह ! तो दुश्मन ने पहचान लिया ?"

"दुश्मन तो शायद जिन्दगी भर न पहचान पाते, मगर खाँ साहब ने हम
लोगों के दिल्ली में होने की खबर दुश्मनों को खबर दी थी ।"

"किसी बड़े लालच में आ गया होगा ?"

"जी हाँ, इनाम में मौत हाथ लगी ।"

"खाँ साहब कत्ल कर दिये गए ?"

"और अब आपकी बारी है ।" कैदखाने में हाथ में मशाल पकड़े हुये कर्म-
चारी ने कहा, "उठिये, बाहर मैदान में चलिये ।"

"नहीं, ये कहीं नहीं जायेंगे । मैं इन्हें कहीं नहीं जाने दूँगी ।" लालकुँअरि
जहाँदारशाह के शरीर में लिपट गई थीं ।

"खाँ साहब का हुक्म है । आप दोनों फौरन बाहर चलिये ।"

"नहीं ।" लालकुँअरि शक्ति भर चीखीं, "हम बाहर नहीं जायेंगे ।"

"कैसे नहीं जायेंगे ।" दो बलिष्ठ कर्मचारियों के हाथों ने दोनों को पकड़
बाहर की ओर जाती हुई सीढ़ियों की ओर घसीटा ।

"नहीं, नहीं, मुझे इनसे अलग मत करो ।" बलिष्ठ भुजायें जितना ही
दोनों को पृथक करने की चेष्टा कर रही थीं लालकुँअरि उतनी ही जहाँदार-

"ओह हो ! रस्सी जल गई मगर ऐंठन अभी बाकी है।" सैय्यद अब्दुल्ला गरजे, "जुदा करो इसे।"

एक बलिष्ठ पंजे ने लालकुँअरि को गरदन पकड़ घसीटा, परन्तु साथ में जहाँदारशाह के शरीर को घसिटते देख दूसरे पंजे ने मरोड़ना शुरू कर दिया। लालकुँअरि की पकड़ ढीली हो गई। दोनों पंजों की सम्मिलित शक्ति ने लालकुँअरि को उठा फेंका।

जहाँदारशाह का शरीर पहिले से ही निःशक्त हो चुका था। सैय्यद अब्दुल्ला ने निकट जा चेहरे की ओर गौर से देखा। जूते की नोक से शरीर को छेड़ा, मगर वह हिल कर रह गया। उनकी न आँखें खुलीं न स्वर ही फूटा। पीछे हटते हुए सैय्यद अब्दुल्ला ने हुक्म दिया, "इसे खड़ा करो।"

दो कर्मचारियों ने जहाँदारशाह को पकड़ खड़ा किया।

"क्यों बिलावजह वक्त जाया कर रहे हैं ?" सैय्यद हुसेन ने सहसा उपस्थित हो अपनी तलवार से जहाँदारशाह के सिर को धड़ से अलग करते हुए कहा, "दरबार का वक्त हो गया है। चलिये।" सैय्यद अब्दुल्ला की दृष्टि जहाँदारशाह के लुढ़कते सिर का अनुसरण कर रही थी। सैय्यद हुसेन से न रहा गया। उसने सैय्यद अब्दुल्ला को अप्रभावित चित्रवत् अडोल खड़ा देख किंचित सास्चर्य पूछा, "क्या देख रहे हैं भाई जान ?"

"देख रहा हूँ, बेगम का मुस्कराता चेहरा। बादशाह के कटे सिर को पहलू में पा कैसा खिल उठा है।"

"चलिए, तशरीफ ले चलिए।" बड़े भाई को हाथ पकड़ प्रस्थान के लिये प्रेरित करते हुये सैय्यद हुसेन बोला, आप भी मुर्दों की मुस्कराहट को देखते हैं।"

"चलो भाई !" भाई के साथ कदम-से-कदम मिला दरबार की ओर अग्रसर होते हुए सैय्यद अब्दुल्ला ने दीर्घ निःस्वास छोड़ कहा, "जिन्दा चेहरे पर मुस्कराहट तो हर कहीं नजर आ सकती है, मगर मुर्दा चेहरे पर मुस्कराहट हिन्दुस्तानी औरत के ही चेहरे पर देखने को मिलेगी।"